[2020] 9 एस. सी. आर. 619

वी. कल्याणस्वामी (डी) एलआरएस द्वारा। & एएनआर।

वी.

एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस।

(2013 की सिविल अपील Nos.1021–1026)

17 जुलाई, 2020

[संजय किशन कौल और के. एम. जोसेफ, जे. जे.]

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956–एक 'आर. वी. एन.' के प्रभाव को लागू करने से पहले मृत्यु होने पर दो बेटे ('एल. एन.' और 'आर. एन.') और पाँच बेटियाँ थीं–'एल. एन.' के चार बेटे थे–'आर. एन.' की शादी 'आर. के.' से हुई थी, उन्हें कोई समस्या नहीं थी 'आर. एन.' का 01.06.1955 पर निधन हो गया – विभिन्न मुकदमों के माध्यम से पक्षों के बीच (पांच चरणों में) मुकदमेबाजी होती है–वर्तमान अपील दो दीवानी मुकदमों (पांचवां चरण/वर्तमान मुकदमेबाजी) से उत्पन्न होती है, एक 'एलएन' की शाखा (उत्तरदाताओं) द्वारा दायर की जाती है और दूसरी चार उत्तराधिकारियों ('एलएन' और 'आरएन' के अपीलकर्ता भतीजों) में से एक द्वारा एक वसीयत (डी. टी. डी.) के तहत दायर की जाती है। 10.05.55) कथित तौर पर 'आर. एन.' द्वारा निष्पादित–अपीलकर्ताओं ने 1932 में 'आर. एन.' और 'एल. एन.' के बीच मौखिक विभाजन का आरोप लगाते हुए संयुक्त हिंदू परिवार के अलगाव का दावा किया – कथित वसीयत को आर. के. के भतीजे को निष्पादक के रूप में नियुक्त करते हुए 'आर. एन.' द्वारा निष्पादित किया गया था–विभाजित स्थिति को कथित रूप से दिनांकित नोटिस के माध्यम से घोषित किया गया था। 10.05.1955 एक समाचार पत्र में, जिस पर जवाब दिनांकित था। 11.05.1955 'एलएन' द्वारा भेजा गया था–प्रत्यर्थियों ने अपीलकर्ताओं के मामले को अस्वीकार कर दिया––निचली अदालत ने प्रत्यर्थियों के मुकदमे का फैसला सुनाया–पहली अपीलीय अदालत ने अपीलकर्ताओं द्वारा दायर अपीलों को स्वीकार कर लिया–उच्च न्यायालय ने अन्य बातों के साथ पाया कि वसीयत पर भरोसा नहीं किया जा सकता है, क्योंकि यू / धारा 68,1872 अधिनियम को पूरा नहीं किया गया और निचली अदालत की डिक्री को बहाल किया गया–आयोजितः धारा 69,1872 अधिनियम धाराओं में सन्निहित आवश्यकता से विचलन प्रकट करता है। 68 – वर्तमान मामले में, विल यू/के प्रमाण की आवश्यकता धारा 69 को पूरा किया जाता है–उत्तरदाता यह साबित करने में विफल रहे कि वसीयत दूषित है–वसीयत वास्तव में 'आरएन' द्वारा निष्पादित की गई थी और यह उनकी अंतिम वसीयत थी, हालांकि, नोटिस dated.12.05 है। 1955 किस मामले में11.05.1955 पर भेजा जा रहा जवाब असंभव हो जाता है–यदि 11.05.1955 पर कोई जवाब नहीं भेजा जाता है, तो नोटिस के संचार को 'LN' से अलग करना संभव नहीं होगा–इस प्रकार, हालांकि एक प्रकाशन किया गया था, लेकिन इसका ज्ञान नहीं हो सकता हैउनके भाई की मृत्यु से पहले 'एलएन' को जिम्मेदार ठहराया गया था–इसलिए, चूंकि उनकी मृत्यु से पहले 'आरएन' द्वारा कोई विभाजन नहीं किया गया था, इसलिए वसीयत अमान्य होगी और अपीलार्थियों के लिए मार्ग का अंत होगा–इसके अलावा, ' आर. एन. की मृत्यु 1956 के अधिनियम के अधिनियमन से पहले आई. डी. 1 पर हुई थी। इस प्रकार, जब उनकी मृत्यु हुई, तो उन्होंने हिंदू संयुक्त परिवार में रुचि छोड़ी–जब उनकी संपत्ति के लिए उत्तराधिकार खोला गया, धारा 3 (2), 1937 अधिनियम लागू होगा–उनकी विधवा, 'आर. के.' के पक्ष में एक सीमित संपत्ति पैदा हुई, जो उनके राज्य में

विकसित हुई। धारा 14 (1), 1925 एक पूर्ण संपदा में अधिनियम–जब उसने 1958 के ओ. एस. No.71 में अपने अधिकारों को छोड़ दियाइन मामलों में वादी अनुसूचित संपत्ति सहित संपत्ति, इसने 'एलएन' की शाखा–सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908–के पक्ष में पूर्ण अधिकार प्रदान किए हैं। या ।।, आर. 2–संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम, 1882–एस। 19– साक्ष्य अधिनियम, 1872–ss. 3 , 33 , 40–43 , 68 , 69 , 71– हिंदू महिला संपत्ति का अधिकार अधिनियम, 1937। 2 , 3 , 5 – दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 एस। 145 – रोक/छूट/अधिग्रहण–भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 एस. एस. 57 , 59 , 63 , 119 , 211 – हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005 – धारा 6–पीछे से संबंधित सिद्धांत–उत्तरजीवी का सिद्धांत–हिंदू वसीयत अधिनियम, 1870–भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1865–परिवीक्षा और प्रशासन अधिनियम, 1881।

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908–Or.II Or.II, आर. 2 आर. 2 — — इसका दायरा –

चर्चा की।

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908–Or.II, rr. 2 , 3 — आयोजित किया गयाः चाहे वह चूक हो या जानबूझकर किसी दावे का त्याग या के तहत कार्रवाई का कारण। ।।, आर. 2 (2) या या के तहत राहत नहीं मांग रहा है। ।।, आर. 2 (3), उनके घातक परिणाम केवल तभी उत्पन्न होंगे जब कार्रवाई का कारण समान हो।

संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम, 1882–एस। 19 – एस के बीच समानता। 19 और एस। 119 , 1925 अधिनियम–चर्चा–भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 – s.119।

साक्ष्य अधिनियम, 1872। 33 – इसकी प्रयोज्यता–आयोजितः

एस की प्रयोज्यता। 33 यह निर्णय की प्रकृति पर निर्भर नहीं करता है जो पूर्ववर्ती कार्यवाही में दिया गया है।

साक्ष्य अधिनियम, 1872 – एस. 33–आयोजितः आवश्यकताएँ यू / एस. 33 को किसी मामले में भी पूरा किए जाने वाले अवयवों के साथ भ्रमित नहीं होना चाहिए। यू / एस. 11, सी. पी. सी.–सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 – एस. 11.

साक्ष्य अधिनियम, 1872–एस का पहला परंतुक। 33– ' हित में प्रतिनिधि '–की व्याख्या–आयोजितः' ब्याज में प्रतिनिधि को उदारता से समझा जाना चाहिए और उन मामलों तक सीमित नहीं होना चाहिए जहां संपत्ति की गोपनीयता और स्वामित्व का उत्तराधिकार है।

वी. कल्याणस्वामी (डी) बायल्स। & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस।

साक्ष्य अधिनियम, 1872 – एस. 68 बनाम–ए–बनाम एस. 69 — आयोजित किया गयाः एस 69 एस में सन्निहित आवश्यकता से एक विचलन प्रकट करता है। 68 – एक मामले मेंयू/को कवर किया गया एस. 69, एस. के लिए प्रासंगिक आवश्यकता। 68 कि दोनों गवाहों द्वारा प्रमाणन को कम से कम एक प्रमाणक गवाह की जांच करके साबित किया जाना है।

साक्ष्य अधिनियम, 1872। 69 के अनुरूप साक्ष्य

न्यायालय के कर्तव्य के तहत आवश्यकताएँ–आयोजितः एक मामले में, जहां यू/आवश्यकता के अनुरूप साक्ष्य प्रतीत होता है एस. 69, न्यायालय को साक्ष्य पर अपने दिमाग को लागू करने और यह पता लगाने के लिए कि क्या एस की आवश्यकताएं हैं, अपने बोझ से मुक्त नहीं किया जाता है। 69 साबित होते हैं–साक्ष्य की विश्वसनीयता या गवाहों की विश्वसनीयता अदालत के लिए अभी भी विचार करने का विषय है।

हिंदू कानून–इच्छा–बनाने की क्षमता–आयोजितः आवश्यकताएँ

ध्वनि निपटान क्षमता को भौतिक कुएँ के साथ भ्रमित नहीं किया जाना चाहिएहोना–एक व्यक्ति जिसे शारीरिक बीमारी है, इसलिए उसकी ध्वनि निपटान क्षमता को नहीं लूटा जा सकता है–तथ्य यह है कि एक व्यक्ति

शारीरिक बीमारी से पीड़ित है या वह अत्यधिक दर्द में है, यह उसे वसीयत बनाने की क्षमता से वंचित नहीं करेगा।

हिंदू कानून–वसीयत–साबित करने के लिए बोझ–आयोजितः साबित करने का बोझ

वसीयत और अदालत के विवेक को संतुष्ट करने के लिए कि कोई संदिग्ध परिस्थितियाँ नहीं हैं या यदि उन्हें समझाने के लिए कोई है तो वसीयत के प्रस्तावक पर यह साबित करने का बोझ है कि वसीयत जबरदस्ती, अनुचित प्रभाव या धोखाधड़ी से प्राप्त की गई है

एक ही।

हिंदू कानून–– संयुक्त हिंदू परिवार–विभाजन–का अर्थ

और इसके निहितार्थ–चर्चा–हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956–एस. एस. 6 और 30.

हिंदू कानून–संयुक्त परिवार की संपत्ति–परिवार का अधिकार

सह–भागीदार आयोजितः संयुक्त परिवार की संपत्ति के मामले मेंजब तक संपत्ति संयुक्त है, तब तक सह–भागीदार के अधिकार को ब्याज के रूप में वर्णित किया जा सकता है–जब तक परिवार संयुक्त रहता है, एक सह–भागीदार या यहां तक कि एक व्यक्ति जो साझा करने का हकदार है।

एक विभाजन अपने हिस्से के संदर्भ में अपने अधिकार का अनुमान या वर्णन नहीं कर सकता है–हिस्सा डूबा रहता है और संयुक्त परिवार में शीर्षक या स्थिति में विभाजन के साथ ही उभरता है–एक बार विभाजन होने पर सह–भागीदार का हिस्सा खुला रखा जाता है।

हिंदू कानून 1956 से पहले और बाद में वसीयत बनाने का हिंदू का अधिकार अधिनियम–चर्चा–हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 – एस. 30।हिंदू महिला संपत्ति का अधिकार अधिनियम, 1937 – एस. 3–आयोजित आवेदनः 1937 के अधिनियम की धारा 3 तब लागू होती है जब किसी हिंदू की निर्वसीयत मृत्यु हो जाती है।

हिंदू महिला संपत्ति का अधिकार अधिनियम, 1937–एस. एस. के बीच विरोधाभास। 3 (1) & (2) – चर्चा की।

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956–एस. 30 – आयोजित किया गयाः एस के स्पष्टीकरण के तहत। 30 , यह एक हिंदू के लिए हिंदू संयुक्त परिवार की संपत्ति में अपने हित को वसीयत करने के लिए भी खुला है।

हिंदू महिला संपत्ति का अधिकार अधिनियम, 1937–एक विधवा द्वारा विभाजन की मांग का प्रभाव, सिद्धांत के आधार पर सह–भागीदार के दावे पर

उत्तरजीविता–आयोजितः 1937 के अधिनियम के पारित होने के साथ, जिन क्षेत्रों में यह लागू हुआ, वास्तव में एक घुसपैठ की गई थी

सह–भागीदार को स्थापित करने का अधिकार–उत्तरजीविता के सिद्धांत के आधार पर एक मृत सह–भागीदार की संपत्ति पर दावा करना लेकिन अधिनियम ने उक्त अधिकार को समाप्त नहीं किया–उत्तरजीविता द्वारा दावा करने का अधिकार आया

निलंबित होने के लिए लेकिन बुझाने के लिए नहीं–विधवा, हालांकि एक सह–भागीदार नहीं थी, अधिकांश मामलों में एक सह–भागीदार की तरह थी–वह भी थी

विभाजन का दावा करने का अधिकार–उत्तरजीविता का सिद्धांत।

यदि नहीं, तो कोई सबूत न होने का अभ्यास और प्रक्रिया सिद्धांत

अभिवचन–जब लागू नहीं होता–चर्चा की जाती है।

साक्ष्य अधिनियम, 1872–ss. 40–42 – जब लागू नहीं होता है –

चर्चा की।

हिंदू कानून–संयुक्त हिंदू परिवार–से अलगाव–अन्य सह–भागीदारों को नोटिस–पूरा होने पर–आयोजितः समाचार पत्र में सूचना एक सह–भागीदार द्वारा विभाजन को प्रभावित करने के लिए एक सूचना के रूप में कार्य करती है–हालाँकि,केवल एक सूचना प्रकाशित करने के लिए, यह दिखाने के लिए सबूत के बिना कि इच्छित प्राप्तकर्ता इसके बारे में जागरूक हो गया है, नहीं हो सकता है

पर्याप्त–यह अनुमान नहीं लगाया जा सकता है कि किसी व्यक्ति ने एक विशेष समाचार पत्र पढ़ा है, और इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि उसने पढ़ा है।

नोटिस।

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 – धारा 14 (1), (2) की प्रयोज्यता –

चर्चा की। शब्द और अभिव्यक्तियाँ–'ब्याज', एक संयुक्त हिंदू पारिवारिक संपत्ति में एक सह–भागीदार का–जिसका अर्थ–चर्चा की गई।

वी. कल्याणस्वामी (डी) बायल्स। & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस।

याचिकाओं को खारिज करते हुए अदालत ने

पकड़नाः 1. ठहरने की संपत्ति

विवादग्रस्त संपत्ति, दोनों मुकदमों (1983 का ओ. एस. सं. 89 और 1985 का ओ. एस. सं. 649–पांचवें चरण/वर्तमान मुकदमेबाजी) में,

जिसने वर्तमान अपीलों को उत्पन्न किया), वही है। 10.05.1955 की वसीयत में सोलह मदें थीं। 1958 के ओ. एस. सं. 71 (मुकदमेबाजी का दूसरा चरण) में, आर. कृष्णम्मल को सात मदों के संबंध में पूर्ण अधिकार प्रदान किए गए थे। 1963 के ओ. एस. सं. 36 (मुकदमेबाजी का तीसरा चरण) में शामिल संपत्ति भी उन सात मदों से संबंधित है, जो 1958 के ओ. एस. सं. 71 में समझौते के आदेश में शामिल थे, जिसमें आर. कृष्णम्मल को पूर्ण अधिकार प्रदान किए गए थे। 1981 का ओ. एस. सं. 632 (मुकदमे का चौथा चरण) मद सं. से संबंधित है। 5 और 6,1963 के ओ. एस. संख्या 36 में। वर्तमान सूट में जो वस्तुएं निर्धारित की गई हैं, वे सात वस्तुओं के अलावा वसीयत दिनांक 1 द्वारा कवर की गई वस्तुएं हैं, जिनमें से चार को अलग कर दिया गया था और एक को अधिग्रहित किया गया था। जहाँ तक आर. कृष्णम्मल द्वारा दायर 1958 के ओ. एस. सं. 71 का संबंध है, चूंकि उनके पास विभाजन का दावा करने वाली एक वैकल्पिक राहत थी, इसलिए इसमें 93 मदों से युक्त समभागी की पूरी संपत्ति शामिल थी।

[पैरा 44] [693–बी–डी]

2.1 सी. पी. सी. के आदेश ॥ नियम 2 का प्रभाव

प्रत्यर्थियों द्वारा उठाया गया तर्क, अन्य बातों के साथ–साथ, यह है कि 1983 की ओ. एस. संख्या 89 को संविधान संहिता के आदेश ॥ नियम 2 द्वारा वर्जित किया गया है।

सिविल प्रक्रिया, 1908। यही कारण है कि जब चार अपीलार्थियों में से दो ने 1963 का ओ. एस. सं. 36 स्थापित किया है, तो उन्होंने उक्त वाद में केवल सात मद निर्धारित किए हैं। अपीलार्थियों के लिए यह खुला था कि वे उस राहत का दावा करें जिसका उन्होंने वर्तमान वाद में दावा किया है। 1958 के ओ. एस. सं. 71 में निर्धारित वस्तुओं के अलावा अन्य संपत्तियों की वस्तुओं के संबंध में मुकदमा नहीं किया गया है, वे हैंसी. पी. सी. के आदेश ॥ नियम 2 के तहत प्रतिबंधित। सी. पी. सी. का आदेश ॥ नियम 2 (2) एक ऐसी स्थिति को अभिनिर्धारित करता है जहां एक वादी अपने दावे के किसी भी हिस्से के संबंध में मुकदमा करने से चूक जाता है या जानबूझकर त्याग देता है।

उसके दावे का कोई भी हिस्सा। फिर, उसे इस प्रकार छोड़े गए या छोड़े गए हिस्से के संबंध में मुकदमा करने से रोक दिया जाता है। कार्रवाई के एक ही कारण से उत्पन्न एक से अधिक राहत का हकदार वादी दो काम कर

सकता है। वह एक ही मुकदमे में कार्रवाई के एक ही कारण से उत्पन्न होने वाली सभी राहतों के संबंध में मुकदमा कर सकता है। यदि वह [2020] 9 एस. सी. आर. के तहत अपने लिए खुली राहतों में से एक या अधिक के लिए मुकदमा करने से चूक जाता है तो वह ऐसा कर सकता है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

कार्रवाई के समान कारण, ऐसी सभी राहतों के लिए मुकदमा करने के लिए अदालत से अनुमति लें, और यदि अदालत ऐसी अनुमति देती है, तो वह एक नए मुकदमे में मुकदमा दायर कर सकता है, हालांकि पहले के मुकदमे में कार्रवाई के उसी कारण के आधार पर। हालाँकि, किसी भी राहत के संबंध में अदालत की अनुमति नहीं लेने का प्रभाव, जिसके लिए वह कार्रवाई के समान कारण पर मुकदमा करने के लिए खुला था, यह है कि उसे इस तरह से हटाए गए किसी भी अन्य राहत के लिए मुकदमा करने से रोक दिया गया है। फर्क यह है

दावा नए मुकदमे का विषय नहीं हो सकता है। हालांकि, जब कार्रवाई के एक ही कारण से उत्पन्न एक से अधिक राहत उपलब्ध हैं, तो पहले मुकदमे में मांगी गई राहत की तुलना में अधिक राहत की मांग करने पर रोक लगा दी जाएगी, सिवाय इसके कि अनुमति प्राप्त की गई हो। हालाँकि, अदालत द्वारा अनुमति की मंजूरी, उसके बाद का मुकदमा प्रस्तुत करें। उन राहतों की मांग करना, जो मूल रूप से नहीं मांगी गई थीं, लेकिन जिनके लिए अनुमति दी गई है, अनुज्ञेय है। इस प्रावधान का सिद्धांत वास्तव में सी. पी. सी. के आदेश ॥ नियम 2 (1) में दर्ज किया गया है जो यह है कि प्रत्येक वाद में पूरे दावे को शामिल किया जाना है जो इससे उत्पन्न होता है।

कार्रवाई का कारण और जो वादी करने का हकदार है। यह आगे घोषणा करता है कि यह वादी के लिए दावे के किसी भी हिस्से को छोड़ने के लिए खुला है। हालाँकि, इसके परिणाम सी. पी. सी. के आदेश ॥ नियम 2 (2) में घोषित किए गए हैं। इस मामले में, यह सच है कि जब 1963 का ओ. एस. संख्या 36 स्थापित किया गया था, तो आर. कृष्णम्मल द्वारा लाया गया पूर्व मुकदमा, अर्थात। , 1958 का ओ. एस. सं. 71, एक समझौता फरमान में समाप्त हुआ था। शिकायत का एक अवलोकन ही दिखाएगा कि

कि 1963 के ओ. एस. सं. 36 में वादियों ने 1958 के ओ. एस. सं. 71 में समझौते को स्वीकार किया है। उन्होंने दावा किया है कि

वाद के पैरा 7 में कहा गया है कि समझौते के तहत आर. कृष्णम्मल को उक्त वाद (वाद सं. 1963 का ओ. एस. सं. 36) वसीयत में निहित संपत्तियों और कुछ नकदी के बदले में। शेष संपत्तियों में शामिल हैंवसीयत में उत्तरदाताओं (लक्ष्मीया नायडू के पुत्रों) के पक्ष में उनके द्वारा त्याग दिया गया था। इसके बाद, यह माना जाता है कि प्रतिवादी दावा करते हैं, अर्थात, आर. कृष्णम्मल ने वाद में निर्धारित संपत्तियों पर पूर्ण अधिकार का दावा किया और जो कानून और तथ्यों दोनों में अस्थिर था। 1963 का ओ. एस. सं. 36 दायर किया गया था जिसमें यह घोषणा करने की मांग की गई थी कि आर. कृष्णम्मल का केवल एक जीवन वी. कल्याणस्वामी (डी) बी. एल. आर. एस. था।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस।

अलगाव की किसी भी शक्ति के बिना संपत्ति और अपीलार्थियों के पास वसीयत के तहत उक्त संपत्तियों में निहित शेष राशि है। 'कहा' शब्द स्पष्ट रूप से 1963 के ओएस No.36 में निर्धारित वस्तुओं को संदर्भित करता है। मुकदमा (1983 का ओ. एस. सं. 89) मूल रूप से 1977 में आर. कृष्णम्मल की मृत्यु और वसीयत के तहत अपीलार्थियों के पूर्ण अधिकारों के विकास पर आधारित है। वसीयत के तहत जीवन संपदा रखने वाले आर. कृष्णम्मल जीवित थे जब 1963 का ओ. एस. संख्या 36 दायर किया गया था। वसीयत के तहत पूर्ण अधिकार, अपीलार्थियों के पक्ष में, केवल जीवन संपदा धारक की मृत्यु के साथ शुरू हुआ। [पारस 46-50] [693-E-G; 694-C-H; 695-A, H; 696-A-C, H; 697 A-B]

कन्या उद्योग (अंग्रेज़ी) (पी) लिमिटेड v. वेंचरटेक सॉल्यूशंस (पी) लिमिटेड (2013) 1 एससीसी 625: [2012] 7 एससीआर 933-निर्भरपर।

2.2 भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 119 संबंधित है।

विरासत को सौंपने की तारीख के साथ, जब अन्य बातों के साथ, कब्जा स्थगित कर दिया जाता है। संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम, 1882 की धारा 19 निहित स्वार्थ से संबंधित है। निहित ब्याज इससे अलग है

आकस्मिक ब्याज। इन दोनों के परिणाम बहुत अलग हैं।

आर. कृष्णम्मल की मृत्यु एक निश्चित घटना होने के कारण, शेष लोगों का हित एक निहित स्वार्थ है। समानताटीपी अधिनियम की धारा 19 और भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 119 के बीच, और जो इस मामले के तथ्यों के लिए उपयुक्त है, निम्नानुसार हैः

अपीलार्थियों के पक्ष में विरासत वसीयतकर्ता की मृत्यु के समय से निहित हो गई। द.हालाँकि, संपत्ति का अधिकार और आनंद,

वसीयत के तहत, जीवन संपदा धारक का अधिकार क्षेत्र था,

अर्थात्। , आर. कृष्णम्मल जब तक वह जीवित थी। हालाँकि, वह

उसके अधिकार की सीमाओं को बढ़ाने का कोई अधिकार नहीं था

इच्छाशक्ति। इसमें कोई संदेह नहीं है कि इसका प्रभाव

अधिनियमन का पर्यवेक्षण। उसके एकतरफा कार्य से या यहाँ तक कि

तीसरे पक्ष के साथ मिलकर, यह खुला नहीं होगा

शेष के अधिकारों को पराजित करने के लिए जीवन संपदा धारक कोपुरुषों। भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 119 चित्रण (III) के तहत एक मामले को शामिल करने का महत्व यह है कि

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

वसीयतकर्ता की मृत्यु के समय से शेष पुरुषों के साथ निहित हो जाता है। दूसरे शब्दों में, वसीयत के तहत वसीयतदार की मृत्यु पर, जिसमें जीवन के क्षणिक अधिकार और आनंद के बाद पूर्ण अधिकार निहित हैसंपत्ति धारक, एक वंशानुगत अधिकार, जो वास्तव में वसीयतकर्ता की मृत्यु के समय उत्पन्न हुआ था, वसीयत के तहत पूर्ण मालिक के उत्तराधिकारियों को कानूनी अधिकार प्रदान करेगा जब

उसकी संपत्ति का उत्तराधिकार खुलता है, अगर वह एक वसीयत नहीं छोड़ना चाहता है। यद्यपि अधिकार संपत्ति में निहित है, वसीयत के तहत एक पूर्ण मालिक की निरपेक्षता के साथ संपत्ति का आनंद आर. कृष्णम्मल की मृत्यु के बाद ही अपीलार्थियों द्वारा किया जा सकता है। भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 119 के संदर्भ में 'पूर्ण अधिकार' शब्दों पर प्रकाश डालने के बाद, यह वह अधिकार है जिसे एक डिक्री का विषय बनाने की मांग की गई थी।

घोषणा और विभाजन। यह स्पष्ट है कि वर्ष 1963 में या आर. कृष्णम्मल की मृत्यु तक, जिन अधिकारों की मांग की गई थी

लागू किया गया, जैसा कि समझाया गया है, अपीलार्थियों के साथ नहीं किया गया।

वे शिकायत के विभाजन की मांग नहीं कर सकते थे

अनुसूचित संपत्तियाँ जबकि आर. कृष्णम्मल जीवित थे। [पारस 50–52] [697–C; 698–A; E–H; 699–A–C]

2.3 चाहे वह चूक हो या जानबूझकर त्याग

आदेश II नियम 2 (2) के तहत कार्रवाई के कारण से उत्पन्न होने वाला दावा या आदेश II नियम 2 (3) के तहत राहत नहीं मांगना,

परिणाम वे उत्पन्न करते हैं, केवल तभी उत्पन्न होंगे जब कार्रवाई का कारण है

एक ही। यद्यपि 1963 के ओ. एस. सं. 36 में वादी ओ. एस. सं. 36 में समझौते के बारे में घोषणा की मांग कर सकते थे।

71 1958 की वसीयत के तहत आने वाली सभी संपत्तियों के कारण, इस मामले के तथ्यों में, 1963 की ओ. एस. संख्या 36 और वर्तमान वाद (1983 की ओ. एस. संख्या 1989) में कार्रवाई का कारण स्पष्ट रूप से स्पष्ट है। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि 1963 के ओएस No.36 में कार्रवाई का कारण

उसमें निर्धारित वस्तुओं के अलगाव का खतरा था। 1963 का ओ. एस. सं. 36 भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 119 के तहत संपत्ति में निहित हित रखने वाले व्यक्तियों द्वारा एक सुरक्षात्मक कार्रवाई के रूप में अधिक था। कार्रवाई का कारण मांगी गई राहत के साथ भ्रमित नहीं होना है। इसका अधिक संबंध उस राहत के आधार से है जिसकी मांग की गई है। [पैरा 54] [699-एफ-एच; 700-ए-बी] वी. कल्याणस्वामी (डी) बायल्स।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस।

3.1 ओ. एस. नं. में पारित प्रस्तावों और निर्णयों का प्रभाव। 71 1958 का और ओ. एस. नं. 36 1963 का और ओ. एस. नं. 732 1981 का

एस्टोपेल, वेवर, एक्विजेंस

रंगास्वामी नायडू की निर्वसीयत मृत्यु हो गई। मामला सुनवाई के लिए नहीं गया। यह एक समझौते में समाप्त हुआ। समझौते का सार यह है कि वसीयत में उल्लिखित कुछ वस्तुओं में से सात वस्तुओं को आर. कृष्णम्मल के पूर्ण गुणों के रूप में मान्यता दी गई थी, हालांकि वसीयत के तहत, उन वस्तुओं पर उनका केवल सीमित अधिकार था। आर. कृष्णम्मल, अपने हिस्से के लिए, समझौते के तहतफरमान ने बाकी संपत्तियों के संबंध में अपने अधिकारों को छोड़ दिया। अपीलार्थी समझौते के पक्षकार नहीं थे। अपीलकर्ता आर. कृष्णम्मल के तहत अपने अधिकारों का पता नहीं लगा रहे थे। अपीलार्थियों को उनके चाचा वी. रंगास्वामी नायडू द्वारा निष्पादित वसीयत के तहत पूर्ण अधिकार दिया गया था। उनके पक्ष में वसीयत ने भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 119 के अर्थ के भीतर एक निहित स्वार्थ पैदा किया। आर. कृष्णम्मल भी नहीं कर सकते थे

एक बार जब उन्होंने वसीयत स्वीकार कर ली, तो लक्ष्मीया नायडू की शाखा के अधिकारों का विस्तार किया, क्योंकि वसीयत के तहत आने वाली संपत्तियों पर उनके पास केवल एक जीवन संपदा थी। अपीलार्थी उन संपत्तियों के लिए पूर्ण अधिकार प्रदान करने की मांग करने वाले समझौते में प्रवेश करने के लिए उसके कार्यों से भी बाध्य नहीं थे, जो उन संपत्तियों के विषय थे।

वसीयत, जिसके संबंध में, उन्हें आर. कृष्णम्मल की मृत्यु के बाद आनंद लेने का अधिकार था। 1963 का ओ. एस. सं. 36 चार अपीलार्थियों में से दो द्वारा दायर किया गया था, जो वसीयत के तहत वसीयतदार हैं। उन्होंने इस आशय की घोषणा करने की मांग की कि आर. कृष्णम्मल अपने अधिकार का विस्तार नहीं कर सकती हैं और वह अपने अधिकार को अलग नहीं कर सकती हैं।

गुण (बहुत ही सात वस्तुएँ, जो ओ. एस. एन. ओ. के समझौते के आदेश के तहत हैं। 71 1958 में, उनकी पूर्ण संपत्तियों के रूप में मान्यता दी गई थी)। यह सच है कि 1963 के ओ. एस. सं. 36 में वादियों ने वर्तमान वाद में वाद अनुसूची संपत्तियों को शामिल करने और उनके लिए एक घोषणा की मांग करने का विकल्प नहीं चुना। [2020] 9 एस. सी. आर. के दो पहलू हैं।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

मद सं। 5 और 6, उन्हीं वस्तुओं के संबंध में, 1963 के ओ. एस. संख्या 36 में समझौता डिक्री के तहत, आर. कृष्णम्मल को केवल अपने जीवनकाल के दौरान और अलगाव की शक्ति के बिना संपत्तियों का आनंद लेना था। दूसरे शब्दों में, वसीयत की तारीख की शर्तें10.05.1955 1963 के ओ. एस. सं. 36 में समझौता फरमान द्वारा प्रतिबिंबित और प्रबलित देखा जाता है। 1958 के ओ. एस. सं. 71 और 1963 के ओ. एस. सं. 36, दोनों में न्यायालय द्वारा कोई निर्णय नहीं दिया गया है। जहाँ तक इस बात का सवाल है कि वह क्या औचित्य है जिसके कारण पक्षकार समझौता डिक्री में प्रवेश करने के लिए प्रेरित हुए, यह पक्षकारों के उन कानूनी अधिकारों के बारे में निर्णायक नहीं हो सकता है जिन्हें इस न्यायालय को सुनाने के लिए कहा जाता है। लक्ष्मीया नायडू की शाखा की कार्रवाई, जो 1963 के ओ. एस. संख्या 36 में पक्षकारों के रूप में भी शामिल हुए थे, और जिनका प्रतिनिधित्व वकील ने किया था, अपीलार्थियों की ओर से वसीयत को साबित करने की आवश्यकता को कम नहीं कर सकती है। [पारस 55, 56] [700–डी–जी; 701–ए–एच; 702–ए सी]

3.2 1963 के ओ. एस. सं. 36 में समझौता फरमान में, वादी ने कहा है कि वे उनके खिलाफ कोई राहत नहीं मांग रहे हैं।

अन्य प्रतिवादी जिनमें लक्ष्मीया शाखा शामिल है।

वी. कल्याणस्वामी (डी) बायल्स से। & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस।

यह तर्क दिया जाता है कि लक्ष्मीया नायडू की शाखा का हित, जो 1958 के ओ. एस. संख्या 71 के समझौते के आदेश के तहत सुरक्षित था, जिसके तहत आर. कृष्णम्मल ने उन सात मदों के अलावा सभी संपत्तियों के संबंध में अपने अधिकारों को छोड़ दिया था, जिन पर उन्हें पूर्ण अधिकार दिए गए थे, को अबाधित और निर्विवाद छोड़ दिया गया था। इस आचरण पर यह इंगित करने के लिए जोर दिया जाता है कि यह सिद्धांतों के माध्यम से एक बाधा का गठन करेगा,

जिस पर आर. कृष्णम्मल ने 1958 के ओ. एस. सं. 71 में अपने सभी अधिकारों को छोड़ दिया था, उस शिकायत अनुसूची संपत्तियों के संबंध में 1983 का ओ. एस. सं. 89 स्थापित करने में अपीलार्थियों के लिए रोक और सहमति सहित। यहाँ तक कि याचिका में भी, 1963 के ओ. एस. संख्या 36 में, सात वस्तुओं के अलावा अन्य संपत्तियाँ, निश्चित रूप से मुकदमे की विषय वस्तु नहीं थीं। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि समझौते में जो कहा गया है वह यह है कि उक्त मुकदमे में अन्य प्रतिवादियों के खिलाफ कोई राहत का दावा नहीं किया गया है। यह भी उतना ही सच है कि 1963 के ओ. एस. संख्या 36 में डिक्री के पारित होने तक, लक्ष्मीया शाखा का हित प्रभावित नहीं हुआ था। यही कारण है कि मद संख्या के संबंध में। 5 और 1963 के ओ. एस. संख्या 36 में 6, जिस पर आर. कृष्णम्मल के अधिकार एक जीवन संपदा तक सीमित थे, जिसे समझौते के तहत वसीयत की शर्तों के अनुरूप लाने के लिए अलगाव के खिलाफ वर्जित था, लक्ष्मीया नायडू की शाखा के लिए कोई मायने नहीं रखता था। यही कारण है कि जहां तक उनका संबंध है, वे पहले से ही ओ. एस. सं. 71 में समझौते के आदेश से बंधे थे।1958 जिसके तहत आर. कृष्णम्मल को मद संख्या के संबंध में पूर्ण अधिकार प्रदान किए गए थे। 5 और

6, और उन्होंने अपने सभी अधिकार खो दिए थे। इसलिए, अपीलार्थियों और आर. कृष्णम्मल, जो उन संपत्तियों के लिए जिम्मेदार थे, के बीच की व्यवस्था उनके लिए कोई चिंता का विषय नहीं थी। वे बाकी संपत्तियों में रुचि रखते थे, जिन पर उन्हें 1958 के ओ. एस. नंबर 71 में समझौते के फरमान के तहत पूर्ण अधिकार दिए गए थे। परिणाम यह हुआ कि एक ओर वसीयत की शर्तों को 1963 के ओ. एस. संख्या 36 में समझौता डिक्री के तहत दोहराया गया। 5 और 6. 1958 के ओ. एस. सं. 71 के फरमान को अन्यथा अछूता छोड़ दिया गया था। 1963 के ओ. एस. सं. 36 में एक डिक्री का पारित होना एक ऐसा मामला है जो पूरी तरह से अपीलार्थियों और आर.

कृष्णम्मल। वास्तव में, लक्ष्मीया नायडू शाखा, हालांकि समझौते के पक्षकार थे, वास्तव में समझौते के पक्षकार नहीं थे।

फरमान। उन्होंने समझौते के फरमान के पक्षकारों के रूप में हस्ताक्षर नहीं किए हैं। इसलिए, न तो अपीलार्थी और न ही उत्तरदाता [2020] 9 एस. सी. आर.

1963 के ओ. एस. सं. 36 को दाखिल करने या उसमें समझौता डिक्री के पारित होने से कोई लाभ प्राप्त किया जा सकता है। द.

1963 के ओ. एस. सं. 36 में वादियों ने 1981 का ओ. एस. सं. 732 भी दायर किया है। लक्ष्मीया शाखा (उत्तरदाताओं के बीच)

अपील) पक्षकार नहीं थे। यह 1963 के ओ. एस. सं. 36 पर निर्धारित मद 5 और 6 के विभाजन के लिए एक सूट था। यह स्पष्ट है कि वे न्याय या रचनात्मक न्याय के सिद्धांतों पर भरोसा नहीं कर सकते हैं।

1981 के ओ. एस. No.732 पर आधारित न्यायिक विवरण, उक्त मुकदमे के पक्षकार नहीं हैं। हालाँकि, जिस बात का आग्रह किया जाना चाहिए, वह यह है कि वह आधार, जिसके आधार पर 1981 के ओ. एस. संख्या 732 में डिक्री थी।

पारित, वर्तमान मुकदमे में कार्रवाई के कारण के साथ पूरी तरह से असंगत है। दूसरे शब्दों में, यह बताया गया है कि 1981 के ओ. एस. सं. 732 में स्थापित मामला यह था कि आर. कृष्णम्मल का संपत्ति पर अधिकार था और यह वर्तमान मुकदमे में स्थापित मामले से असंगत था। यह तर्क दिया गया कि अपीलार्थियों को इस तरह की कार्रवाई करने से रोक दिया गया था। निम्नलिखित आचरण का भी अनुमान लगाया जा सकता है। 1981 के ओ. एस. सं. 732 में कार्रवाई के कारण में सुरक्षित अधिकारों (वस्तु सं. 5 और 1963 के ओ. एस. सं. 36 में 6) 1958 के ओ. एस. सं. 71 में जिसके तहत लक्ष्मीया शाखा ने आर. कृष्णम्मल के अधिकारों को स्वीकार किया।

जिन्होंने संपत्ति पर अपने अधिकारों को भी त्याग दिया जिसमें मामले में शिकायत अनुसूची आइटम शामिल थे। हालाँकि, यह न्यायालय अनुमानित आयामों से अनजान नहीं है, लेकिन यह नहीं सोचेगा कि

संपत्ति, यदि अन्यथा अपीलार्थियों के पक्ष में स्थापित की जाती है, तो यह खो जाएगी। इसे अभियोग अनुसूची संपत्तियों के अधिकारों के परित्याग के मामले के रूप में नहीं माना जा सकता है। जो उत्तरदाता 1981 के ओ. एस. सं. 732 के पक्षकार नहीं थे, वे विरोध का मामला स्थापित नहीं कर सकते। [पारस 57] [702–डी–एच; 703–ए–एच; 704–ए]

शा मूलचंद एंड कंपनी लिमिटेड (परिसमापन में), आधिकारिक प्राप्तकर्ता द्वारा, उच्च न्यायालय, मद्रास बनाम। जवाहर मिल्स लिमिटेड सलेम ए. आई. आर. 1953 एस. सी. 98: [1953] एस. सी. आर. 351; डॉ. करणसिंह बनाम। जम्मू–कश्मीर राज्य और दूसरा (2004) 5 एस. सी. सी. 698:

[2004] 1 पूरक। एस. सी. आर. 43–पर निर्भर।

4.1 दोनों की तारीख 10.05.1955 हो चुकी है

सिद्ध किया गया है

[साक्ष्य अधिनियम की धारा 33, 68 और 69]

विचाराधीन वसीयत एक विशेषाधिकार प्राप्त वसीयत है। एक विशेषाधिकार प्राप्त वसीयत बनाने का तरीका भारतीय वी. कल्याणस्वामी (डी) बीवाईएलआरएस की धारा 63 में प्रदान किया गया है।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस।

उत्तराधिकार अधिनियम। ताकि एक वैध वसीयत न केवल बनाई जा सके, यह आवश्यक है कि वसीयतकर्ता को दस्तावेज़ को निष्पादित करना चाहिए, बल्कि

जो भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 63 में प्रदान की गई है। भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 68 कानून द्वारा सत्यापित किए जाने के लिए आवश्यक दस्तावेज़ के निष्पादन के प्रमाण से संबंधित है। उसी के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि वसीयत के मामले में, एक दस्तावेज होने के नाते जिसे भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 63 द्वारा सत्यापित किया जाना आवश्यक है, यदि कोई सत्यापित करने वाला गवाह जीवित है और अदालत की प्रक्रिया के अधीन है और देने में सक्षम है।साक्ष्य, तब, वसीयत केवल तभी साबित की जा सकती है जब प्रमाणित करने वाले गवाहों में से एक को उसके निष्पादन को साबित करने के लिए बुलाया जाता है। यद्यपि भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 69 में उपयोग की गई अभिव्यक्ति 'यदि ऐसा कोई प्रमाणक गवाह नहीं पाया जा सकता है, तो अन्य बातों के साथ, इसकी निम्नलिखित व्याख्या है'। 'गवाह को प्रमाणित करने' से पहले 'इस तरह' शब्द का उद्देश्य साक्ष्य अधिनियम की धारा 68 में उल्लिखित प्रमाणित करने वाले गवाह को संदर्भित करना है। जहाँ तक 'पाया' अभिव्यक्ति का संबंध है, इसमें विभिन्न प्रकार की परिस्थितियाँ शामिल होंगी। इसमें किसी भी शारीरिक बीमारी के कारण साक्ष्य देने में असमर्थता का मामला शामिल होगा। यह निश्चित रूप से एक ऐसी स्थिति को शामिल करेगा जहां सत्यापित करने वाले गवाह मर चुके हैं। यदि प्रमाणित करने वाला गवाह पागल है, तो "पाया" शब्द इस तरह के साक्ष्य को समझने में सक्षम है।

ऐसी स्थिति जहाँ प्रमाणक गवाह, यद्यपि भौतिक रूप से उपलब्ध है, साक्ष्य अधिनियम की धारा 68 के तहत प्रमाणन को साबित करने का कार्य करने में असमर्थ है, और इसलिए, यह एक ऐसी स्थिति बन जाती है जहाँ वह नहीं पाया जाता है। इस मामले में, इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि दोनों प्रमाणक गवाह जीवित नहीं थे।

प्रासंगिक समय। [पारस 58, 59, 61 और 64] [704–बी–डी, ई, जी; 705 ए–बी; 706–सी]

4.2 उत्तरदाताओं का तर्क केवल ऐसा प्रतीत होता है

कि, सी. आर. पी. सी., 1898 (मुकदमेबाजी का पहला चरण) की धारा 145 के तहत कार्यवाही में, आर. कृष्णम्मल और उनके बीच झगड़ा था।

वसीयत के निष्पादक जिन्हें ए पार्टी नंबर के रूप में शैलीबद्ध किया गया था। 1 और 2 और बी पार्टी, अर्थात। , उत्तरदाताओं। वर्तमान अपीलार्थीपार्टियाँ नहीं थीं। इसलिए, कार्यवाही उसी के बीच नहीं थी। धारा 33 के पहले परंतुक का दूसरा अंग। , कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 33 के लागू होने के लिए, हित में उनके प्रतिनिधियों के बीच की कार्यवाही [2020] 9 एस. सी. आर. नहीं है।

पूरा हुआ। यह तर्क उठाया गया है कि अपीलार्थी, जो वसीयत के तहत शेष व्यक्ति हैं, उन्हें आर. कृष्णम्मल के हित में प्रतिनिधियों के रूप में नहीं माना जा सकता है। इसके अलावा धारा 145 की कार्यवाही की प्रकृति को इस रूप में उजागर किया गया है कि वह तीसरे परंतुक को आकर्षित नहीं करती है। दूसरे शब्दों में, 'ब्याज में प्रतिनिधि' शब्द को उदारता से समझा जाना चाहिए और उन मामलों तक सीमित नहीं होना चाहिए जहां संपत्ति की गोपनीयता और स्वामित्व का उत्तराधिकार है। इस मामले के तथ्यों में विकसित किए गए दो परीक्षणों का उत्तर देते हुए, उत्तरदाता यह तर्क नहीं दे सकते कि अपीलार्थियों का हित आर. कृष्णम्मल के हित के साथ असंगत था औरविशेष रूप से वसीयत का निष्पादक। यह निश्चित रूप से उनके हितों के विरोधी नहीं था। वसीयत वास्तव में आर. कृष्णम्मल और निष्पादक द्वारा स्थापित की गई थी। इसलिए, यह सुरक्षित रूप से निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि ए पक्ष के दोनों व्यक्तियों का हित, जो कब्जे का संरक्षण था, भी अपीलार्थियों के हित में था। यह सच हो सकता है कि अपीलार्थी अपना निष्कर्ष नहीं निकालते हैं –

आर. कृष्णम्मल के तहत शीर्षक। लेकिन साक्ष्य अधिनियम की धारा 33 के तहत आवश्यकताओं को सी. पी. सी. की धारा 11 के तहत एक मामले में भी पूरा किए जाने वाले तत्वों के साथ भ्रमित नहीं किया जाना चाहिए। यह तर्क नहीं दिया जा सकता है कि अपीलकर्ताओं का हित आर. कृष्णम्मल और निष्पादक के खिलाफ दंड प्रक्रिया संहिता की कार्यवाही की धारा 145 में पूछे गए प्रश्न का उत्तर देने में निहित है।

प्रत्यर्थियों में से, जो मजिस्ट्रेट के समक्ष पक्षकार थे। वसीयत का मामला स्पष्ट रूप से स्थापित किया गया था और साथ ही 10.5.1955 की घोषणा और आगे के घटनाक्रम भी। इसलिए, तीसरे परंतुक पर आधारित विवाद भी अपील नहीं करता है। इसके अलावा न केवल बी पक्ष से जिरह करने का अवसर था, बल्कि इसका लाभ भी उठाया गया। साक्ष्य अधिनियम की धारा 33 की प्रयोज्यता भी निर्णय की प्रकृति पर निर्भर नहीं करती है जो पहले

की कार्यवाही में दी गई है। इस आधार पर, जैसा कि प्रदर्शनी–बी7 (वसीयत में प्रमाणित करने वाले गवाहों में से एक का बयान, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के तहत कार्यवाही में) और यहां तक कि बी13 (निष्पादक द्वारा बयान) वास्तव में वह सबूत है जो मजिस्ट्रेट के सामने पिछली कार्यवाही में दिया गया था, जिसे निश्चित रूप से कानून द्वारा सबूत लेने के लिए अधिकृत किया गया था, जो इसमें निहित तथ्यों की सच्चाई को साबित करने के लिए प्रासंगिक है।

धारा 33। [पारस 66–68] [707–D–F; 708–G–H; 709–A–E]

4.3 साक्ष्य अधिनियम की धारा 69 साक्ष्य वी. कल्याणस्वामी (डी) बीवाईएलआरएस की धारा 68 में सन्निहित आवश्यकता से विचलन को प्रकट करती है।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस।

गवाह को प्रमाणित करना लेकिन यह धारा के तहत कानूनी आवश्यकता के रूप में यह कहने के समान नहीं है कि दोनों गवाहों द्वारा प्रमाणन साक्ष्य अधिनियम की धारा 69 के तहत आने वाले मामले में साबित किया जाना है। संक्षेप में, साक्ष्य अधिनियम की धारा 69 के तहत आने वाले मामले में, जहां तक प्रमाणक गवाह का संबंध है, जो साबित किया जाना है, वह यह है कि प्रमाणक गवाहों में से एक का प्रमाणन उसकी लिखावट में है। खंड की भाषा स्पष्ट और असंदिग्ध है। साक्ष्य अधिनियम की धारा 68, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा व्याख्या की गई है, दोनों के सत्यापन पर विचार करती हैगवाह साबित करने के लिए। लेकिन साक्ष्य अधिनियम की धारा 69 में इसकी आवश्यकता नहीं है। [पारस 70,71] [710–सी–एच; 711–ए]

4.4 धारा 69 वसीयत को उसमें दिए गए तरीके से साबित करने के बारे में बात करती है। 'सिद्ध' शब्द को साक्ष्य [2020] 9 एस. सी. आर. में परिभाषित किया गया है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

नायडू ने उन्हें सूचित किया कि उन्होंने एक वसीयत लिखी है और इसे सत्यापित किया जाना है। उस दिन वहाँ जाने पर भी उन्हें वास्तव में सत्यापित करने के लिए कहा गया था। वह हर पृष्ठ पर वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर करने के बारे में बात करता है। और साथ ही, उन्होंने हस्ताक्षर करने के बारे में बात की है। वह प्रमाणक गवाहों में से एक के हस्ताक्षर को उसकी लिखावट में साबित करने के संबंध में धारा 69 की आवश्यकता को स्थापित करता है। गवाही पर संदेह करने का कोई कारण नहीं है। जहाँ तक वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर का संबंध है, बी7 और बी13 के अलावा, निष्पादक ने वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर की बात की है। इसके अलावा, पीडब्लू1 (प्रतिवादी की ओर से गवाह) ने बयान दिया है कि वसीयत उसे दिखाई गई थी कि वह

यह स्वीकार किया कि प्रत्येक पृष्ठ पर पैतृक चाचा के हस्ताक्षर हैं। इस प्रकार, धारा 69 के तहत वसीयत के प्रमाण की आवश्यकता पूरी हो जाती है। [पारस 73,74] [712–बी–एच] 5. बी10 (वसीयत की प्रमाणित प्रति) को कानूनी रूप से दूसरे प्रमाण के रूप में स्वीकार करना?

अपीलार्थियों के मामले के अनुसार वसीयत का मूल निष्पादक के पास बना रहा जो वास्तव में रंगस्वामी नायडू की विधवा आर. कृष्णम्मल का भतीजा था। मूल वसीयत को उस समय प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया था जब निष्पादक का निधन हो गया था, इस आधार पर कि उसके बेटे के पास मूल वसीयत थी। उन्हें सी1 द्वारा वसीयत तैयार करने के लिए बुलाया गया था। उन्होंने यह बताते हुए जवाब दिया कि उनके पास मूल वसीयत नहीं थी। प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा पुष्टि किए गए विचारण न्यायालय का निष्कर्ष यह है कि

परिस्थितियों ने वसीयत को साबित करने के लिए द्वितीयक साक्ष्य को स्वीकार करना आवश्यक बना दिया। एक अलग दृष्टिकोण लेने का कोई कारण नहीं है और वी. कल्याणस्वामी (डी) बायल्स।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस।

उच्च न्यायालय द्वारा लिए गए दृष्टिकोण को कायम नहीं रखा जा सकता है। यह सच हो सकता है कि 1958 के ओ. एस. सं. 71 और 1963 के ओ. एस. सं. 36 की कार्यवाही में, वसीयत को पहले आर. कृष्णम्मल द्वारा पेश किया गया था और उसके बाद, 1963 के ओ. एस. सं. 36 में याचिकाकर्ता जो इस न्यायालय के समक्ष अपीलकर्ताओं में से हैं। लेकिन, यह मामला सुनवाई के लिए नहीं गया। वसीयत को साक्ष्य अधिनियम के तहत साबित किया जाना चाहिए, न कि 1963 के ओ. एस. संख्या 36 में डिक्री के आधार पर अपीलार्थियों द्वारा की गई रोक की याचिका के संदर्भ में, जो वसीयत पर आधारित है और उत्तरदाताओं ने पक्षकारों के रूप में भाग नहीं लिया है, यहां तक कि

समझौता लेकिन यह पता लगाने से बहुत दूर है कि तथ्य

मामले में वसीयत के संबंध में द्वितीयक साक्ष्य को स्वीकार करने की आवश्यकता नहीं थी। [पारस 76,77] [713–सी–जी]

6. इच्छाशक्तिः चाहे वह सामान्य ही क्यों न हो

रंगास्वामी नायडू का? फिर भी यह किसी भी क्षेत्र में प्रभावित होता है?

रंगस्वामी नायडू एक शिक्षित व्यक्ति थे। वे एक पूर्व एम. एल. सी. थे। वे एक संपन्न व्यक्ति थे। उसे कोई परेशानी नहीं है। वह था।

अपनी बहनों के प्रति स्नेहपूर्ण। उन्होंने अपनी बहनों की प्रत्येक शाखा का पक्ष लेने के लिए प्रत्येक शाखा में से एक बेटे को उत्तराधिकारी के रूप में चुना है, जिसमें संपत्ति निहित होनी थी। वास्तव में, उन्होंने यह भी प्रावधान किया है कि संपत्तियां परिवार में ही रहें और यदि कोई भी उत्तराधिकारी बेचना चाहता है, तो इसे अन्य उत्तराधिकारियों को दिया जाना चाहिए। जहाँ तक उनके स्वास्थ्य की बात है, यह अच्छी तरह से तय किया गया है कि ध्वनि निपटान क्षमता की आवश्यकता को शारीरिक कल्याण के साथ भ्रमित नहीं किया जाना चाहिए। एक व्यक्ति जिसके

पास एकइसलिए शारीरिक बीमारी को उसकी ध्वनि निपटाने की क्षमता से नहीं लूटा जा सकता है। यह तथ्य कि कोई व्यक्ति शारीरिक बीमारी से पीड़ित है या वह अत्यधिक दर्द में है, उसे इससे वंचित नहीं करेगा।

वसीयत बनाने की उसकी क्षमता। महत्वपूर्ण बात यह है कि क्या वह इस बात से अवगत है कि वह क्या कर रहा है और इच्छाशक्ति यह दर्शाती है कि उसने क्या निर्णय लेने के लिए चुना है। हालांकि यह सच हो सकता है कि वह गले के कैंसर से पीड़ित थे, लेकिन सबूतों में यह संकेत देने के लिए कुछ भी नहीं है कि वह वसीयत को पीछे छोड़ने के मामले में अपना मन बनाने में असमर्थ थे। यह तथ्य कि उन्हें एक नली द्वारा खिलाया जा रहा था, शायद ही उन्हें वसीयत बनाने की उनकी क्षमता से वंचित कर सकता था। वसीयत एक पंजीकृत वसीयत है। पंजीयक घर आए। प्रदर्शनी एक्स 1 से पता चलता है कि रंगास्वामी नायडू को जब अपने अंगूठे का निशान लगाने के लिए कहा गया, तो उन्होंने हस्ताक्षर करने पर जोर दिया। आचरण का यह क्रम [2020] 9 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

वसीयत निष्पादित करने की इच्छा के बारे में अवसर। पीडब्लू1 द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य से भी, वसीयत के संबंध में प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा लिए गए दृष्टिकोण को दूसरी अपील में हस्तक्षेप की गारंटी देने वाले विकृत दृष्टिकोण के रूप में वर्णित नहीं किया जा सकता है। अंत में, जबकि वसीयत को साबित करने और अदालत की अंतरात्मा को संतुष्ट करने का बोझ है कि कोई संदिग्ध परिस्थितियाँ नहीं हैं या यदि उन्हें समझाने के लिए कोई है, तो वसीयत के प्रस्तावक पर है, यह साबित करने का बोझ है कि वसीयत जबरदस्ती, अनुचित प्रभाव या धोखाधड़ी से प्राप्त की गई है, उन उत्तरदाताओं पर है जिन्होंने ऐसा ही आरोप लगाया है। पीडब्लू1 के साक्ष्य से पता चलेगा कि उत्तरदाता यह साबित करने में विफल रहे हैं किइस संबंध में इच्छा को दूषित किया जाता है। इसलिए, वसीयत वास्तव में आर. नायडू द्वारा निष्पादित की गई थी और यह उनकी अंतिम वसीयत थी। अपीलार्थियों का मामला वास्तव में इस बात पर आधारित है कि वर्ष 1932 में दोनों भाइयों के बीच मौखिक विभाजन हुआ था। तीन न्यायालयों ने इस तर्क में कोई योग्यता नहीं पाई है। वास्तव में, अपीलकर्ताओं ने भी इस न्यायालय के समक्ष इस तर्क को आगे नहीं बढ़ाया। दूसरी तरफ

दूसरी ओर, जो तर्क दबाया जाता है वह यह है कि जब इस तरह का उत्तराधिकार रंगास्वामी नायडू की संपत्ति के लिए 'आईडी1' पर खोला गया, तो रंगास्वामी नायडू ने 'आईडी2' दिनांकित बी1 नोटिस प्रकाशित किया, जिससे संयुक्त परिवार में व्यवधान पैदा हुआ और वी. कल्याणस्वामी (डी) बीवाईएलआरएस।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस।

इसलिए, रंगस्वामी नायडू की मृत्यु उनके भाई से अलग हो गई। इसके अलावा, अपीलार्थी का मामला बी10 पर आधारित है–निष्पादित किया जाएगा और रंगास्वामी नायडू द्वारा 10.05.1955 पर भी पंजीकृत किया गया है। [पारस 82,83 और 85] [716–डी–एच; 717–ए–ई; 718–ए–सी]

7. क्या कल्याणी (मृत) के बीच संघर्ष है?

एल. आर. एस. वी. नारायणन और अन्य [एयर 1980 एस. सी. 1173] और भागवंत पी. सुलेखे वी. दिगंबर गोपाल द्वारा

सुलाखे और अन्य [एयर 1986 एससी 791]

ट्रायल कोर्ट ने इस मामले में,

इस न्यायालय की इस आशय की टिप्पणियाँ कि जब तक संयुक्त परिवार की संपत्ति अस्तित्व में है और विभाजित नहीं है,

संयुक्त परिवार की संपत्ति नहीं बदलती है। इसने निष्कर्ष निकाला कि भले ही बी1 जारी करके विभाजन किया जाए, लेकिन वी. रंगास्वामी नायडू और उनके भाई के संयुक्त परिवार की संपत्तियां संयुक्त रहीं और इसे वी. रंगास्वामी नायडू द्वारा अपना नहीं माना जा सकता। पहली अपीलीय अदालत ने यह कहते हुए निर्णय को अलग किया कि यह तथ्यों में बदल गया। वास्तव में इस तरह का कोई संघर्ष नहीं है। हिंदू कानून में विभाजन के दो अर्थ हैं। एक अर्थ में, विभाजन पहला कदम है जो आम तौर पर एक उल्का और सीमा विभाजन में समाप्त होता है। एक सह-साझेदारी में, संयुक्त किरायेदारी होती है। एक हिंदू सह-अधिवेशन, जिसे पक्षों के बीच समझौते से नहीं बनाया जा सकता है, लेकिन कानून का निर्माण है, को बाधित किया जा सकता है या संयुक्त परिवार को समाप्त करने के लिए एक सह-भागीदार द्वारा एकतरफा घोषणा के कारण विभाजन हो सकता है। सह-भागीदार को विभाजन से पहले जो प्रस्तुत करना है, वह एक ब्याज है, जैसा कि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 6 और 30 दोनों में संदर्भित किया गया है। एक घोषणा किए जाने पर, अन्य सह-भागीदारों/सह-भागीदारों को उसी के संचार पर बिना किसी संदेह के अलग होने का इरादा व्यक्त करते हुए, उपरोक्त अर्थों में विभाजन अर्थात। जिसके कारण शीर्षक का विभाजन होता है। उपरोक्त अर्थों में विभाजन के दूरगामी परिणाम हैं। संयुक्त किरायेदारी, जिसमें उत्तरजीवी द्वारा विरासत के अधिकार की अवधारणा शामिल है, को पहले अर्थ में विभाजन के साथ समाप्त कर दिया जाता है। यदि ऐसा विभाजन करने के बाद सह-भागीदार की मृत्यु हो जाती है, क्योंकि उत्तरजीविता के सिद्धांत के आधार पर अधिकार समाप्त हो जाता है, तो इस तरह के विभाजन के बाद उसकी मृत्यु के परिणामस्वरूप उसके उत्तराधिकारी सफल होने के हकदार बन जाएंगे। इस मायने में, संयुक्त किरायेदारी को आम तौर पर किरायेदारी द्वारा प्रतिस्थापित किया जाएगा, लेकिन यह कहने के समान नहीं है कि [2020] 9 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

परिवार की संपत्तियाँ, जहाँ प्रथम अर्थ में विभाजन हुआ है, बिना किसी और चीज़ के विभाजित सदस्यों की अलग और अनन्य संपत्तियों में परिवर्तित हो जाएंगी।यह न्यायालय प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा लिए गए इस दृष्टिकोण को स्वीकार करने में असमर्थ है कि कानून के सिद्धांत, जो निर्णय के पैराग्राफ-14 (भगवंत पी. सुलाखे मामले में) में निहित हैं, केवल उक्त मामले के विशेष तथ्यों में समझे जाने योग्य हैं। विभाजन, एक व्यापक अर्थ में

और जैसा कि आम तौर पर समझा जाता है, शेयरों के अनुसार संपत्तियों का विभाजन है। [पारस 97,98 और 101] [733–सी–ई; 734–सी–जी; 734–ए]

एल. आर. द्वारा कल्याणी (मृत) वी. नारायणन और ओआरएस। [1980] 2 एससीआर 1130; एल. आर. के माध्यम से के. एस. पलानीसामी (मृत)। & ओआरएस।

वी. सामान्य रूप से हिंदू समुदाय और देश के नागरिक

गोबिचेट्टिपलायम और ओआरएस। (2017) 13 एससीसी 15: [2017] 4 एस. सी. आर. 511; भगवंत पी. सुलाखे बनाम। दिगंबर गोपाल सुलाखे एयर 1986 एससी 79: [1985] 3 पूरक। एससीआर 169 –

संदर्भित किया गया। 8.1 एक हिंदू एक इच्छा बना सकता है?

उनकी शक्ति पर क्या सीमाएँ थीं

एक इच्छा को समाप्त करें? हिंदू की धारा 30 को लागू करने से क्या कोई बदलाव हुए हैं?

हिंदू कानून के ग्रंथों में वसीयत की अवधारणा का संदर्भ नहीं है। हालांकि, समय के साथ, अदालतों नेएक हिंदू के लिए वसीयत बनाने की शक्तियों को मान्यता दी। यह मामला

मिताक्षर कानून से संबंधित है। इसके तहत, एक हिंदू हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम लागू होने से पहले ही अपनी अलग और स्व–अर्जित संपत्तियों को वसीयत कर सकता था। संयुक्त परिवार का सदस्य होने के नाते एक हिंदू भी अपनी अलग संपत्ति का मालिक हो सकता है जो विभिन्न प्रकार की होती है। इनमें बाधित विरासत शामिल है जो संपत्ति है।एक हिंदू को दूसरे व्यक्ति से विरासत में मिला जो अपने पिता, पिता के पिता या परदादा के अलावा अन्य व्यक्ति है, सरकारी अनुदान, अलग संपत्ति की आय, सीखने के माध्यम से सभी अधिग्रहण (हिंदू गेन्स ऑफ लर्निंग 1930 द्वारा घोषित)। जहाँ तक वसीयत बनाने को नियंत्रित करने वाले कानून का संबंध है, कोई विशेष कानून नहीं था जो इसे नियंत्रित करता हो। वर्ष 1865 में उत्तराधिकार अधिनियम पारित किया गया था।

यह वी. कल्याणस्वामी (डी) बीवाईएलआरएस पर लागू नहीं था। & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस।

उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 57 के माध्यम से भाग V। के प्रावधान किए गए हैं जो अधिनियम की अनुसूची III में निर्धारित किए गए हैं, जो 1 जनवरी 1927 को या उसके बाद किसी भी हिंदू, बौद्ध, सिख या जैन द्वारा बनाई गई सभी वसीयतों और संहिताओं पर लागू होते हैं, जिन पर वे प्रावधान पूर्ववर्ती खंडों के तहत लागू नहीं होते हैं। खंड (ए) और (बी) धारा 57। इस प्रकार यह है कि 1 जनवरी, 1927 के बाद एक वंचित के मामले में एक हिंदू द्वारा निष्पादित किया जाएगा, धारा 63 की आवश्यकता जिसमें कम से कम दो गवाहों द्वारा ऐसी वसीयत का सत्यापन शामिल है, अनिवार्य हो गई। इस प्रकार, एक हिंदू द्वारा वसीयत का निष्पादन भी 1 जनवरी, 1927 से विनियमित किया जाने लगा। हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम से पहले भी, एक हिंदू अपनी अलग और स्व–अर्जित संपत्ति की वसीयत कर सकता था। जहाँ तक संबंधित वसीयत को निष्पादित करने के उसके अधिकार का संबंध है

संयुक्त परिवार की संपत्ति में उसका हित जिसमें वह एक सह–भागीदार है, कानून इस तरह के अभ्यास की अनुमति नहीं देता था। मामले में

जब तक संपत्ति संयुक्त है, संयुक्त परिवार की संपत्ति के अधिकार को ब्याज के रूप में वर्णित किया जा सकता है। यह कहने का कारण तब तक है जब तक परिवार संयुक्त रहता है, एक सह–भागीदार या यहां तक कि एक व्यक्ति जो विभाजन होने पर साझा करने का हकदार है।

अपने हिस्से के संदर्भ में अपने अधिकार की भविष्यवाणी या वर्णन नहीं कर सकते। शेयर डूबा हुआ रहता है और केवल शीर्षक में विभाजन के साथ उभरता है। या संयुक्त परिवार में स्थिति। एक बार जब कोई विभाजन हो जाता है तो सह–भागीदार का हिस्सा खुला रखा जाता है। [अनुच्छेद 102,104 और 106] [735–सी–एच; 736–ए, डी–ई; 739–ए–बी]

एम. एन. आर्यमूर्ति बनाम एम. डी. सुब्बाराय सेट्टी (1972) 4 एस. सी. सी. 1; जलजा शेठी और अन्य। वी. लक्ष्मी शेठी और अन्य।

(1973) 2 एससीसी 773: [1974] 1 एससीआर 707; हरदेव राय बनाम। शकुंतला देवी और अन्य। (2008) 7 एससीसी 46: [2008] 7 एस. सी. आर. 1 संदर्भित है।

" हिंदू कानून पर मुल्ला का 23 वां संस्करण पृष्ठ 341–342 (पैरा

228) – संदर्भित किया गया।

[2020] 9 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

8.2 यहां तक कि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम से पहले के कानून के तहत भी वी. कल्याणस्वामी (डी) बायल्स थे।

चार स्थितियाँ हो सकती हैं। संयुक्त हिंदू परिवार के किसी सदस्य के संबंध में, जिसके पास अपनी अलग संपत्ति भी है, वह अपनी अलग संपत्ति की वसीयत कर सकता है। जहाँ तक संयुक्त परिवार की संपत्ति का संबंध है, तीन स्थितियाँ हो सकती हैं। पहली स्थिति यह है कि परिवार संयुक्त रहता है, जिस स्थिति में सह–भागीदार का हित होगा। जहाँ तक इस हित का संबंध है, यह हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम से पहले वसीयत का विषय नहीं हो सकता था। दूसरी स्थिति ऐसे मामले में है जहां शीर्षक में व्यवधान या स्थिति में विभाजन होता है। अर्थात् संयुक्त परिवार की स्थिति में विभाजन के अर्थ में एक विभाजन है जो एक सह–भागीदार द्वारा किसी भी स्पष्ट घोषणा के कारण होता है जिसे संप्रेषित किया जाता है। यह शब्दों से हो सकता है। यह आचरण द्वारा हो सकता है। इसमें विभाजन के लिए मुकदमा दायर करना भी शामिल हो सकता है। जब इस तरह का व्यवधान होता है तो संयुक्त परिवार की संपत्ति में सह–भागीदार का हिस्सा एक वास्तविकता बन जाता है और कानून और परिवार के सदस्यों के अधिकारों के अनुसार ठोस आकार लेता है। यह हो भी सकता है और नहीं भी।

अधिनियम, संयुक्त परिवार में व्यवधान प्राप्त करने के बाद, उत्तरजीविता के सिद्धांत पर आधारित अधिकार नष्ट हो जाता है। का हिस्सा सह-भागीदार निर्विवाद हो जाता है। अगर वह मर जाता है तो उसे इस हिस्से का भुगतान करना चाहिए।

उत्तरजीविता द्वारा अन्य सह-भागीदारों के पास नहीं बल्कि अपने उत्तराधिकारियों के पास जाएगा। यह सह-भागीदार के लिए अपनी इच्छाओं के अनुसार अपने हिस्से को वसीयत करने के अपने अधिकार का प्रयोग करने का द्वार भी खोलता है। यह शक्ति निश्चित रूप से धारा 30 से पहले भी एक हिंदू के लिए उपलब्ध थी।हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम। तीसरा परिदृश्य एक ऐसी स्थिति होगी जहां परिवार में स्वामित्व या स्थिति में विभाजन के बाद हिस्से के अनुसार परिवार की संपत्तियों का एक पूर्ण और सीमा विभाजन भी होता है। यह संदेह के लिए खुला नहीं हो सकता है कि वास्तव में, हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम से पहले भी ऐसी संपत्ति को वसीयत करने की हिंदू की क्षमता मौजूद थी। वास्तव में, एक सह-भागीदार द्वारा विभाजन पर हिस्से के रूप में प्राप्त संपत्ति, जिसके पास कोई पुरुष मुद्दा नहीं है, को उसकी अलग संपत्ति के रूप में माना जाता है। संबंध में

उसी पर उच्चारण करें। उत्तराधिकार में संशोधन के बाद एक सह-भागीदार की बेटियों को अपने स्वयं के अधिकार में सह-भागीदार के रूप में शामिल करते हुए अधिनियम 2005, यदि किसी हिंदू के पास महिला मुद्दा है तो विभाजन पर उसे आवंटित संपत्ति सह-भागीदार की प्रकृति का हिस्सा होगी।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस।

संपत्ति। हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के पारित होने के बाद भीविभाजन के अर्थ में एक सह-भागीदार द्वारा दूसरे को विभाजन लाने के लिए भेजी गई घोषणा के बिना, एक हिंदू के लिए संयुक्त परिवार में अपने हित की वसीयत करने का अधिकार है। दूसरे शब्दों में, "सह-पक्षीय संपत्ति में हित" शब्द का अनुमान केवल तभी लगाया जा सकता है जब एक संयुक्त परिवार हो जो स्थिति में कुशल हो, न कि जब परिवार में स्थिति में व्यवधान होने के अर्थ में विभाजन हो। [पैरा 107,

108] [739 - जी-एच; 740-ए-जी; 741-सी-डी]

" हिंदू कानून पर मुल्ला ": 23 तीसरा संस्करण [पैरा 228 खंड

(6) पृष्ठ 342 पर]-संदर्भित।9.1 हिंदू महिलाओं के अधिकार का प्रभाव

संपत्ति अधिनियम, 1937 (1937 का 18 वां)

1937 के अधिनियम की धारा 3 तब लागू होती है जब किसी हिंदू की मृत्यु हो जाती है।

आंतों में। 1937 के अधिनियम की धारा 3 (1) निर्वसीयत हिंदू द्वारा अलग संपत्ति छोड़ने के मामले से संबंधित है। ऐसी स्थिति में, यदि एक विधवा होती है, तो वह संपत्ति के संबंध में बेटे के समान हिस्से की हकदार हो जाती है। यह था।

उप–धारा (3) के अधीन किया गया है जो घोषणा करता है कि उस पर निहित ब्याज एक सीमित ब्याज होगा जिसे हिंदू के रूप में जाना जाता है।

धारा 3 (2) में "निर्वसीयत मृत्यु" शब्दों का उपयोग नहीं किया गया था, जबकि धारा 3 (1) में, विधानमंडल ने एक ऐसी स्थिति पर विचार किया, जहां एक हिंदू अपनी अलग संपत्ति को वसीयत कर सकता है और केवल एक आकस्मिकता के लिए प्रावधान करने का ध्यान रखा है जहां उसकी निर्वसीयत मृत्यु हो गई। इसमें कोई संदेह नहीं है कि धारा 2 ने घोषणा की कि धारा 3 तब लागू की जानी थी जब एक हिंदू की निर्वसीयत मृत्यु हो गई थी। जब धारा 3 (2) की बात आती है,मिताक्षर कानून द्वारा कवर किए गए एक मामले में, विधानमंडल ने उस समय प्रचलित कानून को ध्यान में रखते हुए माना है कि एक हिंदू हिंदू संयुक्त परिवार में अपने हित के संबंध में एक वसीयत को निष्पादित नहीं कर सकता है। यह वह अवधारणा है, जिसे [2020] 9 एस. सी. आर. लागू करके दूर कर दिया गया है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 30 का स्पष्टीकरण, जिसके तहत, एक हिंदू के लिए हिंदू संयुक्त परिवार की संपत्ति में अपना हित वसीयत करने के लिए भी खुला है। हिंदू महिला संपत्ति अधिकार अधिनियम की धारा 3 (2) पर वापस आते हुए, विधानमंडल

सलाह के साथ "हिंदू संयुक्त परिवार की संपत्ति में हित" शब्दों को चुना है, जो धारा 3 (1) के तहत प्रावधानों के विपरीत हो सकता है, जो हिंदू को अलग संपत्ति छोड़ने पर विचार करता है। इसलिए, धारा 3 (2) उस स्थिति पर विचार करती है, जब 1937 में अधिनियम के अधिनियमन के बाद हिंदू की मृत्यु हो जाती है (यह 14 अप्रैल, 1937 को लागू हुआ और इसे हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 की धारा 31 द्वारा निरस्त कर दिया गया था), ताकि विधवा धारा 3 (2) के तहत अपने पति के समान ब्याज प्राप्त कर सके, हिंदू को संयुक्त संपत्ति से अलग नहीं होने पर मरना चाहिए। यदि कोई हिंदू, जब उसकी मृत्यु हो जाती है, अलग हो जाता है और कम से कम, उसके कारण, कोई हिंदू संयुक्त परिवार नहीं है, तो यह ऐसा मामला नहीं होगा जहां धारा 3 (2) लागू होगी। एक हिंदू जब निर्वसीयत रूप से मर जाता है तो उसका हिंदू संयुक्त परिवार में हित हो सकता है और साथ ही उसकी अलग–अलग संपत्तियां भी हो सकती हैं। तब उसकी अलग संपत्तियों के लिए, धारा 3 (1) लागू होगी जबकि संयुक्त परिवार में उसके हित के संबंध में, धारा 3 (2) शासित होगी।

धारा 3 (1) लागू नहीं हो सकती क्योंकि विवादित संपत्तियां उसकी अलग संपत्तियां नहीं थीं। अतः कानून की स्थिति को निम्नानुसार निकाला जा सकता हैः

1937 के अधिनियम के पारित होने के साथ, जिन क्षेत्रों में यह लागू हुआ, वास्तव में एक सह–भागीदार के अधिकार पर एक घुसपैठ की गई थी

विभाजन। जब तक उन्होंने विभाजन का दावा नहीं किया और उनकी मृत्यु के बाद संपत्ति बरकरार रही, तब तक उत्तरजीवी द्वारा दावा करने का अधिकार जो ग्रहण कर लिया गया, पुनर्जीवित किया गया औरसह–भागीदार इस

आधार पर संपत्ति के हकदार बन जाएंगे कि उत्तराधिकार खोला गया जैसे कि सह–भागीदार की मृत्यु तब हुई जब विधवा की मृत्यु हो गई। दूसरी ओर, यदि विधवा विभाजन का दावा करती है, तो उसका हित एक परिभाषित ब्याज वी. कल्याणस्वामी (डी) बीवाईएलआरएस में बदल जाता है।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस।

और उत्तरजीवी द्वारा दावा करने का अधिकार, जो खड़ा था

निलंबित कर दिया गया, नष्ट कर दिया गया। संपत्ति तब पति के उत्तराधिकारियों को दी जाएगी। यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि, धारा 3 (2) के आधार पर, सह–विभाजन में कोई विच्छेद नहीं है।

दूसरे शब्दों में, 1937 के अधिनियम की धारा 3 (2) द्वारा कोई विभाजन नहीं लाया गया है।

न्यायालय को उन दो घटनाओं से भी अनजान नहीं होना चाहिए जो वी की संपत्ति के लिए उत्तराधिकार खोले जाने के बाद हुईं।01.06.1955 पर रंगास्वामी नायडू। धारा 14 वाला हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 पारित किया गया। दूसरा, विधवा आर. कृष्णम्मल ने 1958 का ओ. एस. सं. 71 दायर किया जिसमें एक वैकल्पिक प्रार्थना के रूप में, उन्होंने विभाजन की मांग की। एक द्वारा विभाजन की मांग के प्रभाव के बारे में निर्धारित किया गया सिद्धांत

विधवा जिनका 1937 के अधिनियम की धारा 3 (2) के तहत अधिकार निहित किया गया था, उन पर पहले ही ध्यान दिया जा चुका है। लेकिन, हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के रूप में अधिशासी विधान, यदि यह धारा 14 (1) के तहत पूर्ण अधिकार प्रदान करता है, तो यह कानून का विषय है कि आर. कृष्णम्मल के पास अधिकार की प्रकृति क्या थी, तब भी जब उन्होंने 1958 का ओ. एस. संख्या 71 स्थापित किया था। यह स्पष्ट है कि यदि धारा 3 (2) लागू होती है, तो जब संपत्ति के लिए आई. डी. 1 पर उत्तराधिकार खोला जाता है, तो लक्ष्मीया नायडू के पास केवल उत्तरजीविता का निलंबित अधिकार होगा। 1958 के ओएस 71 में समझौता आदेश है जिसके तहत आर. कृष्णम्मल ने लक्ष्मीया शाखा के पक्ष में वाद अनुसूची संपत्तियों में अपने सभी अधिकारों को छोड़ दिया है। [पैरा 108] [742–एफ–एच; 743–ए–एफ; 745–बी–एच; ए–बी]

शत्रुघ्न इस्सर बनाम। सबुजपरी और अन्य ए. आई. आर 1967 एस. सी.

272 : [1967] 1 एस. सी. आर. 7–पर निर्भर।

8.2 संयुक्त परिवार में 'हित' की इस अवधारणा की विधायी मान्यता हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 6 में पाई जाती है।

2005 के संशोधन अधिनियम 39 द्वारा इसके प्रतिस्थापन से पहले की धारा 6 में प्रावधान किया गया था कि मिताक्षर सह–आंशिक संपत्ति में हित रखने वाले अधिनियम के बाद पुरुष हिंदू की मृत्यु के मामले में, संपत्ति को परंतुक के अधीन उत्तरजीविता द्वारा हस्तांतरित किया जाना था। व्याख्या की शर्तें अधिक प्रासंगिक हैं। स्पष्टीकरण । की शर्तें जो कि संशोधन के बाद धारा 6 की उप–धारा (3) में स्पष्टीकरण के रूप में बरकरार रखी गई हैं। इसलिए, यह अवधारणा कि मिताक्षर में क्या सह–भागीदार है

यह दोहराया जाता है कि विभाजन से पहले परिवार का हित था।

[2020] 9 एस. सी. आर. के लिए

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

धारा 6 का उद्देश्य, हालांकि, सीमा निर्धारित करने के लिएउस ब्याज का वह हिस्सा माना जाता है जो उसे तब मिलेगा जब उसकी मृत्यु से ठीक पहले कोई काल्पनिक विभाजन होता। व्यवधान के अर्थ में विभाजन हालांकि उस हिस्से की सीमा को निर्धारित करता है जो अधिनियम की धारा 8 के तहत हस्तांतरित होगा। यह स्पष्ट किया जाता है कि इस न्यायालय को यह घोषित करने के रूप में नहीं माना जाना चाहिए कि धारा 6 के स्पष्टीकरण के तहत विचार किया गया काल्पनिक विभाजन सहसदस्य का निधन करने के लिए है।

जैसे कि। धारा (30) के स्पष्टीकरण में यह भी कहा गया है कि 'ब्याज' संपत्ति है जो एक हिंदू के बाद एक हिंदू कर सकता है।

उत्तराधिकार अधिनियम वसीयत। [पारस 109,110] [746–बी–जी]

10.1 वी. रंगास्वामी नायडू का शीर्षक क्या है, जिसे वह पास कर सकते थे?

केवल यह तथ्य कि संयुक्त परिवार में विभाजन किया गया है, इसका मतलब यह नहीं होगा कि वी. रंगास्वामी नायडू कानूनी रूप से वसीयत के तहत आने वाली वस्तुओं के अनन्य और पूर्ण स्वामित्व का दावा कर सकते हैं। मान लीजिए, शिकायत अनुसूची की संपत्तियाँ इसका हिस्सा हैं – वसीयत के लिए निर्धारित संपत्तियाँ। परिणाम यह होगा कि, लागू कानूनी सिद्धांतों के संदर्भ में, वी. रंगास्वामी नायडू के पास वसीयत के तहत निर्धारित संपत्तियों के रूप में अनन्य अधिकार नहीं था। इस मामले में, आर. कृष्णम्मल को उपलब्ध अधिकारों के आधार पर स्थापित वैकल्पिक मामले को ध्यान में रखते हुए, और यह देखते हुए कि वसीयत में से कुछ वस्तुओं को उसकी अपनी के रूप में मान्यता दी गई थी, और अन्य वस्तुओं जिसमें वे वस्तुएं शामिल थीं जो वसीयत में शामिल थीं और बड़ी संयुक्त पारिवारिक संपत्ति का भी हिस्सा थीं,

उन्होंने अपने अधिकारों को छोड़ दिया है, इसे वी. रंगास्वामी नायडू द्वारा एकतरफा आवंटन को चुनौती देने के लिए लक्ष्मीया शाखा द्वारा अवसर का उपयोग नहीं करने के रूप में वर्णित नहीं किया जा सकता है। [पारस 112,117] [747–सी–एफ; 749–जी–एच; 750–ए]10.2 स्वामित्व में विभाजन लाने के बाद लेकिन संपत्ति के विभाजन से पहले क्या स्थिति होगी

मीट्स एंड बाउंड्स? अंतराल के दौरान, के गुण

परिवार संयुक्त बना रहेगा।

जब तक कि कोई वी. कल्याणस्वामी (डी) बायल्स न हो। & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस।

विभाजन, क्या, गुण, हालांकि शेयरों का पता लगाया जाता है

संयुक्त परिवार में विभाजन के अर्थ में विभाजन द्वारा, कोई भी सह–भागीदार किसी विशिष्ट वस्तु की ओर इशारा नहीं कर सकता था और इसे अपना होने का दावा नहीं कर सकता था। किसी हिंदू द्वारा अलगाव के मामले में, भले ही वह संयुक्त संपत्ति से संबंधित किसी विशिष्ट संपत्ति का हो, उससे निपटा जाएगा।

यह एक अलग आधार पर खड़ा है और यह आपत्ति कि बिक्री एक सह–भागीदार द्वारा की जाती है जब संयुक्त परिवार मौजूद होता है, ठीक नहीं है। वसीयत के तहत उत्तराधिकारी, विशिष्ट संपत्तियों के संबंध में पारिवारिक स्थिति में विभाजन होने के बाद एक हिंदू द्वारा छोड़ दिया गयापरिवार से संबंधित, वास्तव में संपत्ति के अधिकार होंगे लेकिन वसीयतकर्ता के हिस्से तक सीमित होंगे। यह [2020] 9 एस. सी. आर. का सिद्धांत नहीं हो सकता है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

वी. रणगस्वामी नायडू में विभाजन होने पर अपने हिस्से की वसीयत करने पर प्रतिबंध। वसीयत में अंतरविवोस लेनदेन द्वारा अंतरिती के लिए उपलब्ध न्यायसंगत प्रतिफल, जिसमें उसने मूल्यवान प्रतिफल का भुगतान किया है, लागू नहीं हो सकता है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं हो सकता है कि अगर बाकी सब कुछ साबित हो जाता है, तो वसीयतदार को बिना उपचार के छोड़ दिया जाना चाहिए। इस न्यायालय ने विचार करने के विचार के साथ खिलवाड़ किया अपीलार्थियों के पक्ष में ठहरना, इसे इस मामले के विशेष तथ्यों में भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत शक्तियों का प्रयोग भी मानता है, जैसा कि इसमें शामिल असमानता के संबंध में पीडब्लू1 की गवाही द्वारा सामने लाया गया है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि मुक़दमे की रूपरेखा अपीलार्थियों के लिए शायद ही सहायक पाई जाती है। लेकिन इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि अपीलकर्ताओं को अन्यथा विफल होना चाहिए, इस न्यायालय को इस मामले को आगे बढ़ाने की आवश्यकता नहीं है। [अनुच्छेद 120,123,124 और 128] [751 बी; 754–डी–जी; 755–ए–सी; 756–डी–जी]

सिद्धेश्वर मुखर्जी बनाम। भुवनेश्वर प्रसाद नारायण सिंह और अन्य एआईआर 1953 एससी 487: [1954] एससीआर 177; एम. वी. एस. मणिकायला राव बनाम नरसिंहस्वामी और अन्य ए. आई. आर. 1966 एस. सी. 470: [1966] 1 एस. सी. आर. 628–संदर्भित।

अय्यगारी वेंकटरमैया और एक अन्य वी। अय्यगारी रामय्या (1902) आई. एल. आर. 25 मद्रास 690; वेंकटचेला पिल्लै बनाम। चिन्नाय्या मुदलियार (1870) 5 M.H.C.R. 166

– संदर्भित किया गया।

11. क्या यह एक विभाजन को प्रभावित करेगा?

वसीयत की शुरुआत वसीयतकर्ता के इस बयान से होती है कि उसके पास उन संपत्तियों का स्वामित्व था जिनमें एक में आवंटित संपत्तियां शामिल थीं।

विभाजन और जिसे उन्होंने स्वतंत्र खरीद द्वारा प्राप्त किया था। इसके बाद, वे कहते हैं कि वे 1932 से एक विभाजित सदस्य थे। इनमें से कोई भी बयान घोषणा का गठन नहीं करेगा। 1932 में विभाजन और स्वतंत्र खरीद का मामला तीन अदालतों द्वारा अपीलार्थियों के खिलाफ पाया गया है। इसके बाद, केवल यह बयान है कि उन्होंने किसी भी अनिश्चितता से बचने के लिए अपनी विभाजित स्थिति 'आज' की खुली घोषणा की है। इस न्यायालय के लिए इस कथन को विभाजन का कारण बनने के लिए कानून में पर्याप्त घोषणा के रूप में स्वीकार करना मुश्किल हो सकता है। हालांकि एक पल के लिए भी यह एक वी. कल्याणस्वामी (डी) बी. एल. आर. एस. के रूप में काम करेगा।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस।

घोषणा, अडागाडा में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून

और यह कि यह 10.05.1955 से प्रभावी होगा, यह न्यायालय निहित अधिकारों के निर्माण से अनजान नहीं हो सकता है। यदि मामले को 1937 के अधिनियम की धारा 3 (2) के तहत नियंत्रित किया जाना है, जैसा कि पहले ही उल्लेख किया गया है, तो यह एक ऐसा मामला होना चाहिए जहां वी. रंगास्वामी नायडू की मृत्यु हो गई थी।आंतों में। इसलिए, यदि यह न्यायालय इस आधार पर आगे बढ़ता है कि अपीलार्थियों के मामले को स्वीकार करने के लिए वास्तव में एक वसीयत है, तो धारा 3 (2) लागू नहीं होगी। यदि धारा 3 (2) लागू नहीं होती है, तो उत्तरजीविता द्वारा संपत्ति का दावा उत्पन्न होगा, जो अपीलार्थी के मामले के लिए घातक होगा। इस मामले के तथ्यों में, उत्तराधिकार के खुलने के बाद ही वसीयत के माध्यम से विभाजन के बारे में सूचित किया जा रहा है, और यहां तक कि वसीयत किए जाने पर 10.5.1955 से विभाजन को प्रभावी होने की अनुमति देने के कारण, लक्ष्मीया नायडू का उत्तरजीविता द्वारा दावा करने का निहित अधिकार उत्पन्न होगा।

01.06.1955 पर अस्तित्व जब उनके भाई की मृत्यु हो गई और

वसीयत पर आधारित बाद का संचार निहित अधिकार को नहीं छीन सकता है जो इस आधार पर उपलब्ध कार्यवाही बन गयावाद अनुसूची संपत्तियों से संबंधित वसीयत [पैरा 130] [758 डी–एच; 759 ए–सी]

अड्डागाडा राघवम्मा और ओआरएस। वी. अड्डागाडा चेनचम्मा और ओआरएस। ए. आई. आर. 1964 एस. सी. 136 [1964] 2 एस. सी. आर. 933 पर निर्भर था।

12. संयुक्त परिवार में विभाजन का कारण बनने वाले बी1 के बारे में बात करने में क्या कमी है? इस मामले के तथ्यों में, यह सिद्धांत कि यदि कोई अभिवचन नहीं है, तो किसी भी प्रमाण की मात्रा पर विचार नहीं किया जा सकता है, उपयुक्त है।

संयुक्त परिवार की स्थिति कैसे बाधित हुई या क्यास्थिति में कोई विभाजन नहीं था, यह अनिवार्य रूप से साक्ष्य का विषय है। केवल यह तथ्य कि यह विशेष रूप से अनुमानित नहीं है, कि किस तरीके से विभाजन लाया गया था, के लिए घातक नहीं है

अपीलार्थी का मामला, यदि यह अन्यथा स्थापित है। [पैरा 137] [761–ई. एफ] [2020] 9 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

13. बी1 आयतन की सामग्री

विभाजन को प्रभावित करने की घोषणा यह कि कोई मौखिक विभाजन नहीं था, अनुपलब्ध पाया गया। इसलिए, बी1 में उसी के बारे में दिए गए कथन को गलत होने के कारण नजरअंदाज करने की आवश्यकता है, लेकिन अंतिम वाक्य सक्षम है

एक स्टैंड अलोन स्टेटमेंट के रूप में खड़े होना। 'भी' शब्द का उपयोग जानबूझकर किया गया प्रतीत होता है। यह भी संभव होगा कि वसीयत बनाने और सूचना का मसौदा तैयार करने दोनों से पहले कानूनी सलाह थी। बी10–वसीयत में नोटिस दिए जाने के बारे में बयान शामिल है। जब तक सह–भागीदार अलग होना चाहता है, उसे अलग होने का कोई कारण देने की आवश्यकता नहीं है। [पारस 138,139] [761–जी. एच.; 762–डी]

14. वहाँ कुछ भी संचार था

अन्य सह–भागीदार

समाचार पत्र में नोटिस को देखते हुए, लक्ष्मीया नायडू ने विभाजन पर विवाद करते हुए दिनांक 11.05.1955 जारी करके जवाब दिया। इसके अलावा, अपीलार्थी के मामले को वी. रंगास्वामी नायडू द्वारा 16.05.1955 पर लक्ष्मीया नायडू को बी1 की सामग्री को दोहराते हुए संचार के इर्द–गिर्द बनाया जाना चाहिए। बी1 की सामग्री, अंतिम भाग को ध्यान में रखते हुए, संयुक्त परिवार की स्थिति में विभाजन पैदा करने के लिए पर्याप्त होगी। सवाल यह है कि क्या इसे सूचित किया गया था, जैसा कि कानून में आवश्यक है। एक ओर, अपीलार्थियों द्वारा दिनांकित 11.05.1955 और 16.05.1955 का संचार प्रस्तुत नहीं किया जाता है। यह कमी अपीलार्थी द्वारा 'ए' पक्ष ('ए' पक्ष सं.) द्वारा स्थापित मामले पर भरोसा करके उस पर काबू पाने की कोशिश की जाती है। 1 आर. कृष्णम्मल, रंगस्वामी नायडू की विधवा और 'ए' पार्टी नं. 2 आर था।

कृष्णम्मल के भतीजे और वसीयत के निष्पादक) जैसा कि बी 2 में बताया गया है, मजिस्ट्रेट द्वारा सीआरपीसी की धारा 145 के तहत पारित आदेश। बी2–आदेश के संबंध में, Cr.PC की धारा 145 के तहत पारित एक तर्क उठाया जाता है कि यह साक्ष्य अधिनियम की धारा 40 से 43 के तहत प्रासंगिक नहीं है। यह सवाल नीचे दी गई अदालतों में नहीं उठाया गया है। यह सच हो सकता है कि धारा 40 पिछले निर्णयों से संबंधित है जो नए वी. कल्याणस्वामी (डी) बीवाईएलआरएस के लिए एक बाधा का गठन करेंगे।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस।

इसलिए, कार्यवाही और बी2 साक्ष्य अधिनियम की धारा 40 के तहत प्रासंगिक नहीं है। धारा 41 निर्णयों से भी संबंधित है।

प्रोबेट, वैवाहिक, नौसेना या दिवाला क्षेत्राधिकार में प्रस्तुत किया गया, जिसका प्रभाव साक्ष्य अधिनियम की धारा 41 में उल्लिखित है। यह स्पष्ट रूप से मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होता है। धारा 42 निर्णयों के प्रासंगिक होने से संबंधित है यदि वे जांच के लिए प्रासंगिक सार्वजनिक प्रकृति के मामलों से संबंधित हैं। यह भी नहीं है

प्रासंगिक। सुनवाई के दौरान, प्रतिवादियों द्वारा इस न्यायालय के समक्ष यह दबाव डाला गया कि बी1 दिनांकित है और यदि यह 12.05.1955 है, तो अपीलार्थी के मामले की इमारत जमीन पर गिर जाएगी क्योंकि तब इस स्थिति का समर्थन करना असंभव होगा कि

12.05.1955 पर प्रकाशित नोटिस के जवाब में, जवाब पिछली तारीख यानी 11.05.1955 पर लक्ष्मीया नायडू द्वारा दिया जा सकता है। यही वह जगह है जहाँ 11.05.1955 और 16.05.1955 दिनांकित पत्रों को प्रस्तुत न करने पर जोर दिया जाता है। इस न्यायालय ने अभिलेखों को यह सत्यापित करने के लिए कहा कि क्या बी1 दिनांकित 12.05.1955 दस्तावेजों को चिह्नित करना एक गलती थी या यह जमीनी वास्तविकता को दर्शाता है। बी1 से यह पाया जाता है कि समाचार पत्र में सूचना प्रकाशित की जाती है जो 12.05.1955 दिनांकित है। इसलिए, दस्तावेज़ बी1 को दिनांकित 12.05.1955 के रूप में चिह्नित करना कोई गलती नहीं है। वसीयत में उक्त तिथि पर सूचना के प्रकाशन का संदर्भ है। वसीयत की तारीख 10.05.1955 है। यह बिल्कुल स्पष्ट प्रतीत होता है कि वसीयत 10.05.1955 पर नहीं लिखी गई होगी। इसमें कोई संदेह नहीं है कि इसे 10.05.1955 पर निष्पादित किया जाता है। वसीयत के विवरण और अन्य परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, यह न्यायालय यह मानने के लिए इच्छुक है कि इसका मसौदा पहले तैयार किया गया होगा। इसी तरह, एक समाचार पत्र में एक मामले के प्रकाशन की व्यवस्था पहले की गई होगी। लेकिन जो महत्वपूर्ण है, वह केवल एक सह-भागीदार के रूप में वसीयतकर्ता का इरादा नहीं है कि वह अपने मन को दूसरे सह-भागीदार के सामने घोषित करे

अलग करें, और यहाँ तक कि इसे वसीयत में भी निर्धारित करें, और एक कदम आगे बढ़कर इसे प्रकाशित करें, लेकिन यह आगे साबित किया जाना चाहिए कि, वसीयतकर्ता के निधन से पहले, बी1 में निहित मामले को दूसरे सह-भागीदार को पता था, अर्थात। , लक्ष्मीया नायडू। यह आवश्यकता अपरिहार्य है। ऐसा कोई मामला नहीं है किनोटिस दो दिनों में प्रकाशित किया गया था। , 10.05.1955 और 12.05.1955 पर। न्यायालय के समक्ष जो साक्ष्य प्रस्तुत किया जाता है वह बी1 है, जो दिनांकित 12.05.1955 है। यदि ऐसा है, तो पी. डब्ल्यू. 1 के बयान से संभावित रूप से निष्कर्ष निकाले जाने के बावजूद, यह इस न्यायालय के समक्ष साक्ष्य के साथ टकराव में लाएगा।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

न्यायालय बी1 के आधार पर आगे बढ़ता है, जो दिनांकित 12.05.1955 है, फिर, जवाब 11.05.1955 पर भेजा जाना असंभव हो जाता है। यदि 11.05.1955 पर कोई जवाब नहीं भेजा जाता है, तो नोटिस के संचार को अलग करने के लिए लक्ष्मीया नायडू को जिम्मेदार ठहराना संभव नहीं होगा। ऐसी परिस्थितियों में, यह न्यायालय उच्च न्यायालय से सहमत होगा कि बी1 से संबंधित मामला, हालांकि एक प्रकाशन किया गया है, इसके बारे में जानकारी के लिए उनके भाई की मृत्यु से पहले लक्ष्मीया नायडू को जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता है। यह एक पल के लिए भी नहीं माना जा रहा है कि समाचार पत्र में एक नोटिस विभाजन को प्रभावित करने के लिए एक सह–भागीदार द्वारा नोटिस के रूप में काम नहीं कर सकता है। हालांकि, केवल

एक सूचना को प्रकाशित करने के लिए, यह दिखाने के लिए सबूत के बिना कि इच्छित प्राप्तकर्ता इसके बारे में जागरूक हो गया है, नहीं हो सकता है

पर्याप्त है। यद्यपि एक समाचार पत्र में एक सूचना आम जनता के लिए सूचना के रूप में काम करती है, लेकिन संबंधित सह–भागीदार को सूचना देने की आवश्यकता होती है। यह अनुमान नहीं लगाया जा सकता है कि किसी व्यक्ति ने एक विशेष समाचार पत्र पढ़ा है, और इससे भी अधिक

महत्वपूर्ण बात यह है कि उसने नोटिस पढ़ लिया है। अपीलार्थियों का मामला भी ऐसा प्रतीत होता है कि दिनांकित नोटिस को देखने पर

10.05.1955 , 11.05.1955 दिनांकित संचार लक्ष्मीया नायडू द्वारा भेजा गया था, जिसे इस न्यायालय ने अस्वीकार्य पाया,

B1 का दिनांक 12.05.1955 होने के संबंध में। दिनांकित 11.05.1955 उत्तर का महत्व यह था कि यह लक्ष्मीया नायडू द्वारा दिए गए नोटिस के बारे में जानकारी स्थापित करेगा। इस बात का कोई सबूत नहीं है कि 12.05.1955 दिनांकित समाचार पत्र में प्रकाशित नोटिस के बारे में लक्ष्मीया नायडू को उनकी मृत्यु से पहले पता था। चूंकि उपरोक्त चर्चा को देखते हुए वी. रंगास्वामी नायडू द्वारा उनकी मृत्यु से पहले कोई विभाजन नहीं लाया गया था, इसलिए वसीयत अमान्य होगी और इसलिए यह अपीलार्थियों के लिए मार्ग का अंत होगा। यह याद रखा जाना चाहिए कि रंगास्वामी नायडू का निधन हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के अधिनियमन से पहले 1.6.1955 पर हुआ था। इस प्रकार, जब उनकी मृत्यु हो गई, तो उन्होंने हिंदू संयुक्त परिवार में रुचि छोड़ी। जब उनकी संपत्ति के लिए उत्तराधिकार खोला जाता है, तो यह हिंदू महिला संपत्ति अधिकार अधिनियम, 1937 की धारा 3 (2) के प्रावधान लागू होते हैं। दूसरे शब्दों में, उनकी विधवा आर. कृष्णम्मल के पक्ष में एक सीमित संपत्ति पैदा हुई। यह संपदा एच. एस. ए. की धारा 14 (1) के तहत एक पूर्ण संपदा में विकसित होगी। जब उन्होंने 1958 के ओएस 71 में संपत्ति पर अपने अधिकारों को छोड़ने के लिए समझौता किया, जिसमें इन मामलों में वादी अनुसूचित संपत्ति शामिल थी, तो इसने लक्ष्मीया वी. कल्याणस्वामी (डी) बीवाईएलआरएस के पक्ष में पूर्ण अधिकार प्रदान किए।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस।

यह दोहराया गया कि यह अधिनियम लागू होने के बाद निर्वसीयत मृत्यु होने वाले हिंदू के संबंध में उपलब्ध अधिकारों से व्यक्तियों को वंचित कर देगा।बल देते हैं। [पैरा 140,142,147,148 और 153] [762–ई–एच; 763–ए, सी–ई; 765–सी–एच; 767–एफ–एच; 766–ए; 768–ए–जी]

15. हिंदू की धारा 14 (1) श्लोक 14 (2)

सफलता अधिनियम 1956

वसीयत में कहा गया है कि 'ए अनुसूची' में उल्लिखित संपत्तियां उसकी पत्नी को उसके जीवन के लिए विरासत में दी गई हैं, इसमें कोई संदेह नहीं है। यह एक ऐसा मामला है जहाँ वसीयत स्वयं विशेष रूप से पाठ करती है कि वहअन्य बातों के साथ–साथ अपने खर्चों के लिए संपत्तियों से आय लें। उसे इस आय का उपयोग औपचारिक अवसरों पर अपनी बहनों को उपहार देने के लिए भी करना है। इसलिए, यह एक ऐसा मामला है जहाँ

दस्तावेज़, जिसके द्वारा अपीलार्थी संग्रहित करते हैं, यह पता लगाने के लिए कि संपत्ति देने का उद्देश्य क्या है, किसी भी सबूत की खोज करना अनावश्यक बनाता है। परीक्षक ने अपना मकसद बना लिया है

बिना उसका कोई अधिकार। वसीयत का उद्देश्य इन तथ्यों में नए अधिकार पैदा करके संपत्ति को विरासत में देना नहीं था –इस मामले में। यहां तक कि अपीलार्थियों का मामला यह है कि उसे अन्य संपत्तियां देकर रखरखाव के लिए प्रदान किया गया था जैसा कि संकेत दिया गया है

इच्छाशक्ति। यदि अपीलार्थियों के तर्क को स्वीकार किया जाना है, तो न्यायालय को रखरखाव की मात्रा पर विचार करना होगा जिसे वसीयतकर्ता उचित समझेगा। अन्य संपत्ति का विस्तार नहीं दिखाया गया है। इस तरह की कवायद अनावश्यक है जब वसीयत की शर्तों से संकेत मिलता है कि वसीयतकर्ता का इरादा था कि उसकी विधवा को आय [2020] 9 एस. सी. आर. से उचित रूप से खुद को बनाए रखने में सक्षम होना चाहिए।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

उन संपत्तियों में से जो वह उसे भी विरासत में दे रहा था, और उस उद्देश्य के लिए, बिना किसी संदेह के, जिसे सीमित के रूप में वर्णित किया जा सकता है

संपत्ति। ऐसी परिस्थितियों में, उच्च न्यायालय द्वारा लिया गया दृष्टिकोण कि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 14 (1) लागू होती है, को गलत नहीं माना जा सकता है। [पारस 167,169] [780–बी–जी; 781 ई]

साधु सिंह बनाम। गुरुद्वारा साहिब नरीके और अन्य(2006) 8 एस. सी. सी. 75 [2006] 5 पूरक। एससीआर 799 –

प्रतिष्ठित।

C.Masilamani मुदलियार और अन्य बनाम। श्री की मूर्ति

स्वामीनाथस्वामी स्वामीनाथस्वामी थिरुकोइल और

अन्य एआईआर 1996 एससी 1697: [1996] 1 एससीआर 1068–निर्भर पर।

16. हिंदू की धारा 14 (1)

एराम्मा में, इस न्यायालय ने यह स्पष्ट कर दिया है कि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 14 (1) केवल एक व्यक्ति को उपाधि प्रदान नहीं करती है। अतिक्रमणकारी। यह किसी व्यक्ति को बिना किसी स्वामित्व के संपत्ति रखने का कोई अधिकार प्रदान नहीं करता है। ये टिप्पणियां निम्नलिखित परिस्थितियों के संदर्भ में की गई हैं:

01.06.1955 पर उनके पति की मृत्यु के बाद, हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम लागू होने पर आर. कृष्णम्मल के पक्ष में संपत्ति पर दावा करने का अधिकार प्रदान करने वाली दो धाराएँ हैं। वसीयत के तहत, उन्हें एक जीवन संपदा प्रदान की गई थी। यदि वसीयत को अस्तित्वहीन या अमान्य माना जाता है, तो फिर सेदो स्थितियाँ हो सकती हैं। उनका मामला या तो हिंदू महिला संपत्ति का अधिकार अधिनियम, 1937 की धारा 3 (1) या 3 (2) के तहत कवर किया जाएगा, जो इस बात पर निर्भर करता है कि क्या संपत्ति थी।

वी. रंगास्वामी नायडू की अलग संपत्ति या हित

रंगास्वामी नायडू की संपत्तियों पर उनका अधिकार होगा 1937 के अधिनियम की धारा 3 (2) के तहत संपत्तियां।

यह वी. कल्याणस्वामी (डी) बायल्स द्वारा मनाया जाता है। & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस।

इस कारण से कि जब हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम लागू हुआ, आर. कृष्णम्मल ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के तहत कार्यवाही के तहत अपना संघर्ष खो दिया था। 1958 के ओ. एस. नं. 71 में उन्होंने जो अभिवचन किया था, उसकी प्रकृति भी देखी गई है। वह विशेष रूप से यह बताती है कि वह अधिकार की वसूली करने की हकदार है

संपत्ति। इसमें कोई संदेह नहीं है कि वह खुद को संयुक्त अधिकार के रूप में मानने की हकदार है। कोट्टूरुस्वामी मामले में निर्णय, वास्तव में, मंगल सिंह और अन्य बनाम मामले में इस न्यायालय की तीन अन्य न्यायाधीशों की पीठ द्वारा विचार किया गया। श्रीमती. रैटनो (मृत) अपने कानूनी प्रतिनिधियों और एक अन्य ए. आई. आर. 1967 एस. सी. 1786 द्वारा। अधिनियम की धारा 14 (1) को ध्यान में रखते हुए और यह कि इसमें स्वामित्व वाली संपत्ति शामिल है

एक महिला हिंदू द्वारा, चाहे वह अधिनियम के प्रारंभ से पहले या बाद में अर्जित की गई हो, न्यायालय उन परिस्थितियों की व्याख्या करने के लिए आगे बढ़ा, जिनमें कोट्टुरूस्वामी मामले में निर्णय दिया गया था। वास्तव में, इस निर्णय को दो न्यायाधीशों की पीठ द्वारा संदर्भित नहीं किया गया था जिसने साधु सिंह में निर्णय दिया था।

हालाँकि, इसे ए. आई. आर. 1996 एस. सी. 172 (पैरा 14) और श्याम नारायण सिंह मामले में इस न्यायालय के एक बहुत ही हाल के फैसले में जोड़ा गया है।

और ओआरएस। बनाम रमाकांत सिंह और अन्य। 2018 (1) आर. सी. आर. (सिविल) 981 में दो विद्वान न्यायाधीशों की पीठ द्वारा फिर से प्रस्तुत किया गया। मंगल सिंह के आदेश को देखते हुए, यह न्यायालय आश्वस्त महसूस करता हैइसका विचार है कि धारा 14 (1) लागू होती है। [पैरा 173] [783–ई–एच; 784–ए बी, ई; 785–सी–ई]

एराम्मा वी. वीरूपन एयर 1966 एससी 1879: [1966] 2 एस. सी. आर. 626; गुम्मलपुरा टागिना मटाडा कोट्टुरूस्वामी बनाम। सेत्रा वीरव्वा और अन्य ए. आई. आर. 1959 एस. सी. 577: [1959] 1 पूरक। एस. सी. आर. 968; श्याम नारायण आह और अन्य। वी. रमाकांत सिंह और अन्य। 2018 (1) आर. सी. आर. (सिविल) 981; मंगल सिंह और अन्य बनाम। श्रीमती. रैटनो (मृत) अपने कानूनी प्रतिनिधियों और एक अन्य ए. आई. आर. 1967 एस. सी. 1786 द्वारा

: [1967] 3 एस. सी. आर. 454 पर भरोसा किया।

नागरिक आवेदन संख्या। 1045–1050 2013 का

अपीलार्थी ए. अलगिरिस्वामी द्वारा निष्पादित बिक्री विलेखों के आधार पर दावा करते हैं, जो दोनों मुकदमों में प्रथम प्रतिवादी हैं। मामला, जिसे स्थापित करने की मांग की गई है, वह यह है कि वादी अनुसूची संपत्तियों के उत्तराधिकारियों के बीच एक विभाजन था और

उनके द्वारा खरीदी गई संपत्ति, प्रथम प्रतिवादी को आवंटित संपत्तियों में से एक थी। उनका पूरा मामला ए पर आधारित है।अलगिरिस्वामी के पास संपत्ति में अधिकार हैं। ए. अलगिरिस्वामी के पास [2020] 9 एस. सी. आर. हैं।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

दिए गए कारणों के लिए कोई अधिकार नहीं। 1958 के ओ. एस. सं. 71 में समझौते के आदेश पर आधारित तर्क,

विभाजन या वसीयत पर सवाल उठाने से लक्ष्मीया की शाखा को बरकरार नहीं रखा जा सकता है। जहाँ तक यह अभिनिर्धारित किया गया है कि आर. कृष्णम्मल हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 14 (1) के तहत पूर्ण स्वामी बन गए थे, और 1958 की ओ. एस. संख्या 71 में समझौते के आदेश को ध्यान में रखते हुए, जिसके द्वारा उन्होंने उत्तरदाताओं के पक्ष में अपने सभी अधिकारों को छोड़ दिया था, ए. अलगिरिस्वामी के पास कोई अधिकार निहित नहीं था जिसे वह अपीलार्थियों को पारित कर सकते थे। 1985 के ओ. एस. सं. 649 में वादियों ने अपने अधिकार की घोषणा की थी और जिसके वे हकदार थे। यह तर्क कि बिक्री विलेखों को कोई चुनौती नहीं थी, अपीलार्थियों के मामले को आगे नहीं बढ़ा सकता है। डी. डब्ल्यू. 1, ए. अलगिरिस्वामी, उत्तराधिकारियों में से एक

ने कब्जे के संबंध में गवाही दी है। अपीलकर्ताओं ने निचली अदालत के फरमान को चुनौती नहीं दी और वे जाहिरा तौर पर चल रहे थे

अपीलार्थियों के साथ जो वसीयत के तहत वसीयतदार थे।किसी भी अपील में कोई योग्यता नहीं है। [पारस 175,176] [785–जीएच; 786–ए–डी]

गद्दाम रामकृष्णारेड्डी और अन्य। वी. गद्दाम रामी

रेड्डी और ओआरएस। (2010) 9 एससीसी 602: [2010] 11 एससीआर 656; नवनीत लाल उर्फ रंगी बनाम। गोकुल और अन्य (1976) 1

एससीसी 630 [1976] 2 एससीआर 924–प्रतिष्ठित।

बाबू सिंह और अन्य बनाम। राम सहाय उर्फ राम सिंह (2008) 14 एससीसी 754: [2008] 7 एससीआर 250; के. लक्ष्मणन बनाम। थेक्कायिल पद्मिनी और अन्य (2009) 1 एस. सी. सी. 354: [2008] 16 एससीआर 1117; कंवरजीत सिंह ढिल्लों बनाम। हरद्याल सिंह ढिल्लों (2007) 1 एस. सी. सी. 357–पर भरोसा किया। नानी बाई और अन्य बनाम। गीता बाई एयर 1958 एससी 706:

[1959] एस. सी. आर. 479; कृष्णबाई भृतर गणपतराव

देशमुख बनाम। अप्पासाहेब तुलजारामराव निंबालकर और अन्य। (1979) 4 एससीसी 60: [1980] 1 एस. सी. आर. 161; भगवान कृष्ण गुप्ता बनाम प्रभा गुप्ता और अन्य। (2009) 11 एस. सी. सी. 33 [2009] 3 एस. सी. आर. 393; एल. आर. और अन्य बनाम द्वारा शिवदेव कौर (मृत)। आर. एस. ग्रेवाल (2013) 4 एससीसी 636: [2013] 5 एस. सी. आर. 267; शरद सुब्रमण्यन बनाम। सौमी मजूमदार

& ओआरएस। (2006) 8 एस. सी. सी. 91; बे बेरी अपार्टमेंट प्राइवेट लिमिटेड। लिमिटेड और ओआरएस। वी. शोभा और ओआरएस। (2006) 13 एससीसी 737: [2006] 7 पूरक। एस. सी. आर. 738; उषा सुबाराओ बनाम। बी. ई.

वी. कल्याणस्वामी (डी) एलआरएस द्वारा। & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस।

मुन्नालाल और अन्य बनाम। एस. एस. राजकुमार और अन्य एआईआर 1962 एससी 1493: [1962] 3 पूरक। एस. सी. आर. 418; गुम्फा (श्रीमती) और अन्य बनाम। जय बाई (1994) 2 एससीसी 511: [1994] 1 एस. सी. आर. 901; गुलवंत कौर और एक अन्य बनाम। मोहिंदर सिंह और अन्य ए. आई. आर. 1987 एस. सी. 2251 [1987] 3 एस. सी. आर. 576; एल. आर. द्वारा बाई वाजिया (मृत)। वी. ठाकुरभाई चेलभाई और अन्य ए. आई. आर. 1979 एस. सी. 993: [1979] 3 एससीआर 291

संदर्भित किया गया।

आदियालथ कथिसुम्मा और ओआरएस। वी. आदियालथ बीचू और ओआरएस। ए. आई. आर. 1951 एम. ए. डी. 561; सुंदरा अडपा बनाम। गिरिजा

ए. आई. आर. 1962 (मैसूर) 72; के. पेरामनायकम पिल्लई बनाम। एस. टी. शिवरामन और अन्य 1952 ए. आई. आर. मद्रास 419–संदर्भित। कृष्णय्या सूर्य राव बहादुर गारू और अन्य (प्रतिवादी) बनाम। वेंकट कुमार महिताथी सूर्य राव [2020] 9

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

बहादुर गारू एयर 1933 पी. सी. 202; मोहम्मद खली खान बनाम। महबूब अली मियां एयर 1949 पीसी 78; एपोवी

वी. रामा सुब्बा अयान और अन्य [1866] 11 M.I.A.75

गिरिजा बाई बनाम। सदाशिव धुंडीराज और अन्य ए. आई. आर. 191 पी. सी. 104; पंडित सूरज नारायण और एक अन्य बनाम। पांडी

इकबाल नारायण और अन्य (1912–13) 40 IA 40: (1913

11 सभी एलजे 172 का उल्लेख किया गया है।

मामला कानून संदर्भ

[1985] 3 पूरक। एससीआर 169

पैरा 20

संदर्भित किया गया है

[1959] एससीआर 479

संदर्भित किया गया है

पैरा 20

[2006] 5 पूरक। एससीआर 799

प्रतिष्ठित

पैरा 33

[1980] 1 एससीआर 161

पैरा 35

संदर्भित किया गया है

[1964] 2 एससीआर 933

उस पर भरोसा करें

पैरा 35

[2009] 3 एससीआर 393

संदर्भित किया गया है

पैरा 35

[1974] 1 एससीआर 707

पैरा 35

संदर्भित किया गया है

[2008] 7 एससीआर 1

संदर्भित किया गया है

पैरा 35

[1980] 2 एससीआर 1130

संदर्भित किया गया है

पैरा 35

[2017] 4 एससीआर 511

पैरा 35

संदर्भित किया गया है

[2013] 5 एससीआर 267

संदर्भित किया गया है

पैरा 35

(2006) 8 एस. सी. सी 91

संदर्भित किया गया है

पैरा 35 पैरा 35

[2010] 11 एससीआर 656

प्रतिष्ठित

[2006] 7 पूरक। एससीआर 738

पैरा 36

संदर्भित किया गया है

(1996) 5 एस. सी. सी 201

संदर्भित किया गया है

पैरा 36

[2002] 5 पूरक। एससीआर 175

पैरा 38

संदर्भित किया गया है

[1983] 1 एससीआर 851

संदर्भित किया गया है

पैरा 43

[2007] 6 एससीआर 853

संदर्भित किया गया है

पैरा 43

[2004] 2 एससीआर 260

पैरा 43

संदर्भित किया गया है

[1971] पूरक। एससीआर 27

संदर्भित किया गया है

पैरा 43

[1973] 1 एससीआर 570

संदर्भित किया गया है

पैरा 43

[2012] 7 एससीआर 933

उस पर भरोसा करें

पैरा 47 वी. कल्याणस्वामी (डी) बायल्स। & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस।

[1953] एससीआर 351

उस पर भरोसा करें

पैरा 57

[2004] 1 पूरक। एससीआर 43

उस पर भरोसा करें

पैरा 57

[2008] 7 एससीआर 250

उस पर भरोसा करें

पैरा 62

[2008] 16 एससीआर 1117

उस पर भरोसा करें

पैरा 63

[1968] 3 एससीआर 119

पैरा 92

संदर्भित किया गया है

(1972) 4 एससीसी 7

संदर्भित किया गया है

पैरा 104

[1967] 2 एससीआर 448

पैरा 105

संदर्भित किया गया है

[1967] 1 एससीआर 7

उस पर भरोसा करें

पैरा 108

(2007) 1 एससीसी 357

उस पर भरोसा करें

पैरा 111

[1954] एससीआर 177

संदर्भित किया गया है

पैरा 121

[1966] 1 एससीआर 628

संदर्भित किया गया है

पैरा 121

[1983] 2 एससीआर 808

संदर्भित किया गया है

पैरा 145

(1972) 4 एस. सी. सी 86

संदर्भित किया गया है

पैरा 158

[1977] 3 एससीआर 261

पैरा 159

संदर्भित किया गया है

(2005) 5 एस. सी. सी 390

संदर्भित किया गया है

पैरा 160

[1994] 1 एससीआर 16

संदर्भित किया गया है

पैरा 162

[2012] 2 एससीआर 303

संदर्भित किया गया है

पैरा 163

[1976] 2 एस. सी. आर 924

प्रतिष्ठित

पैरा 163

(2016) 2 एससीसी 56

संदर्भित किया गया है

पैरा 163

[1962] 3 पूरक। एससीआर 418

संदर्भित किया गया है

पैरा 163

[1994] 1 एससीआर 901

संदर्भित किया गया है

पैरा 164

[1996] 1 एससीआर 1068

उस पर भरोसा करें

पैरा 164

[1987] 3 एससीआर 576

संदर्भित किया गया है

पैरा 165

[1966] 2 एससीआर 626

उस पर भरोसा करें

पैरा 165

[1979] 3 एससीआर 291

संदर्भित किया गया है

पैरा 165

[1959] 1 पूरक। एससीआर 968

उस पर भरोसा करें

पैरा 172

[1967] 3 एससीआर 454

उस पर भरोसा करें

पैरा 173

उस पर भरोसा करें

2018 (1) आर. सी. आर. (सिविल) 981

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

सिविल अपीलीय न्यायनिर्णयः सिविल अपील सं। 1021

1026 2013 से।

मद्रास में उच्च न्यायालय के एस. ए. सं. 1 दिनांकित निर्णय और आदेश से। 314 & 315 1994 का 41 और 42 का

1997 और 1998 का क्रमशः 690 और 691।

के साथ

सी. ए. सं. 1027–1032 , 1033–1038 , 1039–1044 , 1045–1050 2013 से।

सी. ए. सुंदरम, श्रीमती वी. मोहना, ई. ओम प्रकाश, एस. नागमुथु, मोहन परासरन, सुश्री चित्रा संपत, बसव प्रभु पाटिल, एस. गुरु

कृष्ण कुमार, वरिष्ठ अधिवक्ता। , बी. रघुनाथ, सुश्री रोहिणी मूसा, सुश्री एन. सी. ज़विथा, सुश्री अंकिता शर्मा, सुश्री निकिता कूपर, ज़फरीनायत, विजय कुमार, R.Murali, सुश्री मधुष्मिता बोरा, पवन किशोर सिंह, आर. एन. केसवानी, एम. पी. पार्थिबन, आर. सुधाकरन, हार्दिक गौतम, चंद्र प्रभु, एस. रंजीत, अनिल कौशिक, अभिषेक मिश्रा, आकाश भारद्वाज, शिव प्रकाश पांडे, एस. नंदकुमार, सुश्री दीपिका

नंदकुमार, एम. एस. सरन कुमार, वी. एन. रघुपति, डी. एस. अश्विन कुमार, वी. बालचंद्रन, सिद्धार्थ नायडू, अंकोलेकर गुरुदत्त, सुश्री रचिता हीरेमथ, के. परमेश्वर, एम. वी. मुकुंद, तुषार बख्शी, वी. राघवचारी, श्रीमती प्रभा स्वामी, निखिल स्वामी, जी. बालाजी, के. के. मणि, सुश्री रेवती राघवन, अधिवक्ता। उपस्थित दलों के लिए।

न्यायालय का निर्णय इसके द्वारा दिया गया था

के. एम. जोसेफ, जे.

1. एक आर. वेंकटसामी नायडू के दो बेटे और पाँच बेटियाँ थीं। लक्ष्मीया नायडू और रंगस्वामी नायडू के पुत्र थे।

आर. वेंकटसामी नायडू। रंगास्वामी नायडू की शादी एक से हुई थी।

आर. कृष्णम्मल। उन्हें कोई परेशानी नहीं थी। लक्ष्मीया नायडू के चार बेटे थे। , भक्तवत्सलम, वेंकटपति, जगन्नाथन और रामास्वामी। दो दीवानी मुकदमों ने हमारे सामने विशेष अनुमति द्वारा इन अपीलों को उत्पन्न किया है। 1985 का ओ. एस. सं. 649 उन लोगों द्वारा दायर किया गया है जिन्होंने लक्ष्मीया नायडू के तहत दावा किया था, जबकि 1983 के ओ. एस. सं. 89 में वादी रंगस्वामी नायडू द्वारा कथित रूप से निष्पादित वसीयत के तहत वसीयतकर्ताओं में से एक है। दोनों दीवानी मुकदमों में वाद अनुसूची की संपत्तियां समान हैं।

2. पहला सूट, अर्थात। , 1985 का ओ. एस. सं. 649 (जैसा कि उक्त मुकदमा शुरू में 1982 का ओ. एस. सं. 2063 के रूप में दायर किया गया था और इसे ओ. एस. सं. के रूप में पुनः क्रमांकित किया गया है।

649 वी. कल्याणस्वामी (डी) बी. वाई. एल. आर. एस. मुकदमे में वादी का हक घोषित करने के लिए 1985 का) दायर किया गया था।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

मुकदमे की संपत्तियों में प्रतिवादियों के खिलाफ संपत्ति और निषेधाज्ञा के लिए।

1983 के ओ. एस. सं. 89 में अन्य बातों के साथ मांगी गई राहत इस प्रकार हैः

" (क) वादी के अधिकार को एक तिहाई हिस्से के रूप में घोषित करना।

अनुसूची । में वर्णित गुण, इसके तहत या अनुसूची में 1/4 वां हिस्सा अनुसूची ।। में वर्णित गुणः

वादी को एक ऐसा हिस्सा या अलग अधिकार प्रदान करनामें वर्णित गुणों के विभाजन को निर्देशित करने का विकल्प

अच्छे और बुरे के संदर्भ में चार बराबर शेयरों में अनुसूची ।। भूमि और वादी को एक ऐसा हिस्सा अलग से अधिकार में देना;

(ग) प्रभाग को प्रभावी बनाने के लिए एक आयुक्त की नियुक्ति;

(ई) की तारीख से भविष्य के अपने मुनाफे की जांच का निर्देश देना। कब्जा की डिलीवरी तक मुकदमा करें और ऐसी राशि के लिए एक डिक्री पारित करें

जैसा कि जाँच पर निर्धारित किया जा सकता है;

XXX

XXX "।

XXX

एक बराबर इतिहास; पहला चरण

3. इस मुकदमे का एक उतार-चढ़ाव वाला इतिहास है। यह सब वापस शुरू हुआ

वर्ष 1955 में। दंड संहिता की धारा 145 के तहत कार्यवाही

प्रक्रिया, 1898 (संक्षेप में "सी. आर. पी. सी".) को प्रथम श्रेणी मजिस्ट्रेट, कोयंबटूर के समक्ष 1955 की एम. सी. संख्या 1 और 1955 की एम. सी. संख्या 8 के रूप में शुरू किया गया। रंगस्वामी नायडू की विधवा कृष्णम्मल 'ए' पार्टी थीं। यह पुलिस उप-निरीक्षक की दिनांक 04.07.1955 की रिपोर्ट के आधार पर था कि उप्पिलिपलायम गांव के सर्वेक्षण संख्या 613/04 और 614/03 के कब्जे के संबंध में विवाद था। ए 'पार्टी नं. 1 आर. कृष्णम्मल रंगस्वामी नायडू की विधवा थीं। ए 'पार्टी नं.

2 'ए' पार्टी नं. का भतीजा था। 1 और वसीयत का निष्पादक। ' बी 'पार्टी नं. 1 वे रंगस्वामी नायडू के बड़े भाई थे। , लक्ष्मीया नायडू '। बी 'पार्टी नंबर। 2 4 लोग लक्ष्मीया नायडू के पुत्र थे।

'ए' पक्ष द्वारा स्थापित मामला संक्षेप में इस प्रकार था:वर्ष 1932 में 'बी' पार्टी नं. 1

और स्वर्गीय रंगास्वामी नायडू। रंगास्वामी नायडू ने भी अपने नाम पर जमीनें खरीदीं। उन्होंने कई जमीनें पट्टे पर ली थीं।

' ए 'पार्टी, [2020] 9 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

'बी' पार्टी में सबसे पहले आने वाले और रंगास्वामी नायडू के भाई लक्ष्मीया नायडू ने नोटिस को देखने के बाद इस आशय के संदेश का जवाब दिया कि वे अविभाजित हैं और अगर रंगास्वामी विभाजित होना चाहते हैं तो उन्हें दूसरे को सूचित करना होगा सह–पार्सल। यह 'ए' पार्टी का एक और मामला है कि रंगास्वामी नायडू ने 'आईडी2' पर जवाब दिया था कि लक्ष्मीया नायडू का दिनांकित 'आईडी1' में उनका रुख गलत था। यह भी आरोप है कि

17.05.1955 पर 'बी' पक्ष सं. द्वारा स्वीकार किया गया था। 1. आई. डी. 1 के बाद रंगास्वामी नायडू की तबीयत बिगड़ने लगी। वह 20.05.1955 पर बॉम्बे के लिए रवाना हुए। वह अभी भी अपने कर्तव्यों के प्रति सचेत थे और दूसरों के साथ पत्राचार कर रहे थे। रंगास्वामी नायडू का 01.06.1955 पर शुरुआती घंटों में निधन हो गया। दूसरी ओर बी 'पार्टी ने तर्क दिया है कि रंगस्वामी नायडू और बी' पार्टी संयुक्त हिंदू के सदस्य थे।

परिवार '। बी 'पार्टी नं. 1 , अर्थात्। , लक्ष्मीया नायडू पर्याप्त उम्र के थे और सभी कार्यों में भाग नहीं ले सकते थे। रंगास्वामी नायडू और उनमें से एक

लक्ष्मीया नायडू के बेटों को खेतों की खेती देखने के लिए कहा गया था। वर्ष 1932 में विभाजन के मामले को अस्वीकार कर दिया गया था। रंगास्वामी नायडू अस्वस्थ हो गए और जनवरी 1955 से भोजन करने में असमर्थ हो गए और उन्हें ट्यूब से खिलाया गया। संक्षेप में, 'बी' पार्टी का तर्क था कि रंगास्वामी नायडू अविभाजित सदस्य बने रहे।

4. मजिस्ट्रेट ने वसीयत के बारे में कोई चर्चा नहीं की और इसे अनावश्यक पाया। 'बी' पक्ष को कब्जे में ढूंढना और वे

मजिस्ट्रेट ने 'बी' पक्ष के पक्ष में अभिनिर्धारित किया कि वे उस समय तक कब्जे में रहने के हकदार थे जब तक कि 16.4.1956 दिनांकित आदेश द्वारा कानून के उचित पाठ्यक्रम में बेदखल नहीं किया जाता। बी 'पार्टी, यह उल्लेख किया जाता है, लक्ष्मीया नायडू और उनके बेटे थे। लक्ष्मीया नायडू का निधन 10.04.1958 पर हुआ। उसी के खिलाफ पुनरीक्षण याचिका खारिज कर दी गई थी।

सूची का दूसरा चरण

5. मुकदमेबाजी का दूसरा चरण 1958 के O.S.No.71 दाखिल करने से शुरू होता है। वादी आर. कृष्णम्मल की विधवा थी।

रंगास्वामी नायडू। उक्त मुकदमे में प्रतिवादी L.Ramaswamy वी. कल्याणस्वामी (डी) बीवाईएलआरएस।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

नायडू, एल. बख्तवत्सलम, L.Jagannathan और एल. वेंकटपति, सभी लक्ष्मीया नायडू के पुत्र थे। पाँचवाँ प्रतिवादी एन. वी. रामचंद्र नायडू था, जो वेंकट स्वामी नायडू (कृष्णमाल द्वारा स्थापित वसीयत का निष्पादक) का बेटा था। शिकायत की तारीख 10.4.1958 है जो संयोग से वह तारीख है जिस दिन लक्ष्मीया नायडू का निधन हुआ था। संक्षेप में, वादी कृष्णम्मल के मामले को नीचे उल्लिखित किया जा सकता है। कृष्णम्मल ने मजिस्ट्रेट के समक्ष स्थापित मामले को दोहराया कि उनके पति और लक्ष्मीया 1932 तक एक अविभाजित परिवार के सदस्यों के रूप में संयुक्त रूप से रह रहे थे। 1932 में एक मौखिक विभाजन हुआ। शिकायत की अनुसूची 'I' में वर्णित संपत्तियां उसके दिवंगत पति के हिस्से में आ गईं। रंगास्वामी नायडू। उन संपत्तियों पर उनका अलग अधिकार और आनंद था। इसके बाद, उन्होंने अपने नाम पर कई अन्य संपत्तियों का अधिग्रहण किया। उन संपत्तियों को अनुसूची आई ए के रूप में निर्धारित किया गया था। रंगास्वामी नायडू, जो विधायी वकील के निर्वाचित सदस्य थे, को गले का कैंसर हो गया। उन्होंने 1932 में मौखिक विभाजन को औपचारिक रूप देने के इरादे से स्व–अर्जित और पैतृक दोनों संपत्तियों की एक सूची तैयार की और प्रतिवादियों की संपत्तियों की एक समान सूची तैयार की और इसे अपने भाई को उनकी मंजूरी के लिए भेजा। सूची को लक्ष्मीया नायडू की लिखावट में कुछ सुधारों के साथ वापस कर दिया गया था। उनके दिवंगत पति ने स्थानीय दैनिक में 10/05/1955 पर एक नोटिस प्रकाशित किया कि वह 1932 से विभाजित सदस्य थे और वह अपने अलग हिस्से और स्थिति की घोषणा करने के लिए नोटिस प्रकाशित कर रहे थे। हालाँकि, आरोप लगाया गया था कि लक्ष्मीया ने यह रवैया अपनाया था कि सह–विभाजन अविभाजित था और उन्होंने सूचना की शुद्धता और न्याय्यता पर विवाद किया और 11/05/1955 दिनांकित नोटिस भेजा। कृष्णम्मल के पति ने 16/05/1955 पर जवाब भेजा। वादी

कृष्णम्मल ने यह भी कहा कि 10/5/1955 पर एक वसीयत थी और इसे विधिवत पंजीकृत किया गया था और आगे उन्होंने वसीयत में मौखिक का उल्लेख किया है।

वर्ष 1932 में विभाजन। वसीयत के तहत यह दावा किया गया था कि अनुसूची । और । में संपत्तियों को कृष्णम्मल के लिए जीवन भर के लिए अलग रखा गया था और शेष को मुख्य रूप से उनकी बहनों के बेटों के पक्ष में रखा गया था। उन्होंने सी. आर. पी. सी. की धारा 145 के तहत कार्यवाही का संदर्भ दिया। उन्होंने लक्ष्मीया नायडू के इस रुख से भी प्रेरणा ली कि भाई हिंदू अविभाजित परिवार के सदस्य बने रहे और उक्त रुख को देखते हुए आरोप लगाया कि उन्हें प्रतिवादी 1 से 4 के साथ संयुक्त कब्जे में माना जाना चाहिए। कृष्णम्मल ने दावा किया

यह कि प्रतिवादियों द्वारा संपत्ति अनुसूची । और आई. ए. में कब्जा गैरकानूनी था। उन्होंने आगे कहा कि अपने पति के कानूनी प्रतिनिधि के रूप में और एक वसीयत के तहत उत्तराधिकारी के रूप में वह ली गई स्थिति को अपनाने के लिए बाध्य हैं। , कि उसका पति एक विभाजित सदस्य था और एक मौखिक विभाजन [2020] 9 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

यह 1932 में हुआ था और उनके द्वारा निष्पादित पंजीकृत वसीयत वैध थी। वैकल्पिक रूप से यह प्रतीत होता है कि उसने निम्नलिखित मामला स्थापित कियाः

" 11. हालाँकि वादी आगे कहता है कि आर. वी. लक्ष्मीया नायडू द्वारा 145 कार्यवाही में स्थापित किए गए मामले और उनके द्वारा किए गए स्वीकारोक्ति पर भी, उसके अधिकार और भी बेहतर हैं और एक सह-भागीदार के रूप में वह अधिनियमों के संयुक्त संचालन के तहत हकदार है।

1937 का XVIII और 1956 का XXX संयुक्त संपत्तियों के आधे हिस्से में एक पूर्ण राज्य के लिए और विभाजन और उसके हिस्से के कब्जे की मांग करने के लिए। प्रतिवादी 1 से 4 अन्य आधे हिस्से के हकदार हैं। वादी प्रतिवादी 1 से 4 के कब्जे में सभी संपत्तियों को निर्दिष्ट करने में असमर्थ है, लेकिन जहां तक वह ऐसा करने में सक्षम है, उसने उन्हें 1 अनुसूची 2 निर्धारित किया है। वादी को बेहतर विवरण मिलने पर उन्हें जोड़ने के लिए अनुमति चाहिए। वादी यह भी प्रार्थना करता है कि प्रतिवादी 1 से 4 को संयुक्त परिवार की संपत्तियों का पूर्ण और सही खुलासा करने के लिए बुलाया जा सकता है। उनकी संपत्ति।

12. वादी का कहना है कि जहाँ तक उसका संबंध है, वह प्रतिवादी की दलीलों को अपनाने के लिए पूरी तरह से तैयार है जैसा कि 145 कार्यवाहियों में सामने रखा गया है और यह प्रतिवादी के लिए खुला नहीं है।

अभियुक्तों को उसी पर वापस जाना है। नतीजतन वादी का कहना है कि परिस्थितियों में, उसके अधिकार निर्विवाद हैं और वह संपत्तियों के तत्काल कब्जे में रखे जाने की हकदार है।

अनुसूची । और । में वर्णित-ए मुकदमे में अंतिम डिक्री लंबित है या वह सभी अनुसूचियों में संपत्तियों के संबंध में एक रिसीवर नियुक्त करने की हकदार है ताकि उसे अपने न्यायसंगत अधिकार प्राप्त हो सकें।

6. कृष्णम्मल ने आगे कहा कि यदि वैकल्पिक मामले को स्वीकार कर लिया जाता है, तो वह लक्ष्मीया नायडू के हाथों में चल और अचल संपत्तियों की आय के विभाजन की राहत के हिस्से के रूप में एक खाता लेने की हकदार है। उक्त मुकदमे में कार्रवाई का कारण पैरा 17 में इस प्रकार दिया गया थाः

" 17. मुकदमे के लिए कार्रवाई का कारण 1.6.1955 पर उत्पन्न हुआ जब रंगास्वामी नायडू की मृत्यु हो गई और जून 1955 को या उसके आसपास जब प्रतिवादी संख्या 1 से 4 ने 16.4.1956 पर संपत्तियों पर गैरकानूनी रूप से अतिक्रमण किया, जब राजस्व मंडल अधिकारी, कोयंबटूर ने आर. वी. के कब्जे को बरकरार रखा।

26.9.1957 जब उच्च न्यायालय ने वी. कल्याणस्वामी (डी) बी. एल. आर. एस. के आदेश में हस्तक्षेप करने से इनकार कर दिया।

& एएनआर। वी.

भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. द्वारा। & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

राजस्व प्रभागीय अधिकारी, कोयम्बटूर

इस माननीय न्यायालय की अधिकारिता जहाँ संपत्तियाँ स्थित हैं।

उक्त मुकदमे में मांगी गई राहत अन्य बातों के साथ इस प्रकार थीः" 1. एक घोषणा के लिए कि अनुसूची–। और ।–A में गुण

वादी से संबंधित है और अतीत के साथ उसी के कब्जे के लिए

145 में नियुक्त प्राप्तकर्ता द्वारा अर्जित लाभ

कार्यवाहियां और भविष्य के लाभ जो इसके द्वारा निर्धारित किए जा सकते हैं

2. अभियोग के पैरा 14 में निर्दिष्ट Rs.6000/– की वसूली के लिएः वैकल्पिक रूप से, ।, कि एक खाता लिया जा सकता है कि क्या

परिवार की संयुक्त संपत्ति में शामिल हैं और उससे होने वाली आय

2. कि एक आयुक्त को संपत्तियों को विभाजित करने के लिए नियुक्त किया जाए मीट्स और सीमाएँ;

3. वादी संपत्तियों को दो बराबर शेयरों में विभाजित करने के लिए और

वादी को ऐसे एक हिस्से के कब्जे के लिए।

XXX

XXX "

XXX

उक्त मुकदमे को प्रतिवादियों द्वारा 1 से 4 पर चुनौती दी गई

मजिस्ट्रेट के समक्ष 145 कार्यवाहियों में स्थापित मामले के समान। हालाँकि निम्नलिखित शर्तों पर वाद से समझौता किया गया। के रूप में

ई शिकायत पर समर्थन यह अदालत को दिखाई दिया कि पक्षकारों

मामले से समझौता करने के लिए सहमत हुए और विलेख को नोटिस किया

रोम में, निम्नलिखित आदेश पारित किया गया था और उसके बाद शर्तों

अन्य बातों के साथ–साथ समझौता निम्नलिखित रूप में निर्धारित किया गया हैः

" 1. कि वादी होगा और इसके द्वारा पूरी तरह से हकदार है

वर्णित अनुसूची में आइटम 1 से 7 में अचल संपत्तियाँ

इसके तहत और यह कि प्रतिवादी 1 से 4 वादी को शामिल करते हैं

उसी का अधिकार;

2. कि प्रतिवादी 1 से 4 वादी को वस्तुओं में वर्णित धन का भुगतान करने के लिए

8,9 और 13, मद 10 में उल्लिखित डिक्री ऋण का निर्वहन और

वादी को उसके नाम पर आइटम 11 और 12 स्थानांतरित करने में मदद करें

इस तारीख से पैंतालीस दिनों के भीतर और डिफ़ॉल्ट रूप से,

वादी उपरोक्त राहतों के लिए इस डिक्री को निष्पादित करने के लिए स्वतंत्र है।

3. कि वादी का संपत्ति पर कोई अधिकार या दावा नहीं है

उनके पति आर. वी. लक्ष्मीया नायडू या प्रतिवादियों को 1 से 4 [2020] 9 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

संयुक्त रूप से या व्यक्तिगत रूप से, ऐसी देखभाल को छोड़कर जिसमें वह पहले से ही है

का अधिकार; 4. कि प्रतिवादी 1 से 4 वादी के पति आर. वी. की संपत्ति पर आयकर, यदि कोई हो, और संपत्ति शुल्क का बकाया भुगतान करते हैं।

रंगास्वामी नायडू और उनके भाई आर. वी. लक्ष्मीया नायडू;

वादी को आबंटित संपत्तियों सहित संपत्तियों के अधिकार और वह वादी इसलिए कुछ भी योगदान करने के लिए बाध्य नहीं है, कि प्रतिवादी 1 से 4 को वादी द्वारा ली गई संपत्तियों में आगे कोई अधिकार नहीं है और उस वादी को संपत्तियों के संबंध में कोई अधिकार नहीं है, चाहे वह आर. वी. लक्ष्मीया के नाम पर हो। नायडू या अन्यथा;

6. वह वादी जो प्रतिवादी 1 से 4 के साथ कार्य करता है, वह भूमि के लिए बढ़े हुए मुआवजे के लिए प्रस्तुत कर रहा है। जिसमें से Rs.6775/– की राशि अब अदालत में है। 17/58 इस न्यायालय की फाइल पर, कि अकेले प्रतिवादी 1 से 4 ऐसे किसी भी बढ़े हुए मुआवजे के हकदार हैं और प्रतिवादी 1 से 4 में पूरा खर्च वहन करते हैं।

वह कार्यवाही।

7. कि पक्ष इस अंतिम डिक्री को पंजीकृत करने के लिए स्वतंत्र हैं

इसके तैयार होने के एक सप्ताह बाद;

अन्य विवरण हैं जिनके द्वारा हमें हिरासत में लेने की आवश्यकता नहीं है। सूचीकरण का तीसरा चरण

कल्याणस्वामी। आर. अलगिरिस्वामी एक कृष्णमाल (एक रंगास्वामी नायडू और लक्ष्मीया नायडू की बहन और रंगास्वामी नायडू की विधवा से अलग) के पुत्र हैं। वी. कल्याणस्वामी अपनी बहन के माध्यम से रंगस्वामी नायडू और लक्ष्मीया नायडू के भतीजे हैं। थायम्मल। दोनों वादी हमारे सामने अपीलकर्ताओं में से हैं। अभियुक्त इस प्रकार थेः

उक्त मामले में पहला प्रतिवादी कोई और नहीं था

आर. कृष्णम्मल, रंगस्वामी नायडू की विधवा।

एम. वी. रामचंद्र वी. कल्याणस्वामी (डी) बायल्स। & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

दूसरा प्रतिवादी नायडुथे विवादित वसीयत का निष्पादक था। तीसरा प्रतिवादी आर. सुंदराजन, पुत्र के. पी. रंगप्पा नायडू, आर. वी. रंगासमय नायडू और लक्ष्मीया नाडू का एक और भतीजा था। चौथा प्रतिवादी ए. अलगिरिस्वामी, आर. वी. रंगास्वामी नायडू और एक अन्य बहन के माध्यम से लक्ष्मीया नाडू थे। तीसरे और चौथे प्रतिवादी भी हमारे सामने अपीलार्थी हैं। प्रतिवादी 5 और 6 ऐसे व्यक्ति थे जिनके खिलाफ आरोप था कि पहला प्रतिवादी

आर. कृष्णम्मल ने उन्हें क्रमशः 1 से 3 और 7 तक पहुँचाने का इरादा किया था। संक्षेप में, 1963 के ओ. एस. No.36 में वादी द्वारा स्थापित मामला इस प्रकार थाः

उन्होंने अपने चाचा रंगास्वामी नायडू द्वारा छोड़ी गई 10/05/1955 की वसीयत का उल्लेख किया। प्रथम प्रतिवादी, रंगास्वामी नायडू की पत्नी के पक्ष में जीवन संपदा और वादी और प्रतिवादी 3 और 4 के पक्ष में बनाए गए पूर्ण अधिकार का संदर्भ दिया गया है। इसके आगे भी 1958 के O.S.No.71 का संदर्भ है और यह कि मुकदमे से समझौता किया गया था। यह तर्क दिया गया कि इस तरह के समझौते की कोई आवश्यकता नहीं थी क्योंकि यह संपत्ति के लिए भी फायदेमंद नहीं था। आर. कृष्ण के पास केवल एक जीवन संपदा थी। वह सक्षम नहीं थी और उसने वादी और प्रतिवादी 3 और 4 के हितों का प्रतिनिधित्व नहीं किया। जहाँ तक आर. कृष्णम्मल को पूर्ण अधिकार प्रदान करने का आशय है, वह डिक्री वादी और प्रतिवादी 3 और 4 के लिए वैध या बाध्यकारी नहीं थी। वादी और प्रतिवादी 3 और 4 का संपत्तियों में निहित हित था लेकिन उन्हें पक्षकारों के रूप में शामिल नहीं किया गया था। यह भी आरोप लगाया जाता है कि आर. कृष्णम्मल ऐसा नहीं कर सके।

किसी भी समझौते द्वारा उसके अधिकार का विस्तार करें। उसकी केवल जीवन में रुचि थी। वादी आर को बुलाते हुए दिनांकित 10/05/1959 का नोटिस देते हैं।

कृष्णम्मल, पहला प्रतिवादी जिसने स्वीकार किया कि उसका हित केवल एक जीवन संपदा है और इस प्रकार उसे अलग करने से बचना है संपत्ति। अभियोग के पैरा 11 पर ध्यान दिया जा सकता है। वह इस प्रकार हैः

" 11. आर. वी. रंगास्वामी नायडू की वसीयत में यहाँ वर्णित संपत्तियों के अलावा अन्य संपत्तियाँ भी शामिल थीं।

समझौता आदेश प्रथम प्रतिवादी द्वारा अपने पति के भाई के बेटों को दिया गया है। वादी उन संपत्तियों के संबंध में एक अलग कार्रवाई के लिए अपने अधिकार सुरक्षित रखते हैं "

उक्त मुकदमे में मुद्दे बनाए गए थे। मुक़दमे को 17/10/1970 दिनांकित आदेश द्वारा संशोधित किया गया। 7 से 10 प्रतिवादियों को फंसाया गया

1970 के आई. ए. No.925 में पारित आदेश का आधार। प्रतिवादी 7 से 10 लक्ष्मीया नायडू के चार बेटे थे। , भक्तवत्सलम, [2020] 9 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

अतपति, जगन्नाथन और रामास्वामी। सूट में प्रार्थना

इस प्रकार हैः

क) यह घोषणा करते हुए कि प्रथम प्रतिवादी के पास केवल जीवन संपत्ति है

अलगाव की किसी भी शक्ति के बिना यहाँ वर्णित गुण

और यह कि वादी और प्रतिवादी 3 और 4 के पास स्वर्गीय आर. वी. रंगास्वामी की वसीयत के तहत उक्त संपत्तियों में निहित शेष राशि है।

नायडू। ख) प्रथम प्रतिवादी को वादी को इसकी लागत का भुगतान करने का निर्देश देना।

सूट;

और

ग) वादी को इस अदालत के रूप में ऐसी अन्य और आगे की राहत प्रदान करना।

मामले की परिस्थितियों में उपयुक्त और उचित समझा जा सकता है।

उक्त वाद भी न्यायालय द्वारा निर्णय में समाप्त नहीं हुआ। विज्ञापन दलों ने एक समझौते का विकल्प चुना। समझौता आदेश 18.2.1974 है और उस पाठ्यक्रम को प्रकट करता है जिसने खुद को ई. एस. के लिए प्रशंसित किया और यह अन्य बातों के साथ निम्नानुसार पढ़ता हैः

" वादी और प्रतिवादी 1 और 3 ने वाद पर संयुक्त समर्थन किया और प्रतिवादी 5 और 7 से 10 की ओर से पेश वकील ने भी उनके समर्थन को देखने के संकेत में हस्ताक्षर किए, यह न्यायालय दोनों के संयुक्त समर्थन के संदर्भ में है।आदेश और फरमानः

1. कि प्रथम प्रतिवादी श्रीमती। कृष्णम्मल के पास शिकायत अनुसूची की संपत्तियों की मद 5 और 6 में केवल एक जीवन संपदा है।

यहां पूरी तरह से वर्णित है, और यह कि पहला प्रतिवादी अलगाव की शक्तियों के बिना अपने जीवन के लिए उक्त संपत्तियों का आनंद लेने का हकदार है और उसके जीवनकाल के बाद संपत्ति की उक्त वस्तुएं वादी और 1 और 2 और प्रतिवादियों के पास जाएंगी।

2 और यहाँ 4।

2. कि प्रत्येक पक्ष इस मुकदमे में अपनी लागत खुद वहन करता है।

वादी और प्रतिवादियों द्वारा संयुक्त समर्थन की शर्तें 1 से 3

18.2.1974 पर।

इस संबंध में वादी द्वारा प्रार्थना की गई एक डिक्री हो सकती है

1 .

केवल वाद मद 5 और 6 का, अर्थात। S.No.467 0.98 एसी। इस 0.82 एसी में। शिकायत की सीमाओं के भीतर और S.No.466, 6.02 ए. सी. इस 3.60 ए. सी. में। एल. आर. एस. द्वारा वी. कल्याणस्वामी (डी) में वर्णित सीमाओं के भीतर।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. द्वारा। & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

अभियोग और कालापट्टी गाँव में स्थित है। प्रथम प्रतिवादी अलगाव की शक्तियों के बिना अपने जीवन के लिए उक्त वस्तुओं का आनंद लेने का हकदार है और उसके जीवनकाल के बाद वे उसके पास जाएंगे।

वादी 1 और 2 और प्रतिवादी 3 और 4।

प्रतिवादी 1 और 2 एतद्द्वारा घोषणा करते हैं कि उन्होंने किसी भी तरह से उक्त वस्तुओं को बोझिल या अलग नहीं किया है। वादी शिकायत के संबंध में दावा की गई राहत को छोड़ देते हैं।

2 .

5 वें प्रतिवादी को बेचे गए आइटम 1 से 3, सरकार द्वारा अधिग्रहित वादी आइटम 4 और वादी आइटम 7, जिसे 6 वें प्रतिवादी को बेचा गया है। वादी. इन मदों पर और इस बात से सहमत हैं कि पात्र व्यक्ति एक पूर्ण शीर्षक के हकदार हैं।

प्रत्येक पक्ष सूट की अपनी लागत वहन करेगा।

3 .

वादी और प्रतिवादी 1 से 3 प्रार्थना करते हैं कि हो सकता है

4 .

प्रतिवादी 3 और 4 के खिलाफ भी उपरोक्त शर्तों पर एक डिक्री। अन्य प्रतिवादियों के खिलाफ कोई राहत का दावा नहीं किया गया है

यह सूट "।

दो मौतें

8. वर्ष 1976 में लक्ष्मीया नायडू के पुत्र रामास्वामी नायडू का निधन हो गया। एक साल बाद 1977 में आर. कृष्णमाल की विधवा

रंगास्वामी नायडू का भी निधन हो गया।

4 टीएच चरण

9. 1977 में आर. कृष्णम्मल की मृत्यु के बाद 1981 का ओ. एस. संख्या 732 आर. अलगिरिस्वामी नायडू द्वारा दायर किया गया था। उक्त मुकदमे में प्रतिवादी 1 से 3 वी. कलायनस्वामी, सुंदरराजन और ए. अलगिरिस्वामी थे। यह ध्यान दिया जाएगा कि वादी और प्रतिवादी 1 से 3 वसीयत के तहत वसीयतदार हैं और हमारे सामने अपीलकर्ताओं में से हैं। कथित वाद (ए16) में स्थापित मामला अन्य बातों के साथ-साथ यह था कि उक्त मामले में वाद अनुसूची संपत्ति 1963 की ओ. एस. संख्या 36 में मद 5 और 6 थी जैसा कि पहले देखा गया था। 1963 के ओ. एस. सं. 36 में आर. कृष्णम्मल को केवल आजीवन हित और निहित शेष के लिए हकदार समझौता डिक्री थी

वादी और प्रतिवादियों के साथ 1 से 3। इसके अलावा, वादी का मामला यह था कि 30.04.1977 पर आर. कृष्णम्मल की मृत्यु को देखते हुए, वादी और प्रतिवादी 1 से 3 संपत्ति के संयुक्त कब्जे में थे। यह शिकायत की गई थी कि पहले प्रतिवादी ने प्रतिवादी को 4 से 5 एकड़ जमीन बेचने का इरादा किया था। कार्रवाई का कारण [2020] 9 एस. सी. आर. पर उत्पन्न होने का आरोप लगाया गया था।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

आर. कृष्णम्मल की जीवन संपदा के अधीन एक निहित शेष के लिए वादी के अधिकार की घोषणा करते हुए 1963 के ओ. एस. संख्या 36 में समझौता डिक्री का आधार। प्रार्थना विभाजन के आदेश के लिए थी।

10. ए17 वह लिखित बयान है जो तीसरे प्रतिवादी ए. अलगिरिस्वामी द्वारा दायर किया गया था, जिन्होंने विभाजन की डिक्री के लिए प्रार्थना की थी और

अपना 1/4 हिस्सा आवंटित करना। यह भी आरोप लगाया जाता है कि संपत्ति वादी और प्रतिवादियों के संयुक्त कब्जे में थी।

11. ए 18 1981 के ओ. एस. सं. 732 में पारित आदेश है। यह अतिरिक्त उप-न्यायाधीश, कोयंबटूर द्वारा पारित दिनांक 21.06.1984 है।

विभाजन के लिए आदेश।

5 पहला चरण/वर्तमान सूची

12. जाहिरा तौर पर, वर्तमान मुकदमेबाजी के लिए ट्रिगर ए. अलगिरिस्वामी द्वारा की गई बिक्री के माध्यम से कुछ लेनदेन द्वारा प्रदान किया गया था।

(रंगास्वामी नायडू द्वारा कथित वसीयत के तहत चार उत्तराधिकारियों में से एक)। जिन दो मुकदमों ने हमारे समक्ष अपील दायर की है, उनमें से पहला आठ वादियों द्वारा दायर किया गया था। यह ओ. एस. नंबर 2087/82 है [हालाँकि इसे ओ. एस. नंबर 649/1985 के रूप में पुनः क्रमांकित किया गया था]। पहले तीन वादी लक्ष्मीया नायडू के बेटे हैं, चौथे वादी रामास्वामी नायडू की विधवा हैं जो लक्ष्मीया नायडू के बेटों में से एक थे, जिनका 1976 में निधन हो गया था। वादी 5 से 8 रामास्वामी नायडू की बेटियाँ हैं।

13. जहाँ तक प्रतिवादियों का संबंध है, पहला प्रतिवादी ए. अलगिरिस्वामी है जिसका कार्य स्पष्ट रूप से निकटवर्ती कारण था

सूट। प्रतिवादी 2,3 और 4 रंगस्वामी नायडू के अन्य भतीजे हैं जो वसीयत के तहत दावा करते हैं। इस प्रकार, प्रतिवादी 1 से 4 रंगस्वामी नायडू के भतीजे हैं और जो वसीयत के तहत और हमारे सामने अपीलकर्ताओं में से हैं। 5 से 26 प्रतिवादियों पर आरोप लगाए गए थे कि मुकदमे की संपत्तियों की कुछ वस्तुओं को पहले प्रतिवादी ए. अलगिरिस्वामी ने उन्हें बता दिया था। प्रतिवादी 27 से 33 10 वें प्रतिवादी के एल. आर. हैं जिन्हें दिनांक 29.4.1987 के आदेश के अनुसार आरोपित किया गया है। वादी ने पिछले मुकदमे की तरह अपने मामले को दोहराया है जिसे संक्षेप में यहाँ नीचे उल्लेख किया गया हैः

14. संपत्ति आर. लक्ष्मीया नायडू और उनके पूर्वजों की है।

भाई रंगास्वामी नायडू। लक्ष्मीया नायडू और उनके भाई रंगास्वामी नायडू ने संयुक्त हिंदू परिवार का गठन किया और वादी अनुसूची की संपत्ति संयुक्त संपत्ति थी। रंगास्वामी नायडू की 1955 में बिना किसी मुद्दे के और बिना किसी विभाजन के मृत्यु हो गई, इसलिए, एल. आर. एस. द्वारा सह-सदस्य वी. कल्याणस्वामी (डी) के रूप में रंगास्वामी नायडू की मृत्यु पर मुकदमा संपत्तियां।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

उनकी मृत्यु पर, जीवित सह-भागीदार लक्ष्मीया नायडू ने सभी संपत्तियों को ले लिया। कृष्णमाल, रंगस्वामी नायडू की विधवा थीं।

केवल उस तारीख को कानून के अनुसार सीमित ब्याज का हकदार है। हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम से पहले रंगास्वामी नायडू की मृत्यु के परिणामस्वरूप जीवित सह-खरीददारों ने उत्तरजीविता द्वारा सारी संपत्ति ले ली। संदर्भ था

1958 के O.S.No.71 में बनाया गया। ऐसा माना जाता है कि रंगस्वामी नायडू की मृत्यु के बाद ही वादी को वसीयत के बारे में पता चला। वसीयत को झूठा, तुच्छ और असमर्थनीय बताया गया है। यह माना जाता है कि कथित वसीयत को रंगास्वामी नायडू द्वारा प्रतिवादी 1 से 4 के अनुचित प्रभाव में निष्पादित किया गया था। कैंसर से पीड़ित रंगास्वामी नायडू की गंभीर बीमारी का लाभ उठाते हुए, प्रतिवादियों ने उन्हें उस वसीयत को निष्पादित करने के लिए मजबूर किया, जिसमें झूठे पाठ शामिल हैं। इच्छा वास्तविक नहीं है।

दस्तावेज़। यह हिंदू कानून के अनुसार भी असमर्थनीय है क्योंकि यह उस तारीख को था। सह-भागीदार द्वारा अपनी संपत्ति में अपने अविभाजित हित की कोई भी वसीयत अवैध और अमान्य है। यही कारण था कि अवैध इच्छा को बनाए रखने के लिए, मौखिक विभाजन के बारे में वसीयत में कुछ झूठे पाठ किए गए थे कि भाइयों के बीच मौखिक विभाजन था। पाठ को झूठा कहा जाता है और

निराधार है। रंगस्वामी नायडू की मृत्यु तक, भाइयों ने संयुक्त हिंदू परिवार का गठन किया और कोई विभाजन नहीं था और न ही कोई विभाजन था।

विभाजन। इसके बाद, मुकदमे का संदर्भ है जिसका हम पहले ही उल्लेख कर चुके हैं। फिर भी बाद में केवल पैरा 13 में निम्नलिखित आरोप लगाए गए। वह इस प्रकार हैः

" तेरहवीं। प्रतिवादी 1 से 4 पूरी तरह से जानते हुए कि संपत्ति में घुसने का उनका मिलीजुली प्रयास बुरी तरह विफल हो गया है, परेशानी और जटिलताएं पैदा करना शुरू कर दिया। हाल ही में उन्होंने गलत उद्देश्यों से अपने स्वयं के पक्षपातियों के पक्ष में सूट संपत्ति की कुछ वस्तुओं को व्यक्त करने का इरादा किया है। यह अच्छी तरह से जानते हुए कि प्रतिवादी 1 से 4 अपने स्वयं के पूर्व आचरण को देखते हुए वसीयत के आधार पर वाद संपत्तियों पर किसी भी अधिकार का दावा नहीं कर सकते हैं और इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि उक्त वसीयत अमान्य है और सक्रिय रूप से उनके पक्ष में काल्पनिक दस्तावेज हैं। वादी समझते हैं कि मुकदमे की संपत्ति की कुछ वस्तुओं को ए. अलगिरिसामी, प्रथम प्रतिवादी द्वारा प्रतिवादी 5 से 26 को बेच दिया गया है। वादी प्रस्तुत करते हैं कि. अमान्य और चालू हैं। ये वादी उक्त कार्यों के पक्षकार नहीं हैं और वे उक्त लेन-देन को नजरअंदाज करने के हकदार हैं।

यह आगे कहा गया है कि 1960 में, वादी ने अपनी संपत्तियों को अपने अधिकार में विभाजित किया है। वे संपत्तियों [2020] 9 एस. सी. आर. के लिए भुगतान कर रहे हैं।

पूरा समय। वे इस आधार पर कृषि आयकर का भुगतान कर रहे हैं कि संपत्तियां उनकी अपनी हैं।यह भी कहा गया है कि यह मानते हुए भी कि कृष्णम्मल ने अपने पति की मृत्यु पर उनके अविभाजित हिस्से में जीवन हित अर्जित किया जो

बाद में उनकी मृत्यु निर्वसीयत हो गई। उनके पति का हिस्सा जीवित रहने और उत्तराधिकार के आधार पर वादी 1 से 3 और उनके दिवंगत भाई रामास्वामी दोनों को वापस कर दिया गया था। यह आगे तर्क दिया जाता है कि वाद में दलीलों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, भले ही रंगस्वामी द्वारा निष्पादित वसीयत स्थायी हो, उसकी विधवा, कृष्णम्मल को वसीयत में उल्लिखित संपत्तियों के संबंध में जीवन ब्याज 1956 के अधिनियम 30 के आधार पर निरपेक्ष हो गया, जिसके परिणामस्वरूप कृष्णम्मल वाद संपत्ति सहित संपत्तियों का पूर्ण स्वामी बन गया।

15. विभाजन का दावा करने के संबंध में उप-न्यायालय, कोयम्बटूर के समक्ष दायर 1981 के ओ. एस. No.732 का उल्लेख करते हुए, यह तर्क दिया गया कि

आर. कृष्णम्मल ने उपखंड में ओ. एस. No.71/1958 में समझौता डिक्री के तहत वादी के पक्ष में वाद संपत्ति को अलग कर दिया।

अदालत, कोयम्बटूर, प्रतिवादी 1 से 4 उसी पर कोई दावा नहीं कर सकते हैं। 1963 के O.S.No.36 और 1981 के O.S.No.732 की कार्यवाही में प्रतिवादी 1 से 4 द्वारा उप-न्यायालय में इसे स्वीकार किया गया था।

कोयंबटूर।

16. वादी ने अधिकार की घोषणा की मांग की और निषेधाज्ञा के लिए भी प्रार्थना की। यह इस आधार पर है कि वे कब्जे में थे और अन्य प्रतिवादियों के पक्ष में बिक्री विलेख को निष्पादित करने में पहले प्रतिवादी (ए. अलगिरिस्वामी) की कार्रवाई बिना किसी अधिकार के थी और वे थे

वादियों के कब्जे को बाधित करने का प्रयास।

17. 1983 का ओएस No.89 आर. अलगिरिस्वामी द्वारा अपीलकर्ता पक्ष द्वारा दायर किया गया दूसरा मुकदमा है जो वसीयतकर्ताओं में से एक है (ओएस में वादी भी है)।1981 का आई. डी. 1) और वसीयत के तहत प्रतिवादियों 1 से 3 को अन्य उत्तराधिकारियों के रूप में दिखाते हुए, प्रतिवादियों 4 से 11 ने लक्ष्मीया नायडू की शाखा का प्रतिनिधित्व किया और प्रतिवादियों 13 से 33 ने पहले से ही खरीदार थे।

प्रतिवादी। उक्त मुकदमे में मांगी गई राहत शिकायत के विभाजन के लिए थी

अनुसूची संपत्ति। वादी ने अपने अधिकार की घोषणा के अलावा मुआवजे, लाभ की भी मांग की। संक्षेप में, मामला इस प्रकार हैः

वादी ने अपने चाचा द्वारा निष्पादित वसीयत का उल्लेख किया। उन्होंने आगे मुकदमे को इस तथ्य पर आधारित किया कि आर. कृष्णम्मल की मृत्यु 30.04.1977 पर हुई थी। यह अनुमान लगाया गया था कि R.Krishnammal की मृत्यु पर वादी और प्रतिवादी 1 से 3 को समान अधिकार है।

ये संपत्तियाँ एल. आर. एस. द्वारा वी. कल्याणस्वामी (डी) में हैं। & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. द्वारा। & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

प्रतिवादियों के कब्जे में 4 से 6 जो लक्ष्मीया नायडू के पुत्र थे। 1985 के O.S.No.649 का संदर्भ दिया गया है और यह बताया गया है कि उक्त मुकदमा बनाए रखने योग्य नहीं है। लक्ष्मीया नायडू और उनके बीच संपत्तियों के मौखिक विभाजन का संदर्भ है।

1932 में रंगास्वामी नायडू। सी. आर. पी. सी. की धारा 145 के तहत कार्यवाही का और संदर्भ है। बाद में 1958 के ओ. एस. No.71 का संदर्भ दिया गया है। यह माना गया कि उक्त मुकदमे में डिक्री अमान्य थी। वसीयत के तहत, R.Krishnammal को केवल अपने जीवनकाल के दौरान संपत्ति का आनंद लेने का अधिकार था। वादी और प्रतिवादी 1 से 3 पक्षकार नहीं थे और डिक्री उन्हें बाध्य नहीं करेगी। इसके बाद, आर. कृष्णम्मल ने अपने कब्जे में उपरोक्त संपत्ति को बेचने की कोशिश की। इसके बाद, 1963 का O.S.No.36 था बिक्री पर आपत्ति दर्ज की। समझौते का उल्लेख है। यह उनका मामला है कि प्रतिवादी 4 से 11 जो पक्षकारों के रूप में शामिल हुए हैं

उस मामले में समझौते का समर्थन किया है जिसका अर्थ है कि यह माना जाना चाहिए कि उन्होंने वसीयत को स्वीकार कर लिया है। लिखित बयान दायर किए गए थे जिसमें जहां तक प्रत्यर्थियों का संबंध था; उन्होंने वही रुख स्वीकार किया जैसा कि मुकदमे में वाद में था।

उनके द्वारा प्रस्तुत किया गया।

दोनों सूट एक साथ आज़माए गए थे। ए. एल. से ए 117 तक को 1985 के O.S.No.649 में वादी की ओर से पेश किया गया था। अभियुक्त पक्ष में, जो 1983 के ओएस No.89 में वादी थे, बी1 से बी18 को चिह्नित किया गया था। निचली अदालत ने 1985 के O.S.No.649 को प्रमुख मामले के रूप में माना। सी1 को एक्स 1 के साथ कोर्ट प्रदर्शनी के रूप में चिह्नित किया गया है जो पंजीयक के कार्यालय में फिंगर प्रिंट रजिस्टर है। दिनांक 12.08.1989 के निर्णय द्वारा विद्वत अतिरिक्त उप न्यायाधीश ने 1983 के O. S. No.89 को लागत के साथ खारिज करने के लिए आगे बढ़े, जबकि 1985 के O.S.No.649 को लागत के साथ निर्धारित किया गया था।

18. निचली अदालत ने मुद्दे तैयार करने के बाद निष्कर्ष निकाला कि जिस मामले में रंगास्वामी नायडू और उनके भाई ने मौखिक रूप से विभाजन किया था

वर्ष 1932 में संपत्तियों को स्वीकार नहीं किया जा सका। यह आगे पाया जाता हैयह कि रंगास्वामी नायडू द्वारा स्थापित 'आईडी1' दिनांकित वसीयत इस कारण से अमान्य थी कि उक्त तिथि पर, हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 जिसमें धारा 30 शामिल थी, तब से लागू नहीं हुआ था जब से रंगास्वामी नायडू अपने भाई और हिंदू अविभाजित के साथ संयुक्त थे।

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम से पहले कानून के तहत परिवार को बाधित नहीं किया गया था। यह भी पाया गया है कि वसीयत कई संदिग्ध लोगों से पीड़ित थी परिस्थितियाँ। हालाँकि वसीयत पर लक्ष्मीया नायडू के कानूनी उत्तराधिकारियों द्वारा इस आधार पर हमला किया गया था कि इसे जबरदस्ती और [2020] 9 एस. सी. आर. द्वारा प्राप्त किया गया था।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

अनुचित प्रभाव, उक्त तर्कों को स्वीकार नहीं किया गया। निचली अदालत ने यह भी पाया कि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 14 (1) को ध्यान में रखते हुए कृष्णम्मल के पक्ष में वसीयत के आधार पर कार्यवाही करते हुए भी जीवन संपदा कृष्णम्मल के पक्ष में पूर्ण अधिकारों में विकसित हो गई। जिसका अर्थ था कि अपीलार्थियों द्वारा स्थापित किया गया मामला कि उनके पास शेष था, स्वीकार नहीं किया जा सका। अपीलार्थियों द्वारा दायर किया गया मुकदमा आया

खारिज कर दिया गया जबकि लक्ष्मीया नायडू के कानूनी उत्तराधिकारियों द्वारा दायर मुकदमे पर फैसला सुनाया गया। अपीलों में, प्रथम अपीलीय न्यायालय ने निचली अदालत से सहमति व्यक्त की कि कोई मौखिक विभाजन नहीं था जैसा कि दोनों के बीच दावा किया गया था।

रंगास्वामी नायडू और लक्ष्मीया नायडू। हालाँकि, अदालत ने पाया कि समाचार पत्र में 10.5.1955 पर किए गए प्रकाशन को ध्यान में रखते हुए, हिंदू अविभाजित परिवार की स्थिति में व्यवधान आया था। यह.

इसका मतलब था कि वसीयत वैध रूप से रंगस्वामी नायडू द्वारा बनाई गई थी। अपीलीय न्यायालय को संदिग्ध परिस्थितियों की उपस्थिति के संबंध में विचारण न्यायालय के निष्कर्षों में योग्यता नहीं मिली। के निष्कर्ष को उलटना

निचली अदालत, अपीलीय अदालत ने पाया कि वसीयत के तहत बनाई गई प्रतिबंधित संपत्ति को ध्यान में रखते हुए, यह हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 14 (2) है न कि धारा 14 (1) जो लागू होगी। प्रथम अपीलीय न्यायालय ने पाया कि यह साक्ष्य अधिनियम की धारा 69 है जो मामले के तथ्यों में लागू होगी न कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 68 में। दूसरे शब्दों में, यह पाया गया कि प्रेजेंट एक ऐसा मामला था जिसमें वसीयत के दोनों प्रमाणक गवाह मर चुके थे। बी–7 प्रमाणक गवाहों के बयान की एक प्रति थी। धारा 69 के तहत जो आवश्यक है वह साबित हो गया। इसके अलावा, प्रथम अपीलीय न्यायालय ने इस तथ्य पर ध्यान दिया कि वसीयत पंजीकृत की गई थी और वसीयत के तहत नियुक्त निष्पादक, उनकी पत्नी कृष्णम्मल का भतीजा था और इसने फिर से इंगित किया कि वसीयत के निर्माण के मामले में उनकी कोई गलती नहीं थी। प्रदर्शनी (सी–1) वसीयत का मूल प्रस्तुत करने के निर्देश के जवाब में निष्पादक के बेटे द्वारा दायर एक शपथ पत्र था। प्रथम अपीलीय न्यायालय ने पाया कि मूल वसीयत, वास्तव में, धारा 145 के तहत कार्यवाही में मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश की गई थी और इसके लिए द्वितीयक साक्ष्य का अंकन किया गया था।वास्तव में वसीयत को विचारण न्यायालय और प्रथम अपीलीय न्यायालय दोनों द्वारा उचित पाया गया था। इन साक्ष्यों के आधार पर, प्रथम अपीलीय न्यायालय ने अपीलार्थियों द्वारा दायर अपीलों को स्वीकार कर लिया और 1963 की ओ. एस. संख्या 36 का आदेश दिया और संपत्ति को विभाजित करके विभाजन का आदेश दिया।

चार भाग। प्रत्यर्थियों द्वारा दायर मुकदमा खारिज कर दिया गया।

19. उच्च न्यायालय ने विवादित फैसले द्वारा दूसरी अपील में पाया है कि वसीयत पर भरोसा नहीं किया जा सकता है, क्योंकि साक्ष्य अधिनियम की धारा 68 के तहत आवश्यकता पूरी नहीं हुई थी।

(बी–7) निक्षेपण वी. कल्याणस्वामी (डी) एल. आर. एस. द्वारा। & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 14 (1) लागू हुई। यह इस आधार पर है कि रणगासामी नायडू की पत्नी आर. कृष्णम्मल के पास एक पूर्व–अस्तित्व था।रखरखाव का अधिकार। इसलिए धारा 14 (2) लागू नहीं होगी। कृष्णम्मल के भरण–पोषण के उनके पूर्व–विद्यमान अधिकार के संदर्भ में वसीयत की सराहना की गई थी। इसने धारा 14 (1) के तहत उनकी सीमित संपत्ति का विस्तार किया। उक्त निष्कर्षों और विवादित फैसले के तहत निचली अदालत के फैसले की बहाली के आधार पर, अपील दायर की जाती है।

हमें।

मुद्दों और अंत पर एक करीबी नज़र

ट्रायल कोर्ट 20. निचली अदालत ने 1985 के आई. डी. 1 में 14 मुद्दे और एक अतिरिक्त मुद्दा तैयार किया। 1983 के ओएस 89 में ट्रायल कोर्ट ने 3 मुद्दे और एक अतिरिक्त मुद्दा तैयार किया। निचली अदालत ने 1983 के आई. डी. 1 में मुद्दे संख्या 1 का जवाब दिया, जिसमें कहा गया था कि क्या कोई मौखिक विभाजन था जैसा कि अपीलार्थी ने रंगास्वामी नायडू और लक्ष्मीया नायडू के बीच दावा किया थाः

विभाजन। बी1 नोटिस को दिनांकित 12.5.1955 पत्र के रूप में संदर्भित किया जाता है। यह आगे पाया गया कि लक्ष्मीया नायडू द्वारा कथित रूप से 11.5.1955 दिनांकित भेजा गया नोटिस वादी या प्रतिवादियों द्वारा प्रस्तुत नहीं किया गया था, हालांकि निचली अदालत ने धारा 145 में प्रस्तुत B43 का उल्लेख किया था। कार्यवाही। समान रूप से, आई. डी. 1 दिनांकित नोटिस जिसे कथित रूप से रंगास्वामी नायडू द्वारा भेजा गया था, उसे भी पेश नहीं किया गया था, भले ही यह उल्लेख किया गया हो कि बी. 44 को धारा 145 की कार्यवाही में पेश किया गया था। न्यायालय ने भगवंत पी. सुलाखे बनाम के मामले का भी उल्लेख किया। दिगंबर गोपाल सुलाखे 1. इसने इस तर्क को भी नोट किया कि वसीयत द्वारा एक विभाजन था। यह पता चलता है कि हालांकि पीडब्लू1 ने कहा है कि रंगास्वामी नायडू ने अलग से संपत्ति शुल्क विवरणी दाखिल की है और अलग से आयकर का भुगतान कर रहे थे और उनका अलग बैंक खाता था, ए 13 से ए 15 दस्तावेजों से पता चलता है कि लेन–देन किए गए थे जिससे पता चलता है कि हिंदू अविभाजित परिवार जिसमें सह–भागीदार शामिल थे, 1932 के बाद भी संयुक्त रूप से जारी रहे। यह ध्यान देने के बावजूद है कि अलग था

रंगास्वामी नायडू द्वारा संपत्ति का अधिग्रहण B3 से B5 द्वारा स्थापित। इन संपत्तियों को पैतृक माना जाता है।

1 आकाशवाणी 1986 एससी 79 [2020] 9 एससीआर

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

और अंत में अदालत ने उत्तरदाताओं के पक्ष में मुद्दा संख्या 2 का जवाब देते हुए कहा कि वर्ष में कोई मौखिक विभाजन नहीं था।

1932 .

मुद्दा नं. 1 जो यह था कि क्या 12.5.1955 दिनांकित वसीयत रंगा सामी नायडू द्वारा लिखी गई थी और वैध और वास्तविक थी और क्या

वसीयत को उनकी मृत्यु के बाद निष्पादित किया गया था, जिसका उत्तर इस प्रकार दिया गया हैः

निचली अदालत ने पाया कि मूल वसीयत को धारा 145 के तहत कार्यवाही में मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया गया था क्योंकि बी68 को अस्वीकार करते हुए प्रदर्शित किया गया था

प्रत्यर्थियों का यह तर्क कि मूल वसीयत मजिस्ट्रेट के समक्ष भी पेश नहीं की गई थी। ट्रायल कोर्ट आगे वसीयत के निष्पादक के बेटे को वसीयत पेश करने के लिए सी1 नोटिस का उल्लेख करता है। यह बेटे द्वारा दायर हलफनामे पर भी विचार करता है कि उसके पास वसीयत नहीं थी और पता चलता है कि वसीयत की प्रति को बी10 के रूप में चिह्नित किया गया था। इसके बाद निचली अदालत ने इस बात पर विचार किया कि वसीयत कितनी वास्तविक है और क्या बी7 पर भरोसा किया जा सकता है। बी7 वेंकटस्वामी नायडू द्वारा दिया गया बयान है जो कथित रूप से वसीयत की तारीख 10.05.1955 को प्रमाणित करने वाले गवाहों में से एक थे। यह बयान उन्होंने सीआरपीसी की धारा 145 के तहत कार्यवाही में दिया था। निचली अदालत ने उसके साक्ष्य पर चर्चा की। इसने पाया कि उक्त साक्ष्य (बी7) में प्रमाणक गवाह ने दूसरे गवाह द्वारा प्रमाणन के बारे में नहीं कहा है। उन्होंने गवाही दी है कि दूसरा गवाह पंजीयक के सामने आया और चला गया।आ गया। वसीयत पहले से ही टाइप की जा चुकी थी। यह नहीं बताया गया है कि वसीयत किसने तैयार की है। गवाह ने बी7 में यह बयान नहीं दिया है कि वसीयतकर्ता था

कुछ हिस्सों को स्याही में लिखा जाएगा। वसीयत के अंत में उनका उल्लेख नहीं किया जाता है। वसीयत का मूल भी प्रस्तुत नहीं किया गया था। इससे गहरा संदेह पैदा हुआ। अदालत ने यह विचार केवल इसलिए लिया क्योंकि पी. डब्ल्यू. 1 ने अपने पिछले लेख में ऐसा किया था। धारा 145 के तहत कार्यवाही में बयान में कहा गया है कि रंगस्वामी नायडू के हस्ताक्षर वसीयत के सभी पृष्ठों में थे, यह नहीं समझा जा सका कि प्रतिवादी ने वसीयत को वास्तविक के रूप में स्वीकार किया था। अपीलार्थियों का मामला कि दूसरा प्रमाणित करने वाला गवाह, जो डॉक्टर और एक पारिवारिक मित्र था, अपना नाम नहीं देता यदि वसीयत गढ़ी गई थी और बी12 दूसरे प्रमाणित करने वाले गवाह की मृत्यु पर परिवार द्वारा जारी एक विज्ञापन था, यानी डॉक्टर ने भी अदालत में अपील नहीं की और यह निष्कर्ष निकाला कि वसीयत वास्तविक नहीं थी। अदालत ने पैराग्राफ 32 में यह भी नोटिस दिया कि वसीयतकर्ता की 5 बहनें थीं जिनमें से एक बहन को कोई समस्या नहीं थी।

4 अन्य बहनों के पास एल. आर. एस. द्वारा पुरुष वी. कल्याणस्वामी (डी) था। & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

तदनुसार उत्तर दिया गया। यह भी पाया गया है कि चूंकि यह साबित नहीं हुआ था कि विभाजन हुआ था, इसलिए वसीयत अमान्य होगी। नन्नी बाई और अन्य बनाम मामले में इस न्यायालय का निर्णय। गीता बाई 2 और भगवंत पी. सुलाखे बनामदिगंबर गोपाल सुलाखे और अन्य। (सुप्रा) को विज्ञापित किया गया था। तदनुसार मुद्दा संख्या 1 का उत्तर दिया गया। निष्कर्ष यह था कि वसीयत वास्तविक नहीं थी और यह वैध नहीं थी।

21. अंक संख्या 3 यह था कि क्या लक्ष्मीया नायडू को विरासत में मिला था

उत्तरजीविता द्वारा संपत्ति। पता चला कि रंगास्वामी नायडू की मृत्यु हो गई थी

बिना वसीयत छोड़े, लेकिन वह अपनी विधवा आर. कृष्णम्मल से बच गए। आर. कृष्णम्मल के पास रंगस्वामी नायडू की संपत्ति के आधे हिस्से में रखरखाव का अधिकार था। उन्हें हिंदू महिला संपत्ति अधिकार अधिनियम, 1937 के तहत अधिकार प्राप्त था। इसलिए निचली अदालत ने प्रतिवादियों के खिलाफ और अपीलार्थियों के पक्ष में इस मुद्दे का जवाब दिया। इसका मतलब यह है कि निचली अदालत का निष्कर्ष यह है कि प्रतिवादी महिला संपत्ति का अधिकार अधिनियम, 1937 को शामिल करने के आधार पर अपने स्वयं के अधिकार में वादी अनुसूचित संपत्ति के हकदार नहीं हैं। इसलिए निचली अदालत ने प्रतिवादी के खिलाफ मुद्दे का जवाब दिया और लक्ष्मीया नायडू के पक्ष में हिंदू कानून के तहत उनके भाई रंगास्वामी नायडू की मृत्यु पर एकमात्र जीवित व्यक्ति होने के नाते पूरी तरह से हकदार बन गए।

धारा 145 सी. आर. पी. सी. के तहत। इस मुद्दे का जवाब अपीलार्थियों के पक्ष में यह कहते हुए दिया गया था कि उन्हें पक्षकार नहीं बनाया गया था और आदेश नहीं होगाउन्हें बांधें।

23. मुद्दा संख्या 5 यह था कि क्या 1958 के ओएस No.71 में डिक्री धोखेबाज, अमान्य थी और क्या यह वादी (1983 के ओएस No.89 में वादी) को बाध्य करती है। इस प्रश्न का उत्तर इस प्रकार दिया गयाः

यह पाया गया कि 1958 के ओएस No.71 में ए 2 डिक्री के परिणामस्वरूप आर. कृष्णम्मल विधवा को पूर्ण अधिकार प्रदान किया गया।

उक्त वाद में 1 से 7 तक की वस्तुओं के संबंध में। यह पाया गया कि किसी भी धोखाधड़ी का कोई सबूत नहीं था। यह आगे पाया गया कि 1963 (ए 3) के ओएस No.36 में उनके द्वारा दायर लिखित बयान में

आर. कृष्णम्मल (ए 4) ने कहा कि समझौता उनकी इच्छा के अनुसार था। इस प्रकार अपीलार्थियों के खिलाफ इस मुद्दे का जवाब दिया गया।

2 आकाशवाणी 1958 एससी 706 [2020] 9 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

24. इसके बाद निचली अदालत ने 1983 के ओएस No.89 में मुद्दा संख्या 6 और अतिरिक्त मुद्दा संख्या 1 पर विचार किया। प्रश्न संख्या 6 का उत्तर देना जो था

क्या 1963 के ओ. एस. No.36 में डिक्री रेज़ जुडिकाटा का गठन करेगी, यह पाया गया कि रेज़ जुडिकाटा का कोई प्रतिबंध शामिल नहीं है क्योंकि मुकदमे से समझौता किया गया था। अतिरिक्त मुद्दे के संबंध में, जो यह था कि क्या 1963 के ओ. एस. No.36 को दायर करने के कारण, सी. पी. सी. के आदेश ।। नियम 2 के तहत बार आकर्षित हुआ और 1983 के ओ. एस. No.89 को दाखिल करने पर रोक लगा दी, अदालत ने पाया कि 1963 के ओ. एस. No.36 में निर्धारित संपत्ति के अलावा अन्य संपत्ति के संबंध में नया मुकदमा दायर करने का अधिकार सुरक्षित रखने के लिए अदालत से अनुमति नहीं मांगी गई थी। वादी ने कार्रवाई की थी

मामले में एकतरफा। न्यायालय ने पाया कि आदेश ।। के तहत प्रतिबंध नियम 2 आकर्षित हुआ।

25. मुद्दा संख्या 7 जो यह था कि क्या प्रतिवादी संख्या 1 (ए. अलगिरिस्वामी) द्वारा स्थापित मामला था कि उसके बीच मौखिक विभाजन था

और वादी और प्रतिवादी 2 और 3, प्रतिवादी संख्या 1 के खिलाफ इसका जवाब दिया गया और यह पाया गया कि ऐसा विभाजन साबित नहीं हुआ था। 26. गैर–जॉइंडर, मिसजॉइंडर से संबंधित मुद्दा संख्या 8 और 10 और क्या 1983 के ओएस No.83 में प्रतिवादी 13 से 34 आवश्यक पक्षकार थे

यह पाते हुए जवाब दिया कि कोई गलत या गैर–सहयोगी नहीं था और इस बात का कोई सबूत नहीं था कि कोई अनावश्यक पार्टी थी। (इसे होना ही चाहिए। इस संबंध में याद रखा जाए कि प्रतिवादी 13 से 34 की प्रासंगिकता यह है कि वे ऐसे व्यक्ति हैं जिन्हें कथित मौखिक विभाजन के आधार पर पहले प्रतिवादी द्वारा वादी अनुसूचित संपत्ति का हिस्सा हस्तांतरित किया गया था)।

27. इस मुद्दे से संबद्ध मुद्दा No.12 था जो यह था कि क्या प्रतिवादी 13 से 34 किसी भी न्यायसंगत राहत के हकदार थे। इस मुद्दे का जवाब प्रतिवादियों के खिलाफ 13 से 34 तक दिया गया था।

28. मुद्दा No.11 और 13 इस मुद्दे के सहायक प्रश्नों से संबंधित है कि क्या वादी को संपत्ति में अधिकार और विभाजन का अधिकार था। दोनों मुद्दों का जवाब वादी के खिलाफ दिया गया था। फिर न्यायालय ने 1985 के ओएस No.649 में मुद्दा संख्या 1 पर विचार किया। मुद्दा यह था कि क्या आर. कृष्णम्मल का राज्य द्वारा शासित संपत्ति पर पूर्ण अधिकार था।

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के आधार पर। न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि आर. कृष्णम्मल का अधिकार अधिनियम की धारा 14 (1) के तहत निरपेक्ष हो गया।

29. आखिरकार, अदालत ने 1985 के ओएस No.649 में इस मुद्दे को उठाया।

जो यह था कि क्या उसमें वादी राहत के हकदार थे, जैसा कि वाद में अनुरोध किया गया था और क्या वे निषेधाज्ञा के हकदार थे।

न्यायालय वी. कल्याणस्वामी (डी) बायल्स। & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

यह पाया गया कि वाद अनुसूची संपत्ति पैतृक संपत्ति थी। वादी लक्ष्मीया नायडू के कानूनी उत्तराधिकारी थे और रंगस्वामी नायडू की मृत्यु पर वे 1958 के ओएस No.71 में पारित समझौते के आदेश के आधार पर हकदार बन गए।

आर. कृष्णम्मल ने अपना अधिकार छोड़ दिया। 1985 के ओएस No.649 को घोषित किया गया और 1983 के ओएस No.89 को खारिज कर दिया गया।

प्रथम अपील न्यायालय से पहले की प्रक्रियाएँ30. आम फैसले के खिलाफ चार पहली अपील दायर की गई थीं –

1989 का AS No.194 वादी द्वारा 1989 के OS No.89 में दायर किया गया था, 1989 का AS No.195 उसी व्यक्ति आर. अलगिरिस्वामी द्वारा दायर किया गया था, लेकिन 1985 के OS No.649 में प्रतिवादी के रूप में उक्त मुकदमे में डिक्री को चुनौती दी गई थी। 1992 का ए. एस. No.320 एक वी. कल्याणस्वामी द्वारा दायर किया गया था जो

1985 के ओएस No.649 में प्रतिवादी संख्या 2 ने डिक्री को चुनौती दी। वी. कल्याणस्वामी 1992 के ए. एस. No.225 में भी अपीलकर्ता हैं, जिन्होंने 1983 के ओ. एस. No.89 के फैसले को चुनौती दी, जिसमें वे प्रतिवादी संख्या 2 थे (यह ध्यान दिया जाए कि 1983 के ओ. एस. No.89 में प्रतिवादी डी. 13 से डी. 34 सहित किसी भी अन्य प्रतिवादी द्वारा कोई अपील दायर नहीं की गई थी) जो 1985 के ओ. एस. No.689 में भी प्रतिवादी थे।

प्रथम अपील न्यायालय का अंत

एकतरफा रूप से एच. यू. एफ. के हिस्से की कुछ संपत्तियों का आवंटन किया गया और विस्तृत वसीयत लिखी गई जैसा कि बाद में समझाया जाएगा। अदालत ने तब फैसला सुनाया कि वह तमिलनाडु विधान परिषद के सदस्य थे। 1944 और 1958 के बीच उनके और उनके भाई के पास कई संपत्तियां थीं। पीडब्लू1 ने स्वीकार किया कि इसके अलावा परिवार ने 1000 एकड़ जमीन खरीदी है। रंगास्वामी नायडू की बहनें सामान्य जीवन जी रही थीं। उन्हें अपनी बहनों से बहुत लगाव था। वह अपनी बहन–अम्मानी अम्मल के आवासीय बंगले में रह रहा था। उन्होंने अपनी बहन में से एक–एक बेटे को चुना। एक मिल के शेयर उनके भाई को दिए गए थे। उनकी पत्नी के भतीजे को निष्पादक के रूप में चुनने पर भी विचार किया गया। अदालत ने वसीयत की पंजीकृत प्रति की स्वीकृति को गौण साक्ष्य के रूप में पाया" बिल्कुल सही "। बी7 निक्षेपण और [2020] 9 एस. सी. आर. की धारा 69 पर भरोसा करना।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

साक्ष्य अधिनियम, यह पाया गया कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 69 की आवश्यकताओं को पूरा किया गया था। पंजीकरण ने सभी संदेहों को दूर कर दिया। तथ्य यह है कि आर 1 वसीयतकर्ता ने निशान की छाप लगाने से

इनकार कर दिया और हस्ताक्षर करने पर जोर दिया, यह दिखाने के लिए भी भरोसा किया गया कि उनके पास अच्छी निपटान क्षमता थी। निचली अदालत द्वारा नोट की गई संदिग्ध परिस्थितियाँ नहीं थीं

अदालत में इस तरह की अपील करें। बी10 वसीयत असली पाई गई। यह साबित करने का बोझ कि वसीयत जबरदस्ती और अनुचित प्रभाव से प्राप्त की गई थी, उत्तरदाताओं द्वारा पूरी नहीं की गई थी। अदालत ने पाया कि बी1 ने स्थिति में विभाजन पैदा किया था। यह पता चलता है कि बी1 को रंगस्वामी नायडू द्वारा 10.5.1955 पर प्रकाशित किया गया था। लक्ष्मीया नायडू ने बी1 को अस्वीकार करते हुए 11.05.1955 पर रंगास्वामी नायडू को एक पत्र लिखा और कहा कि रंगास्वामी नायडू अभी भी एचयूएफ के सदस्य के रूप में बने हुए हैं। रंगस्वामी नाडु ने 16.05.1955 पर बी1 की पुष्टि करते हुए एक उत्तर पत्र भेजा। उन्हें बी43 के रूप में चिह्नित किया गया था और बी44 धारा 145 कार्यवाही है। उत्तरदाताओं के इस तर्क को खारिज करते हुए कि इस बारे में कोई मुद्दा नहीं उठाया गया था कि क्या विभाजन को बी1 अखबार के बयान के माध्यम से प्रभावित किया गया था।

उत्तरदाताओं को इस तर्क के संबंध में आश्चर्य नहीं हुआ कि यह नहीं था अविभाजित परिवार के किसी सदस्य को एकतरफा रूप से अपने हिस्से के लिए संपत्ति आवंटित करने का अधिकार है, जैसा कि रंगस्वामी नायडू ने किया था। इसे निम्नानुसार अयोग्य और समर्थित पाया गयाः

उत्तरदाताओं ने एकतरफा संबंध में कोई आपत्ति नहीं जताई

संपत्तियों का केवल एक छोटा सा हिस्सा। अदालत ने पाया कि "यह हो सकता है इसे पूरी तरह से अनुचित न समझें। " अदालत ने गौर किया कि

निर्णय

अदालत

में

में से

यह

भगवंत

पी. सुलाखे मामला (ऊपर)। इससे यह मानते हुए निपटा गया कि

एक ऐसा मामला था जहाँ साझेदारी की समस्या थी और यह था

तो तय किया। रंगस्वामी नायडू का दिनांकित पत्र 16.05.1955

जिस पर उन्होंने बी1 विज्ञापन की पुष्टि की थी और उस पर भरोसा किया गया था

यह पाया गया कि यह एक एकतरफा काय के रूप में मानने में असमर्थ था

घोषणा की और यह निर्णय लेने के लिए कि यह अधिनियम परिवर्तन नहीं करता है

संपत्तियों का संयुक्त पारिवारिक चरित्र। यह कहा गया है कि

समस्या यह है कि यह तय किया जाता है कि बी1 ने स्थिति में एक विभाजन बनाया।

भले ही रंगास्वामी नायडू ने एकतरफा आवंटन किया, लक्ष्मीया नायडू और उनके बेटों ने एल. आर. एस. द्वारा वी. कल्याणस्वामी (डी) में एकतरफा आवंटन को स्वीकार कर लिया।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

उनके बाद के आचरण और इसलिए वसीयत को चुनौती देने के हकदार नहीं हैं।

32. 1963 के ओएस No.36 में अपीलार्थियों के आचरण के आधार पर अपीलार्थियों के खिलाफ विरोध का तर्क उठाया गया

आर. कृष्णम्मलिन आइटम संख्या 1,4 और 7 का पूर्ण शीर्षक बिना योग्यता के पाया गया। इसने पाया कि आइटम 1,3 और 4 आर. कृष्णम्मल द्वारा प्रतिवादी 5 और 6 को कथित मुकदमे में बेचे गए आइटम थे। मद संख्या 7 सरकार द्वारा अधिग्रहित भूमि थी। यह पाया गया कि यह खुलासा करने के लिए कोई सबूत नहीं था कि किस आधार पर प्रतिवादियों 1 से 4 ने सरकार द्वारा बेची गई संपत्तियों और अधिग्रहित वस्तु के संबंध में समझौता किया है। यह आगे पाया गया कि समझौता बेची गई और अर्जित वस्तुओं के संबंध में था और यहां तक कि अदालत भी इस स्थिति को अपीलार्थियों के खिलाफ कार्रवाई के रूप में तय नहीं कर सकती है। इसके बाद, न्यायालय ने पाया कि बी10 वसीयत में, संपत्तियों की 19 वस्तुओं का उल्लेख किया गया है। 1 से 7 तक की वस्तुएँ जिन्हें समझौता डिक्री के तहत पूर्ण शीर्षक दिया गया था, उन्हें 1963 के ओएस नंबर 36 में सूट गुणों के रूप में निर्धारित किया गया था। उत्तरदाताओं का यह तर्क कि जैसा कि अपीलकर्ताओं ने स्वीकार किया था कि आई. डी. 1 ने 1958 के ओ. एस. संख्या 71 में अन्य संपत्ति में अपने अधिकार को छोड़ दिया है, उन संपत्तियों को 1963 के ओ. एस. संख्या 36 में निर्धारित नहीं किया गया था और आदेश II नियम 2 का बार लागू होगा, को खारिज कर दिया गया था। न्यायालय ने पाया कि 1963 के ओएस संख्या 36 में वादी ने अधिकार सुरक्षित रखा था। दूसरा, आर. कृष्णम्मल की 1963 में हुई मृत्यु, जो 1977 में हुई थी, के संबंध में आदेश II का प्रतिबंध, नियम 2 लागू नहीं होगा। यह पाया गया कि आदेश II नियम 2 लागू नहीं हो सकता है, क्योंकि 1963 में वादी के पास वह अधिकार नहीं था जो वसीयत के तहत पूर्ण मालिकों के रूप में R.Krishnammal की मृत्यु पर ही उन्हें (वसीयतकर्ताओं) प्राप्त हुआ था। यह भी पाया गया कि 1963 के ओएस नंबर 36 में डिक्री ने 1958 के ओएस नंबर 71 में समझौता डिक्री को और कमजोर कर दिया, जिसमें आर. कृष्णम्मल को आइटम 1 से 7 में पूर्ण शीर्षक प्रदान किया गया था। 1963 के ओएस नंबर 36 में डिक्री के तहत लक्ष्मीया नायडू के बेटों को पक्षकारों के रूप में शामिल किया गया था। उन्होंने एक वकील नियुक्त किया था। अधिवक्ता ने समझौते के आदेश का संयुक्त समर्थन किया है। 1963 के ओएस नंबर 36 में डिक्री के तहत, आइटम 5 और 6 पर अधिकार R.Krishnammal के पक्ष में जीवन ब्याज आरक्षित करने के रूप में था और यह उत्तरदाताओं के खिलाफ पाया गया था। इस प्रकार, वसीयत के तहत एक अधिकार पक्षों के आचरण द्वारा प्रदान किया गया था। के बारे में

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 14 के विवाद में, यह पाया गया कि R.Krishnammal ने 1958 के OS No.71 में केवल वैकल्पिक राहत के रूप में धारा 14 (1) के तहत अधिकार के लिए प्रार्थना की थी। अदालत ने

पाया कि वह यह तय करने में असमर्थ है कि [2020] 9 एस. सी. आर. के ओएस नंबर 71 में R.Krishnammal को दिया गया पूर्ण अधिकार है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

1958 धारा 14 (1) के तहत उसके अधिकार के अनुसार दिया गया था और यदि ऐसा होता तो अपीलार्थियों को पक्षकार बनाया जाना चाहिए था और वसीयत के निष्पादक को दोषमुक्त नहीं किया जाना चाहिए था। यह पाया गया कि आर. कृष्णम्मल का धारा 14 (1) के तहत पूर्ण अधिकार प्राप्त करने का कोई इरादा नहीं था। यह भी पाया गया कि प्रत्यर्थियों का आचरण इस तरह से था कि उन्हें संपत्ति में अपना हिस्सा नहीं मिलना चाहिए। लक्ष्मीया नायडू और उनके बेटों ने अपने कब्जे में संपत्ति को रोकने के लिए धारा 145 के तहत कार्यवाही की। 1958 के ओएस नंबर 71 में उन्होंने समझौते के लिए 1 से 7 आइटम दिए। R.Krishnammal, यह आयोजित किया गया था, जीवन भर के लिए उसकी संपत्ति को स्वीकार किया क्योंकि कुछ भी कुछ भी नहीं से बेहतर था। यह उल्लेखनीय पाया गया कि 1958 के ओएस नंबर 71 में, यह खुले तौर पर नहीं कहा गया था

आर. कृष्णम्मल ने कहा कि धारा 14 (1) के तहत उनका अधिकार था और उन्होंने उसमें आइटम 1 से 7 को छोड़कर सभी संपत्तियों को छोड़ दिया है। 1963 के ओएस नंबर 36 में समझौता डिक्री से पता चला कि पक्ष वसीयत का पालन करने का इरादा रखते थे, जैसा कि 1958 के ओएस नंबर 71 में समझौता डिक्री को कमजोर करके उनके द्वारा वस्तुओं में जीवन ब्याज देने से देखा जा सकता है। तदनुसार 1989 की अपील सं. 195 और अपील सं. 20 1989 की अनुमति दी गई थी। 1985 के ओएस नंबर 649 को खारिज कर दिया गया था। अपील सं। 1989 के ए. एस. सं. 194,1992 के ए. एस. सं. 225 को भी 1983 के ओ. एस. सं. 89 में निर्णय को दरकिनार करते हुए अनुमति दी गई थी, उक्त वाद का आदेश दिया गया था। यह आदेश दिया गया था कि योजना ।। संपत्तियों को 4 बराबर शेयरों में विभाजित किया जाना चाहिए और वादी को एक हिस्सा आवंटित किया जाना चाहिए। विभाजन के लिए एक प्रारंभिक आदेश पारित किया गया था और आदेश 20 नियम 12 सी. पी. सी. के तहत आवेदन के आधार पर आगे के लाभ का निर्णय लिया जाना था।

उच्च न्यायालय की अंतर्दृष्टि

न्याय

33. एक आम फैसले में, उच्च न्यायालय ने दूसरी अपील का निपटारा कर दिया। यह पाया गया कि दोनों अदालतों ने एक साथ पाया था

कि इस बात का कोई प्रमाण नहीं था कि 1932 में विभाजन हुआ था। यह पता चला कि ऐसी परिस्थितियों में, सवाल यह था कि क्या रंगस्वामी नायडू की मृत्यु से पहले कोई विभाजन था। इसमें कहा गया है कि इस बात का कोई मुद्दा नहीं उठाया गया है कि बी1 जारी करके विभाजन किया गया था। पहली अपीलीय अदालत ने बी1 के आधार पर विभाजन का विशिष्ट मुद्दा तैयार किया। बी1 के आधार पर, स्थिति का विभाजन साबित नहीं हुआ था।

यह उत्तरदाताओं के साथ सहमत हुआ कि 1983 के ओएस No.89 में वादी ने बी1 दिनांकित 12.05.1955 पर भरोसा किया, जबकि ओएस No.649 में पहला प्रतिवादी

1985 लिखित बयान में कहा गया है कि रंगास्वामी नायडू ने 10.05.1955 पर सार्वजनिक नोटिस जारी किया था कि वह एल. आर. एस. द्वारा विभाजित सदस्य वी. कल्याणस्वामी (डी) थे।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

1932 से उनके भाई से, जिसके लिए 11.05.1955 पर एक नोटिस जारी किया गया था और जिसके लिए रंगस्वामी नायडू द्वारा एक जवाब भी दिया गया था। आगे यह पाया गया कि 12.05.1955 दिनांकित समाचार पत्र "नववा इंडिया" के अलावा, कार्यवाही में कोई अन्य दस्तावेज दायर नहीं किया गया था। अदालत ने पाया कि इस निष्कर्ष पर पहुंचने का कोई कारण नहीं है कि रंगास्वामी नायडू की मृत्यु से पहले भाइयों के बीच कोई मतभेद था। यह आगे कहा गया है कि यह विवाद में नहीं है कि जिस प्रकाशन के बारे में कहा गया है कि वह रंगास्वामी नायडू द्वारा किया गया था, वह 1932 में उनके और उनके भाई के बीच पिछले विभाजन के आधार पर है और क्योंकि अदालतों ने समवर्ती रूप से यह माना है कि कोई पूर्व विभाजन नहीं था और रंगास्वामी नायडू द्वारा उनकी मृत्यु से पहले अपने भाई के साथ अलगाव का कोई सबूत नहीं होने के कारण, पहली अपीलीय अदालत के निष्कर्ष को आधारहीन बताया गया था। यह पाया गया कि यह संदेहपूर्ण था कि क्या रंगास्वामी नायडू को वसीयत बनाने का कोई अधिकार था। मूल वसीयत प्रस्तुत नहीं की गई थी। वादी (1983 के ओएस No.89 में वादी) ने वसीयत पेश करने के लिए कोई कदम नहीं उठाया। किसी की भी जांच नहीं की गई, हालांकि उप–पंजीयक से पंजीकरण पुस्तिका को बुलाया गया और X1 के रूप में चिह्नित किया गया। धारा 145 की कार्यवाही में मजिस्ट्रेट

वसीयत पर चर्चा नहीं की और अपीलार्थी–1983 के ओएस No.89 में वादी ने कार्यकारी मजिस्ट्रेट के आदेश पर एकमात्र निर्भरता रखी। यह आगे देखा गया है कि वसीयत को अम्मनी अम्मल के आवास पर अनुमोदन के अनुसार पंजीकरण के लिए प्रस्तुत किया गया था, जबकि बी 7 के बयान मेंगवाह को प्रमाणित करते हुए, पंजीकरण मृतक के घर पर हुआ। मूल वसीयत के अभाव में और इसका पालन न करने पर

साक्ष्य अधिनियम की धारा 68 और 69 की आवश्यकता के अनुसार, अदालत ने पाया कि वसीयत साबित नहीं हुई थी। वसीयत का पंजीकरण वसीयत के प्रमाण के साथ नहीं होता है। यह इस संबंध में निचली अदालत के निष्कर्षों से सहमत था। कहा जाता है कि निष्पादक की 1990 में मृत्यु हो गई थी लेकिन कोई कदम नहीं उठाया गया।

उच्च न्यायालय ने साधु सिंह बनाम में इस न्यायालय के फैसले को अलग किया। गुरुद्वारा साहिब नरीके और अन्य 3. धारा 14 (1) के तहत उस अधिकार के आधार पर उन्होंने 1958 के ओएस No.71 में समझौता किया था और इसे अपीलार्थियों द्वारा पूरी तरह से मान्यता दी गई थी। अपीलों को स्वीकार कर लिया गया और निचली अदालत के आदेश को बहाल कर दिया गया।3 2006 (8) एससीसी 75 [2020] 9 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

दलों की सामग्री

अदालत और लिखित में बहस

प्रस्तुतियाँ

34. हमने पक्षकारों की ओर से उपस्थित विद्वान वकील को सुना है।

हमने श्री सी. ए. सुंदरम, विद्वान वरिष्ठ वकील को सुना, जिन्होंने अपीलार्थियों की ओर से दलीलों का नेतृत्व किया। हमने अपीलार्थियों की ओर से श्रीमती मोहना और श्री वी. गिरि, विद्वान वरिष्ठ वकीलों को भी सुना। हमने आगे श्री मोहन परासरन, श्री एस. गुरु कृष्णकुमार को सुना,

उत्तरदाताओं की ओर से श्रीमती चित्रा संपत और विद्वान वरिष्ठ वकील श्री वी. राघवचारी। यह ओएस 649/1985 में प्रतिवादी नंबर 1 से कुछ अन्य लोगों की ओर से विद्वान वरिष्ठ वकील श्री एस. नागमुथु के निवेदन पर ध्यान देने के अलावा है।

35. अपीलार्थियों का नेतृत्व श्री ने किया। सी. ए. सुंदरम, विद्वान वरिष्ठ वकील। उन्होंने तर्क दिया कि उच्च न्यायालय ने विवादित फैसले में सी. पी. सी. की धारा 100 के तहत सीमाओं का उल्लंघन किया था और तथ्यों के आधार पर निष्कर्षों की सराहना की जो अस्वीकार्य थे। इसमें कोई संदेह नहीं है कि वह हमें यह पता लगाने के लिए आमंत्रित करते हैं कि वर्ष 1932 में एक मौखिक विभाजन हुआ था, लेकिन उन्होंने तर्क दिया कि इससे पहले कि रंगस्वामी नायडू की मृत्यु हुई

01.06.1955 बी1 पेपर विज्ञापन जारी करने के कारण, हिंदू अविभाजित परिवार की स्थिति में विभाजन लाने के लिए कानून की आवश्यकता को प्राप्त किया गया था। वह हमें बी1 की शर्तों पर ले गए और प्रस्तुत किया कि रंगस्वामी नायडू के अलग होने की एक स्पष्ट घोषणा है। B1 की सामग्री पर विवाद करने के लिए कथित रूप से 11.05.1955 दिनांकित संचार द्वारा उनके भाई द्वारा प्रतिक्रिया। इस तथ्य का उपयोग यह तर्क देने के लिए किया गया था कि कानून की इस आवश्यकता को पूरा किया गया था कि न केवल एक सदस्य जो संयुक्त परिवार में विभाजन लाना चाहता है, उसे अपने इरादे को सूचित करना चाहिए, बल्कि संचार अन्य सह-भागीदारों तक पहुंचना चाहिए।

हिंदू अविभाजित परिवार के किसी सदस्य के लिए परिवार के साथ अपने संबंध को गंभीर करने और अलग होने का कारण यह था कि वह अविभाजित स्थिति से था। केवल एक स्पष्ट घोषणा की आवश्यकता है जो है संप्रेषित किया गया और वही बी1 में जारी किया गया। वह आगे प्रस्तुत करेगा कि वसीयत वास्तव में वास्तविक और कलंकित या संदिग्ध परिस्थितियों से मुक्त थी, जिसे किसी भी तरह से पहली अपीलीय अदालत द्वारा पाया गया था जो तथ्यों पर अंतिम अदालत है।

रंगस्वामी नायडू वी. कल्याणस्वामी (डी) एल. आर. एस. & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

वह वास्तव में अपनी बहनों से प्यार करता था। उन्हें कोई परेशानी नहीं थी। यह स्वाभाविक और संभावित है कि इसलिए यह पाते हुए कि मृत्यु बहुत दूर नहीं है, वह दोनों के लिए व्यवस्था करना चाहता था–अपनी पत्नी को जीवन संपदा के रूप में और 4 उत्तराधिकारियों (हमारे सामने अपीलकर्ताओं) में पूर्ण अधिकार भी देना चाहता था और उसने अपनी बहनों की 4 शाखाओं में से प्रत्येक से अधिकार प्राप्त किया है। धारा 145 की कार्यवाही में प्रमाणक गवाह द्वारा दिए गए साक्ष्य ने साक्ष्य अधिनियम की धारा 69 की आवश्यकता को पूरा किया, जैसा कि पहली अपीलीय अदालत द्वारा सही पाया गया था। प्रदर्शनी बी1 की तिथि में विसंगति के संबंध में, अर्थात। , कि यह निचली अदालत के फैसले के परिशिष्ट में दिनांकित 12.05.1955 के रूप में दिखाया गया है, यह केवल एक गलती है और तारीख है

वास्तव में 10.05.1955। संयुक्त परिवार में विभाजन लाने के लिए आवश्यकता को पूरा करने के संबंध में उन्होंने निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा कियाः

1. कृष्णबाई भृतर गणपतराव देशमुख। अप्पासाहेब

तुलजारामराव निंबालकर और Ors.4;

2. अड्डागदा राघवम्मा और Ors.v। अड्डागाडा चेनचम्मा

और Ors.5

3. आदियालथ कथिसुम्मा और Ors.v। आदियालथ बीचू और

Ors.6: अपीलार्थियों ने बी2 में पारित आदेश पर भी भरोसा किया

धारा 145 सी. आर. पी. सी. के तहत कार्यवाही यह दिखाने के लिए कि

रंगास्वामी नायडू ने अपनी विभाजित स्थिति की घोषणा की

दिनांकित संचार 10.05.1955। संबोधित एक अन्य विवाद यह है कि वसीयत का निष्पादन भी स्थिति की घोषणा के बराबर है। रिलायंस को अड्डागाडा राघवम्मा पर रखा गया है

मामला (ऊपर) और भगवान कृष्ण गुप्ता बनाम। प्रभा गुप्ता और अन्य 7. वसीयत के निष्पादन से पता चलता है कि रंगास्वामी नायडू विशिष्ट संपत्तियों के नियंत्रण में थे। आर का साक्ष्य।145 कार्यवाही में वसीयत में कृष्णम्मल और निष्पादक

यह स्थापित करता है कि वसीयतकर्ता संपत्तियों से निपटने और अपनी विशाल संपत्ति के हिस्से के संबंध में वसीयत को निष्पादित करने में सक्षम था। जलजा शेठी एंड ओआरएस में रिपोर्ट किए गए इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा रखा गया है। वी. लक्ष्मी शेधती & Ors.[3],

41979 (4) SCC 60 5 AIR 1964 SC 136 6 AIR 1951 MAD 561 72009 (11) SCC 33 81973 (2) SCC 773 [2020] 9 S. C. R.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

हरदेव राय बनाम। शकुंतला देवी और अन्य। ' और एल. आर. वी. द्वारा कल्याणी (मृत)। नारायणन और ओआरएस। 10 1 ओ। यह अपीलार्थी का निवेदन है कि रंगास्वामी नायडू पहचान करने में सक्षम थे और वसीयत में संपत्तियों का निपटान। रंगास्वामी नायडू ने

उसके पैसे से उसके नाम पर संपत्ति खरीदी जो थाउसके द्वारा अपने हिस्से के रूप में व्यवहार किया गया। मेट्स और बाउंड्री द्वारा विभाजन अनिवार्य नहीं है। साक्ष्य अधिनियम की धारा 69 की आवश्यकता एक व्यक्ति के बयान पर विचार करने पर पूरी होती है।

धारा 145 कार्यवाहियों में साक्ष्य देने वाले गवाह का। द.

वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर की पहचान स्वयं पीडब्लू1 द्वारा की गई थी। मूल वसीयत को धारा 145 की कार्यवाही में प्रस्तुत किया गया है। आर. कृष्णम्मल ने अपने मामले को 145 कार्यवाहियों और बाद के मुकदमों में वसीयत पर आधारित किया है। , 1958 का ओएस No.71 और ओएस

1963 का No.36। हालाँकि उत्तरदाताओं ने स्वीकार किया कि

समझौता हालांकि वसीयत के संबंध में एक मुद्दा तैयार किया गया था।

हमें याद दिलाया जाता है कि वसीयत एक पंजीकृत दस्तावेज है और

कि पंजीकरण एक गंभीर कार्य है। यह है विवाद

अपीलार्थी कि वसीयत और उसके आसपास के शब्दों में

परिस्थितियों से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि रंगास्वामी नायडू का इरादा यह था कि वह चाहते थे कि उनकी संपत्ति की कुछ संपत्तियां उनके पास जाएं।

बहनों के बेटे जिनसे वे बहुत प्यार करते थे। हमारा ध्यान

के. एस. पलानीसामी में इस न्यायालय के तर्क की ओर आकर्षित किया जाता है(मृत) एल. आर. और ओ. आर. के माध्यम से। वी. सामान्य रूप से हिंदू समुदाय

और गोबिचेट्टिपलायम के नागरिक & Ors.[11]। यह आगे है

उसके जीवनकाल के दौरान केवल सीमित संपत्ति है जो हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 14 (1) के तहत पूर्ण अधिकार में नहीं खिलती है। यह तर्क दिया जाता है कि आर द्वारा मांगी गई प्राथमिक राहत।1958 के ओएस No.71 में कृष्णम्मल स्वयं इस पर आधारित था

वसीयत के ठीक नीचे। उन्होंने हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 14 (1) के तहत कभी दावा नहीं किया। वह वसीयतकर्ता के इरादे को जानती थी और अपने आचरण से इसे स्वीकार करती थी। उसे विरासत में दी गई संपत्ति केवल सीमित संपत्ति थी जिसमें भारी शर्त थी कि उसे बहनों आदि का पालन–पोषण करना होगा और उसकी मृत्यु पर संपत्ति उसकी बहनों के बेटों को सौंप दें। काफी निर्भरता थी

साधु सिंह के मामले में इस अदालत के फैसले पर रखा गया

एससीसी 46

एससीआर 1130

) एस. सी. सी. 15 वी. कल्याणस्वामी (डी) एल. आर. एस. & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

(ऊपर)। वसीयत के माध्यम से हमें लेते हुए अपीलकर्ताओं का तर्क है कि वसीयतकर्ता ने कृष्णम्मल के रखरखाव के लिए अन्य संपत्तियां प्रदान की हैं, और इसलिए, यह तर्क नहीं दिया जा सकता है कि वाद अनुसूची संपत्ति जो वसीयत में शामिल हैं

भरण–पोषण के उसके अधिकार के बदले में दिया गया जो हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के पारित होने के बाद पूर्ण हो जाना चाहिए। रिलायंस को निम्नलिखित निर्णयों पर रखा गया हैः

(1) शिवदेव कौर (मृत) एल. आर. और अन्य बनाम आर. एस. ग्रेवाल 12 1/2

(2) शरद सुब्रमण्यन बनाम। सौमी मजूमदार & Ors.13 और

(3) गद्दाम रामकृष्णारेड्डी और अन्य। वी. गद्दाम रामी

रेड्डी & Ors.14

36. जहाँ तक उच्च न्यायालय के इस निष्कर्ष का संबंध है कि वसीयतकर्ता द्वारा दायर किया गया मुकदमा आदेश II नियम 2 के तहत वर्जित है, यह तर्क दिया जाता है कि हालांकि

अपीलार्थियों (वसीयतकर्ताओं) के पक्ष में भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 119 (1) के तहत एक निहित अधिकार है, वसीयत की गई संपत्ति के संबंध में मुकदमा करने का कारण उनकी मृत्यु के बाद ही उत्पन्न हुआ। आर. कृष्णम्मल। 1963 का ओ. एस. No.36 आर. कृष्णम्मल से निपटने के लिए एक सुरक्षात्मक कार्रवाई थी जिसका उद्देश्य कुछ संपत्तियों को अलग करना था। 1963 के ओएस No.36 में वादी अपीलार्थी 1958 में मुकदमे के पक्षकार नहीं थे और 1958 के ओएस No.71 में समझौता अपीलार्थी को बाध्य नहीं करेगा। आर. कृष्णम्मल, विधवा को उन संपत्तियों का सौदा करने का कोई अधिकार नहीं था जो उसे जीवन संपदा के रूप में दी गई थीं। वह अपीलार्थियों को शामिल किए बिना समझौता नहीं कर सकती थी। डिक्री को शुरू से ही शून्य के

रूप में वर्णित किया गया है और इसलिए, उस डिक्री या उस पर किसी भी लेनदेन को घोषित करने की कोई आवश्यकता नहीं है। इसके अलावा यह तर्क दिया जाता है कि 1963 के ओएस No.36 में शिकायत के अवलोकन से पता चलता है कि वादी ने अलग कार्रवाई शुरू करने के लिए बाकी संपत्तियों के संबंध में अपने अधिकार सुरक्षित रखे हैं। प्रत्यर्थियों ने एक घोषणा के लिए सहमति व्यक्त की है कि कृष्णम्मल के पास केवल एक जीवन संपत्ति थी और इसलिए उन्हें यह तर्क देने से रोक दिया जाता है कि आर. कृष्णम्मल का पूर्ण अधिकार था। आर. कृष्णम्मल की मृत्यु पर 1977 के बाद ही कार्रवाई का कारण सामने आया। बे बेरी अपार्टमेंट प्राइवेट लिमिटेड में इस अदालत के फैसलों पर रिलायंस को रखा गया है। लिमिटेड और ओआरएस। शोभा और ओआरएस। 15 और उषा सुबराओ बनाम। बी. ई. विश्वेश्वरैया 1 6. यह तर्क दिया जाता है कि कृष्णम्मल के पास कोई नहीं था

1 22013 (4) एससीसी 636

1 52006 (13) एससीसी 73761996 (5) एस. सी. सी. 201 [2020] 9 एस. सी. आर.

उन संपत्तियों को देने का अधिकार जो किसी कानूनी आवश्यकता या पारिवारिक आवश्यकता के लिए नहीं थी। लेन–देन को ही 1983 के ओएस No.89 में धोखाधड़ी और मिलीभगत के रूप में चुनौती दी गई है और एक मुद्दा भी तैयार किया गया था। एक तर्क यह भी लिया जाता है कि समझौता डिक्री पंजीकृत नहीं थी और इसलिए उत्तरदाताओं को कोई अधिकार नहीं दिया जा सकता था। यह भी प्रस्तुत किया जाता है कि वर्ष 1982 में वसीयत को दी गई चुनौती सीमा द्वारा वर्जित है। यह आगे तर्क दिया जाता है कि उत्तरदाताओं को वसीयत के अस्तित्व को स्वीकार करने और 1958 के ओएस No.71 और 1963 के ओएस No.36 सूट से समझौता करने के आलोक में वसीयत की वैधता को चुनौती देने से रोक दिया जाता है। उच्च न्यायालय ने 1958 के ओएस No.71 और 1963 के ओएस No.36 में समान पक्षों के बीच पहले के समझौते के आदेश को अमान्य घोषित किए बिना 1985 के ओएस No.649 को आदेश देने में गलती की। ऐसी किसी भी घोषणा पर वर्ष 1982 में प्रतिबंध लगा दिया जाएगा। 1963 के ओएस No.36 में डिक्री के तहत आर. कृष्णम्मल के पास केवल जीवन संपदा थी और धारा 14 (2) लागू होगी। उत्तरदाताओं द्वारा स्थापित उत्तरजीविता द्वारा संपत्ति के अधिकार को निचली अदालत द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था और इसके खिलाफ कोई अपील नहीं की गई थी। अपीलकर्ताओं का यह भी निवेदन है कि कृष्णम्मल की मृत्यु पर भी इस आधार पर कि उसने धारा 14 (1) के तहत पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लिया था, भाइयों और बहनों के बेटे समान रूप से पूरे 50 प्रतिशत संपत्ति में आठवें हिस्से के हकदार थे।

37. हमने अपीलार्थियों के विद्वान वरिष्ठ वकील श्री वी. गिरि को भी सुना। विद्वान वरिष्ठ वकील श्री नागमुथु ने प्रचार किया

1983 के ओएस No.89 में प्रथम प्रतिवादी से हस्तांतरणकर्ताओं के लिए विवाद और शिकायत की कि उनकी दलीलों पर विचार नहीं किया गया है और उन्हें स्वीकार नहीं किया गया है।

38. हम अपीलार्थियों की ओर से विद्वान वरिष्ठ वकील श्रीमती वी. मोहना द्वारा निम्नलिखित प्रस्तुतियों पर ध्यान देते हैं। स्थिति के विभाजन के संबंध में पर्याप्त दलीलें हैं। "नववा इंडिया" में 10.05.1955 दिनांकित समाचार पत्र पर कभी विवाद नहीं हुआ है। उन्होंने सीआरपीसी की धारा 145 के तहत कार्यवाही में निष्पादक के साक्ष्य की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया। घोषणा को सूचित कर दिया गया। रंगस्वामी नायडू के पास संपत्तियों को वसीयत करने की क्षमता थी। भाई अलग-अलग संपत्तियों का कारोबार कर रहे थे। इस संबंध में, हरदेव राय बनाम में इस न्यायालय के निर्णयों पर निर्भरता रखी गई है। शकुंतला देवी और अन्य 1 7. मेट्स और बाउंड्री द्वारा विभाजन को साबित करना आवश्यक नहीं है। मूल वसीयत थीधारा 145 के तहत कार्यवाही में मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया गया

17 (2008) 7 एस. सी. सी. 46 वी. कल्याणस्वामी (डी) एल. आर. एस. & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

सीआरपीसी। वसीयत एक पंजीकृत दस्तावेज है। वसीयत को साक्ष्य अधिनियम की धारा 33 के तहत साबित किया गया है। मजिस्ट्रेट न्यायालय एक न्यायालय है। कृष्णय्या सूर्य राव बहादुर गारू और अन्य (प्रतिवादी) बनाम पर भरोसा रखा गया है। वेंकट कुमार महिताथी सूर्य राव बहादुर गारू 1 8 1958 के ओ. एस. सं. 71 में पहले की कार्यवाही अपीलार्थियों के लिए बाध्यकारी नहीं है। आर. कृष्णम्मल को संपत्तियों से निपटने का अधिकार नहीं था। 1958 के ओ. एस. सं. 71 में डिक्री अमान्य थी। अपीलकर्ताओं ने कभी भी अपने अधिकारों को नहीं छोड़ा है। सी. पी. सी. का आदेश ॥ नियम 2 का सिद्धांत लागू नहीं होगा। हालाँकि अपीलार्थियों के पास निहित अधिकार थे, लेकिन वे उनकी मृत्यु तक अधिकार प्राप्त करने के लिए मामला दायर नहीं कर सकते थे। आर. कृष्णम्मल। 1958 के ओ. एस. सं. 71 में समझौते के फरमान के अनुसार, बाकी संपत्तियां वादी के नियंत्रण में थीं। इसलिए, उन्होंने 1963 के ओ. एस. संख्या 36 में अपना अधिकार सुरक्षित रखा है। का मुद्दा

सी. पी. सी. के आदेश ॥ नियम 2 पर कभी तर्क नहीं दिया गया और न ही कोई निष्कर्ष दिया गया। उच्च न्यायालय द्वारा। विभाजन के लिए सूट में, अधिकार के लिए एक प्रार्थना है। वैसे भी, विभाजन केवल तभी प्रभावी हो सकता है जब अंतिम डिक्री

वह इस अदालत के फैसलों को अड्डगडा राघवम्मा और एक अन्य v में प्रस्तुत करता है। अड्डागाडा चेंचम्मा और अन्य 1,9, जानकी नारायण भोइर बनाम। नारायण नामदेव कदम 2 0 और हरदेव राय (ऊपर)। वसीयत साक्ष्य अधिनियम की धारा 63 और भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 68 के तहत आती है। संयुक्त परिवार की संपत्तियों में अधिकार, हस्तांतरणउत्तरजीविता द्वारा, नीचे दिए गए सभी न्यायालयों द्वारा नकार दिया जाता है और कोई नहीं है

इस तरह के निष्कर्ष के खिलाफ अपील और कोई क्रॉस अपील नहीं है।

सिविल अपील सं। 1039-1044 2013 का

लिखित प्रस्तुतिकरण में, यह तर्क दिया जाता है कि वर्ष 1982 में वादी द्वारा (1985 के ओ. एस. No.649 में) वसीयत को चुनौती देना सीमा द्वारा वर्जित है। उन्हें ध्यान में रखते हुए बहिष्कृत किया जाता है

18 AIR 1933 PC 202 29 AIR 1964 SC 136 20 (2003) 2 SCC 91 [2020] 9 S. C. R.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

1958 के ओ. एस. सं. 71 और 1963 के ओ. एस. सं. 36 में समझौता। समझौता फरमानों को अमान्य घोषित किए बिना, पहले के दो मामलों में, 1985 की ओ. एस. संख्या 649 को अमान्य घोषित नहीं किया जा सकता था। इस तरह की राहत वर्ष 1982 में सीमा द्वारा वर्जित है। हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 14 (1) 1963 के ओ. एस. संख्या 36 में समझौता फरमान को देखते हुए लागू नहीं होती है। उत्तरजीविता पर आधारित मामले को खारिज कर दिया गया थाविचारण न्यायालय और उसके विरुद्ध, वादी द्वारा कोई अपील दायर नहीं की गई थी। यदि धारा 14 (1) के तहत निष्कर्ष की पुष्टि की जाती है, तो आर. कृष्णम्मल की मृत्यु पर, कानून के संचालन से, भाई और बहन का बेटा है

वी. रंगास्वामी नायडू के हिस्से में आने वाली पूरी 50 प्रतिशत संपत्ति में आठवें हिस्से का समान रूप से हकदार है। चूंकि, वादी

सी. आर. पी. सी. की कार्यवाही की धारा 145 में वसीयत की जानकारी थी, वे 1982 में वसीयत को चुनौती देने के हकदार नहीं थे।

39. 2013 के C.A.No.1045–1050 में, अपीलकर्ताओं में से हैं

धारा 14 (2) का उल्लेख करते हुए, यह बताया गया है कि लक्ष्मीया नायडू के इस तर्क के अनुसार कि वसीयत वास्तविक नहीं है और कोई विभाजन नहीं था, धारा 14 (1) के तहत आर. कृष्णम्मल द्वारा पूर्ण अधिकार रखने के लिए धारा 14 (2) के तहत कोई प्रतिबंध नहीं होगा। 1958 के ओएस No.71 में समझौता फरमान का उल्लेख करते हुए कहा गया है किकि जब लक्ष्मीया नायडू के बेटों और पोतों द्वारा कोई आपत्ति नहीं थी, अब वे 1932 में विभाजन और वसीयत के निष्पादन के बारे में विवाद नहीं उठा सकते हैं। रंगास्वामी नायडू की बहन के परिवार के बीच मौखिक विभाजन के तहत 1955 में रंगास्वामी नायडू और आर. कृष्णम्मल की मृत्यु के बाद, अपीलकर्ताओं द्वारा खरीदी गई संपत्ति ए. अलगिरिस्वामी के कब्जे में आ गई, जिनसे उन्होंने इसे खरीदा था। आज तक किसी भी पक्ष ने अपने बिक्री विलेख को चुनौती नहीं दी और लक्ष्मीया नायडू के बेटों ने बिक्री को चुनौती दिए बिना 3 साल की बिक्री के बाद 1985 का ओएस No.649 दायर किया। निष्कर्षों के साथ उच्च न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप के खिलाफ शिकायत की जाती है।

40. लक्ष्मीया नायडू का प्रतिनिधित्व करने वाली शाखा की ओर से पेश वरिष्ठ वकील श्री गुरु कृष्णकुमार ने कहा कि एल. आर. एस. द्वारा वी. कल्याणस्वामी (डी)।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

घोषणा बी1 गंभीर संदेह में डूबी हुई है। तिथि में विसंगति अर्थात। , कि यह दिनांकित 12.05.1955 है और 10.05.1955 बड़ा नहीं है। इस न्यायालय के समक्ष दस्तावेज़ को स्वीकार करते समय भी, बी1 की तारीख को स्पष्ट रूप से छोड़ दिया गया था। पीडब्लू1 की प्रतिपरीक्षा और उस पर रखी गई निर्भरता गलत है। दूसरा, यह आगे तर्क दिया जाता है कि बी1 एक अहस्ताक्षरित दस्तावेज़ है। किसी भी गवाह ने यह बयान नहीं दिया है कि वसीयतकर्ता ने इसके प्रकाशन की व्यवस्था की थी। इसके अलावा, यह तर्क दिया जाता है कि घोषणावर्ष 1932 के कथित विभाजन की पुष्टि करना चाहता है, जिस पर तीन अदालतों द्वारा विश्वास नहीं किया गया है। बी1 को कथित विभाजन से स्वतंत्र नहीं माना जा सकता था। एक बार जब कथित विभाजन पर विश्वास नहीं किया गया तो बी1 के पास खड़े होने के लिए कोई पैर नहीं होगा। यह तर्क दिया जाता है कि अपीलकर्ताओं द्वारा जिन शब्दों पर भरोसा किया गया है, वे अतीत में निरंतर हैं, जहां तक यह है

यह कहते हुए कि "मैं इसके द्वारा अपनी विभाजित और अलग स्थिति की घोषणा भी करता हूं", यह उस तारीख से नहीं होना था जब अलगाव प्रभावी होने वाला था। प्रथम अपीलीय न्यायालय के निष्कर्षों पर इस कारण से प्रतिकूल होने के रूप में हमला किया जाता है कि धारा 145 के तहत कार्यवाही में बी1 और बी43 और बी44 के रूप में चिह्नित उसी के प्रत्युत्तर को वर्तमान कार्यवाही में प्रदर्शित नहीं किया गया था। बी2 आदेश उसी पर किसी भी निष्कर्ष को प्रकट नहीं करता है। यह आगे तर्क दिया जाता है कि विभाजन का उपयोग संकीर्ण और व्यापक अर्थों में किया जाता है। बी1, भले ही उस पर भरोसा किया जाए, केवल स्थिति के पृथक्करण का परिणाम होगा, लेकिन वास्तविक विभाजन नहीं होगा। रिलायंस को अड्डागाडा राघवम्मा बनाम में रखा गया है। अड्डागाडा चेनचम्मा 2 1. कानून में स्थिति यह बताई गई है कि अविभाजित परिवार के सदस्यों को स्थिति के अलगाव के एकतरफा संचार के बाद भी संपत्ति के एक विशेष हिस्से को किसी सदस्य के लिए निर्धारित करने के लिए सहमत होना चाहिए।

कार्यवाही को त्रुटि का उत्पाद भी बताया जाता है। वसीयत तैयार करने के लिए कोई कदम नहीं उठाए गए। बी7 बयान पर निर्भरता जो कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के तहत कार्यवाही में बयान है, आक्षेपित है।21 आकाशवाणी 1964 एस. सी. 136

क्योंकि धारा 145 के तहत कार्यवाही बाध्यकारी नहीं हो सकती है

वसीयत स्थापित करने के लिए मंच। साक्ष्य अधिनियम की धारा 41 को देखते हुए उक्त प्रावधान के तहत निर्णय का उपयोग वसीयत को साबित करने के लिए निर्णायक साक्ष्य के रूप में नहीं किया जा सकता है। साक्ष्य

अधिनियम की धारा 42 का भी उल्लेख किया गया है। यह भी तर्क दिया गया कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 69 के तत्वों को पूरा नहीं किया गया है। यह इंगित किया गया है कि धारा 69 की शर्तों को धारा 145 सी. आर. पी. सी. के प्रयोजनों के लिए पूरा नहीं किया गया है, उसी साक्ष्य का उपयोग उद्देश्य के लिए भरोसा करने के लिए नहीं किया जा सकता है।साक्ष्य अधिनियम की धारा 68। इसके अलावा यह तर्क दिया जाता है कि जो साक्ष्य धारा 68 की आवश्यकताओं को पूरा नहीं करते हैं, उनका उपयोग साक्ष्य अधिनियम की धारा 69 के तहत वसीयत को साबित करने के लिए नहीं किया जा सकता है। अन्यथा भी, यह तर्क दिया जाता है कि बी7 आवश्यकता से कम है जब वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर को साबित करने के लिए कोई सबूत नहीं है, मूल वसीयत प्रस्तुत नहीं की गई है। अभ्यास नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि डी. डब्ल्यू. 1 को वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर भी नहीं पता हैं। यह बताया गया है कि वसीयत के आसपास की संदिग्ध परिस्थितियों को समझाया नहीं गया है। यह तर्क कि वसीयत को स्थिति के विच्छेद की घोषणा के रूप में लिया जा सकता है, विवादित है। यह इंगित किया गया है कि वसीयत को केवल धारा 145 के तहत कार्यवाही के साथ सूचित किया गया था जो उनकी मृत्यु के बाद थी।

रंगस्वामी नायडू 01.06.1955 को जिस तारीख को मिताक्षर कानून के तहत विभाजन शुरू हुआ था। यह भी तर्क दिया जाता है कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 33 लागू नहीं होती है। यह इस कारण से है कि धारा 33 के स्पष्टीकरण के तहत यह लागू होगा जहां कोई व्यक्ति अन्य कार्यवाही में पक्षकार के तहत दावा करता है। यह तर्क दिया जाता है कि अपीलार्थी (1983 के ओएस No.89 में वादी) ने इसके तहत दावा नहीं किया है।

कृष्णम्मल। यह भी तर्क दिया जाता है कि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 14 (1) लागू होगी।

41. प्रतिवादी श्री राघवचारी की ओर से पेश हुए विद्वान वरिष्ठ वकील ने इस प्रकार तर्क दियाः

कोई विभाजन नहीं था। 12.05.1955 दिनांकित पेपर प्रकाशन ने पहले के विभाजन की बात की। एकतरफा घोषणा अस्वीकार्य है।संदिग्ध परिस्थितियों में वसीयतकर्ता का अपने अंतिम दिनों में बिस्तर पर होना शामिल है क्योंकि वह भोजन नली के कैंसर से पीड़ित था और उसे एक नली द्वारा खिलाया जा रहा था और होश में नहीं होने पर संदर्भित किया जाता है। द्वितीयक साक्ष्य देने का सवाल ही नहीं उठा। कथित वसीयत में स्याही वाला हिस्सा और अंतररेखाएँ हैं। यह भी तर्क दिया जाता है कि 1958 का ओएस No.71 विधवा आर. कृष्णम्मल द्वारा संयुक्त पारिवारिक संपत्तियों के विभाजन के लिए दायर किया गया था।

& एएनआर। वी.

भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. द्वारा। & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

जिस मुकदमे में उन्होंने संयुक्त परिवार की संपत्तियों की सभी 93 वस्तुओं को सूचीबद्ध किया था और आधे हिस्से का दावा किया था। मुकदमे से समझौता किया गया और उन्होंने 16 वस्तुओं को स्वीकार किया और लक्ष्मीया नायडू के बेटों के पक्ष में 77 वस्तुओं के अधिकारों की पुष्टि की। आर. अलगिरिस्वामी और वी. कल्याणस्वामी (हमारे समक्ष अपीलकर्ताओं में से) ने ओएस No.36 दाखिल किया1963 में और लक्ष्मीया नायडू के बच्चों को भी पार्टी बनाया गया था। 1958 के ओएस No.71 में समझौता करने के आर. कृष्णम्मल के अधिकार को चुनौती दी गई थी क्योंकि उनके अनुसार उनका केवल जीवन हित था। आर. कृष्णम्मल, प्रतिवादी ने तर्क दिया कि धारा 14 (1) के तहत उसे पूर्ण अधिकार है और इसलिए समझौता करने का अधिकार है। आर. कृष्णम्मल के जीवनकाल

के बाद 16 वस्तुओं में से दो वस्तुओं को लेकर 1963 के ओएस No.36 में समझौता करने का मतलब था कि 1963 के ओएस No.36 में वादी ने आर. कृष्णम्मल के उच्च अधिकारों को स्वीकार कर लिया और उन्होंने अपना दावा छोड़ दिया और 5 वस्तुओं में से R.Krishnammal द्वारा प्रभावित तीसरे पक्ष को बिक्री को स्वीकार कर लिया। वादी द्वारा 1963 के ओएस No.36 में भी दायर 1981 के ओएस No.732 का भी संदर्भ दिया गया है। उक्त मुकदमे में वादी ने उन दो वस्तुओं को विभाजित करने की मांग की है जिन्हें उन्होंने 1963 के ओएस No.36 में प्राप्त किया था। हमारा ध्यान 1981 के ओएस No.732 में इस आशय की दलील की ओर आकर्षित किया गया है कि संपत्तियां एक आर. कृष्णम्मल की हैं जो 1958 के ओएस No.71 में उनके हिस्से को आवंटित की गई थीं और उक्त संपत्तियां उनके कब्जे में थीं।

उसकी मृत्यु तक। दूसरे शब्दों में, यह बताया गया है कि अधिकार वसीयत के तहत स्थापित नहीं किया गया था। 1974 में इस अधिकार को छोड़ दिया गया था और

1981 में परित्याग की पुष्टि की गई और इस प्रकार बहिष्कार, स्वीकृति और छूट के सिद्धांतों को आकर्षित किया गया। यह तर्क भी लिया जाता है कि 1983 का ओएस No.89 निराशाजनक रूप से सीमितता से भी वर्जित है। इस आधार पर कार्यवाही करना कि एक वसीयत है और वह वसीयत सच है,

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 14 (1) लागू होगी।

42. श्री मोहन परासरन, वरिष्ठ अधिवक्ता प्रस्तुत करेंगे कि अलगाव के मामले के लिए कोई अभिवचन नहीं है। वसीयत को कानून के अनुसार संपादित नहीं किया गया था। आर. पी. सी. की धारा 145 के तहत कार्यवाही संक्षिप्त प्रकृति की थी न कि अंतर–पक्षीय। विषय अधिकार था। अतः उक्त में प्रस्तुत साक्ष्यएडिंग्स का उपयोग नहीं किया जाना चाहिए। धारा 14 (1) के तहत कृष्णम्मल को उपलब्ध अधिकार। आदेश II नियम 2 के तहत प्रतिबंध लागू हुआ।

43. Smt.Chithra संपथ, उत्तरदाताओं की ओर से पेश विद्वान वरिष्ठ वकील ने तर्क दिया कि अभियोग अनुसूची संपत्ति [2020] 9 एस. सी. आर. में थी।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

धारा 145 के तहत कार्यवाही के समय से ही उत्तरदाताओं (लक्ष्मीया नायडू की संतानों) का कब्जा। हालांकि यह स्थिति थी, फिर भी 1983 के ओएस 89 में कब्जे की वसूली के लिए कोई प्रार्थना नहीं है। इस तरह की कोई भी राहत सीमित रूप से प्रतिबंधित होगी। (2007) 12 एस. सी. सी. 695 में इस न्यायालय के निर्णय पर भरोसा करते हुए, यह तर्क दिया जाता है कि चूंकि 1983 की ओ. एस. संख्या 89 और 1985 की ओ. एस. संख्या 649 में लिखित वक्तव्य में स्थिति के विभाजन के संबंध में कोई अभिवचन नहीं है, 1985 की ओ. एस. संख्या 649 में उत्तरदाताओं की विशिष्ट याचिका के बावजूद कि कोई विभाजन नहीं था, किसी भी प्रमाण की मात्रा पर विचार नहीं किया जा सकता है। विभाजन के संबंध में कोई मुद्दा नहीं बनाया गया है। अपीलीय न्यायालय ने इन कार्यवाहियों में दाखिल नहीं किए गए दस्तावेजों पर भरोसा किया है। उसी की सामग्री पक्षों को ज्ञात नहीं थी क्योंकि उन पर चर्चा

नहीं की गई थी और निष्कर्ष प्रस्तुत नहीं किए गए थे। [यह पारित आदेश, प्रदर्शनी–बी2] के संदर्भ में है। सी. आर. पी. सी. की धारा 145 के तहत कार्यवाही संक्षिप्त प्रकृति की होती है और दीवानी न्यायालय को बाध्य नहीं करती है। मृत्यु से पहले स्थिति का विभाजन लाने के लिए कोई संचार नहीं है। रिलायंस को मधुसूदन दास बनाम पर रखा गया है। एलआरएस द्वारा नारायणबाई (मृत)। और अन्य 23। यह ऐसा मामला नहीं है जहां वसीयत खो जाती है। बेंगा बेहरा और एक अन्य वी पर भरोसा करते हुए। ब्रज किशोर नंदा और

अन्य 24, यह तर्क दिया जाता है कि मूल वसीयत के नुकसान को उचित संदेह से परे साबित करने के बाद ही, उस द्वितीयक साक्ष्य को जोड़ा जा सकता है। बी7 पर निर्भरता के संबंध में, हमारा ध्यान शशि जेना और अन्य बनाम मामले में इस न्यायालय के निर्णय की ओर आकर्षित किया जाता है। खदल स्वैन और अन्य 25। यह तर्क दिया जाता है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के तहत कार्यवाही में शामिल मुद्दा कब्जे से संबंधित था और रंगास्वामी द्वारा वसीयत जारी करने पर विचार नहीं किया गया था, और इसलिए, साक्ष्य अधिनियम की धारा 33 में दो शर्तों को पूरा नहीं किया गया है। दूसरी शर्त स्पष्ट रूप से इस आधार पर परंतुक में पहली शर्त है कि 1983 की ओ. एस. संख्या 89 में वादी धारा 145 की कार्यवाही में पक्षों के माध्यम से अपने अधिकार का पता नहीं लगा रहा है। संदिग्ध परिस्थितियों, जिसमें टेस्टेटर द्वारा इनकार करना भी शामिल है, जैसा कि X1 में परिलक्षित होता है, उसकी मानसिक स्थिति की ओर इशारा करते हुए उसके अंगूठे का निशान लगाने के लिए, इंगित किया गया है। वसीयत में गलत बयान वसीयत को बदनाम करने के लिए सूचीबद्ध किए जाते हैं। यह मामला हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 14 (1) के तहत आता है। 1981 की ओ. एस. संख्या 732 दाखिल करने में 1983 की ओ. एस. संख्या 89 में वादी का आचरण, इसे दायर किए जाने के आधार पर, कृष्ण बिहारीलाल बनाम में सिद्धांत को लागू करने के लिए एक उपयुक्त मामला बनाता है। गुलाबचंद 26 और एस. षण्मुगम पिल्लई और अन्य बनाम। के. षण्मुगम पिल्लई और अन्य 27. यह 23 (1983) 1 एससीसी 35

24 (2007) 9 एस. सी. सी. 728

26 (1971) 1 एस. सी. सी. 837

27 (1973) 2 एस. सी. सी. 312 वी. कल्याणस्वामी (डी) एल. आर. एस. & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

इसके अलावा 1963 की ओ. एस. सं. 1936 दाखिल करने और वाद में समर्थन करने के प्रभाव की ओर इशारा किया गया है कि अन्य प्रतिवादियों के खिलाफ कोई राहत का दावा नहीं किया गया था, इस प्रकार, यह एक ऐसा मामला है जहां वसीयत में अन्य संपत्तियों के संबंध में उनके अधिकारों को आंदोलन करने के लिए 1963 की ओ. एस. सं. 36 में कोई अधिकार सुरक्षित नहीं था।

ठहरने की संपत्ति

44. दोनों मुकदमों में विवादित संपत्ति समान है। 10.05.1955 की वसीयत में सोलह मदें थीं। 1958 के ओ. एस. सं. 71 में,

आर. कृष्णम्मल को सात वस्तुओं के संबंध में पूर्ण अधिकार प्रदान किए गए थे। 1963 के ओ. एस. सं. 36 में शामिल संपत्ति भी उन सात मदों से संबंधित थी, जो 1958 के ओ. एस. सं. 71 में समझौते के आदेश में शामिल थे, जिसमें आर. कृष्णम्मल को पूर्ण अधिकार प्रदान किए गए थे। 1981 का ओ. एस. सं. 632 मद सं. से संबंधित है। 5 और 6,1963 के ओ. एस. संख्या 36 में। वर्तमान सूट में जो वस्तुएं निर्धारित की गई हैं, वे सात वस्तुओं के अलावा वसीयत दिनांक 1 द्वारा कवर की गई वस्तुएं हैं, जिनमें से चार को अलग कर दिया गया था और एक को अधिग्रहित किया गया था। जहाँ तक आर. कृष्णम्मल द्वारा दायर 1958 के ओ. एस. सं. 71 का संबंध है, चूंकि उनके पास विभाजन का दावा करने वाली एक वैकल्पिक राहत थी, इसलिए इसमें 93 मदों से युक्त समभागी की पूरी संपत्ति शामिल थी। में शामिल संपत्ति का विस्तारहमारे सामने मामले 36 एकड़ से कुछ अधिक हैं।

सी. पी. सी. के आदेश ॥ नियम 2 का प्रभाव

45. प्रत्यर्थियों द्वारा उठाया गया तर्क, अन्य बातों के साथ-साथ, यह है कि 1983 का ओ. एस. संख्या 89 सिविल संहिता के आदेश ॥ नियम 2 द्वारा वर्जित है।

प्रक्रिया, 1908 (इसके बाद संक्षेप में 'सी. पी. सी.' के रूप में संदर्भित) सी. पी. सी. यही कारण है कि जब चार अपीलार्थियों में से दो ने 1963 का ओ. एस. सं. 36 स्थापित किया है, तो उन्होंने उक्त वाद में केवल सात मद निर्धारित किए हैं। अपीलार्थियों के लिए यह खुला था कि वे उस राहत का दावा करें जिसका उन्होंने वर्तमान वाद में दावा किया है। 1958 के ओ. एस. सं. 71 में निर्धारित वस्तुओं के अलावा अन्य संपत्तियों की वस्तुओं के संबंध में मुकदमा नहीं करने के कारण, वे सी. पी. सी. के आदेश ॥ नियम 2 के तहत वर्जित हैं। इसका प्रतिवाद अपीलार्थी द्वारा दो पहलुओं को इंगित करके किया जाता है। सबसे पहले, यह तर्क दिया जाता है कि

वसीयत, हालांकि उनके पास निहित अधिकार था, 1963 की ओ. एस. संख्या 36 को तब स्थापित करना पड़ा जब रंगस्वामी नायडू की विधवा आर. कृष्णम्मल ने 1963 की ओ. एस. संख्या 36 में निर्धारित वस्तुओं को अलग करने की तैयारी की थी।

1963 और जो 1958 के ओ. एस. सं. 71 में डिक्री द्वारा कवर किए गए थे। दूसरा, अपीलार्थियों द्वारा यह इंगित किया गया है कि वसीयत के तहत, आर।

कृष्णम्मल-विधवा के पास शिकायत के संबंध में एक जीवन संपत्ति थी

अनुसूचित संपत्तियाँ। नतीजतन, जब तक वह जीवित थी, प्रकृति का एक सूट, जैसा कि दायर किया गया है। , 1983 का ओ. एस. सं. 89 दाखिल नहीं किया जा सका, जब वसीयत के तहत आर. कृष्णम्मल के पास अधिकार था। यह केवल उसकी मृत्यु पर है कि वसीयत के तहत, उनके द्वारा दायर प्रकृति का मुकदमा दायर किया जा सकता था। आर. कृष्णम्मल की मृत्यु केवल 1977 में हुई थी।

46. सी. पी. सी. के आदेश ।। नियम 2 के प्रावधानों को लागू करने के लिए कार्रवाई के कारण की पहचान होनी चाहिए। इस प्रकार, एक ओर, जबकि यह अपीलार्थियों के लिए एक सुरक्षात्मक कार्रवाई करने के लिए खुला था, जैसा कि 1963 की ओ. एस. संख्या 36 दाखिल करके किया गया था, निर्धारित संपत्तियों के संबंध में।तीन। उक्त वाद में प्रस्तावित कार्रवाई के कारण के आधार पर, यह निश्चित रूप से वर्तमान वाद के अभियोजन के लिए एक बाधा नहीं होगी।

47. सी. पी. सी. का आदेश ।। नियम 2 एक विषय रहा है

इस न्यायालय के कई निर्णय। सी. पी. सी. के आदेश ।। नियम 2 (2) में ऐसी स्थिति का उल्लेख किया गया है जहां कोई वादी अपने दावे के किसी भी हिस्से के संबंध में मुकदमा करने से चूक जाता है या जानबूझकर अपने दावे के किसी भी हिस्से को छोड़ देता है। फिर, उसे इस प्रकार छोड़े गए या छोड़े गए हिस्से के संबंध में मुकदमा करने से रोक दिया जाता है। कार्रवाई के एक ही कारण से उत्पन्न होने वाली एक से अधिक राहत का हकदार वादी दो काम कर सकता है। वह एक ही मुकदमे में कार्रवाई के एक ही कारण से उत्पन्न होने वाली सभी राहतों के संबंध में मुकदमा कर सकता है। यदि वह कार्रवाई के एक ही कारण के तहत अपने लिए खुली एक या अधिक राहतों के लिए मुकदमा करना छोड़ देता है, तो ऐसी सभी राहतों के लिए मुकदमा करने के लिए अदालत से अनुमति ले सकता है, और यदि अदालत ऐसी अनुमति देती है, तो वह एक नए मुकदमे में मुकदमा दायर कर सकता है, हालांकि पहले के मुकदमे में कार्रवाई के उसी कारण के आधार पर। तथापि, न्यायालय की अनुमति न लेने का प्रभाव

किसी भी राहत के लिए, जिसके लिए कार्रवाई के समान कारण पर मुकदमा करना उसके लिए खुला था, यह है कि उसे इस तरह से हटाए गए किसी भी अन्य राहत के लिए मुकदमा करने से रोक दिया गया है। सी. पी. सी. के आदेश ।। नियम 2 (2) और आदेश ।। नियम 2 (3) के बीच अंतर देखा जा सकता है। कानून एक ऐसे मामले के बीच अंतर पर विचार करता है जहां कार्रवाई के कारण से उत्पन्न होने वाले दावे को या तो जानबूझकर त्याग दिया जाता है या मुकदमा चलाने के लिए छोड़ दिया जाता है। इस तरह का दावा नए मुकदमे का विषय नहीं हो सकता है। हालांकि, जब कार्रवाई के एक ही कारण से उत्पन्न एक से अधिक राहत उपलब्ध हैं, तो पहले मुकदमे में मांगी गई राहत की तुलना में अधिक राहत की मांग करने पर रोक लगा दी जाएगी, सिवाय इसके कि अनुमति प्राप्त की गई हो। हालांकि, अदालत द्वारा अनुमति की मंजूरी प्रस्तुत करते हुए, राहत की मांग करने वाला उनका बाद का मुकदमा, जो मूल रूप से नहीं मांगा गया था, लेकिन जिसके लिए अनुमति दी गई है, अनुमेय है। इस प्रावधान का सिद्धांत वास्तव में सी. पी. सी. के आदेश ।। नियम 2 (1) में दर्ज किया गया है जो यह है कि प्रत्येक वाद में पूरे दावे को शामिल करना है जो वी. कल्याणस्वामी (डी) बी. एल. आर. एस. से उत्पन्न होता है।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

कार्रवाई का कारण और जो वादी करने का हकदार है। यह घोषणा करता है कि यह वादी के लिए आईएम के किसी भी हिस्से को छोड़ने के लिए खुला है। हालाँकि, इसके परिणाम सी. पी. सी. के आदेश ।। अनु 2 (2) में घोषित किए गए हैं। हम देखते हैं कि कन्या उद्योगों में इस न्यायालय के निर्णय में भी इसी तरह के विचार व्यक्त किए गए हैं। (पी) लिमिटेड v. एनचरटेक सॉल्यूशंस (पी) Ltd.2013 (1) एससीसी 625। पैराग्राफ 9 में, यह

एस निम्नलिखित रूप में आयोजित किया गयाः

" 9. आदेश 2 नियम 1 में प्रत्येक वाद में उस पूरे दावे को शामिल करने की आवश्यकता है जिसके लिए वादी किसी विशेष मामले के संबंध में हकदार है।

कार्रवाई का कारण। हालाँकि, वादी के पास अपने दावे के किसी भी हिस्से को छोड़ने का विकल्प है यदि वह ऐसा करना चाहता है। आदेश 2 नियम 2

एक ऐसी स्थिति पर विचार करता है जहाँ एक वादी मुकदमा करने के लिए छोड़ देता है या दावे के किसी भी हिस्से को जानबूझकर छोड़ देता है जिसका वह हकदार है।

बनाने के लिए। यदि वादी ऐसा करता है, तो आदेश 2 नियम 2 सी. पी. सी. यह स्पष्ट करता है कि वह बाद में, दावे के उस हिस्से या हिस्से के लिए मुकदमा नहीं करेगा जिसे हटा दिया गया है या छोड़ दिया गया है। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि आदेश 2 नियम 2 (2) में चूक या छूट पर विचार नहीं किया गया है।

अदालत की अनुमति के साथ वादी के दावे के किसी भी हिस्से का त्याग करना ताकि वह बाद में वापस आने के लिए हकदार हो कि क्या छोड़ा गया है या त्याग दिया गया है। अदालत की ऐसी अनुमति आदेश 2 नियम 2 (3) द्वारा उन स्थितियों में विचार की जाती है जहां एक वादी कार्रवाई के एक विशेष कारण पर एक से अधिक राहत का हकदार होता है, ऐसी सभी राहतों के लिए मुकदमा करना छोड़ देता है। ऐसी स्थिति में, वादी को अदालत की अनुमति प्राप्त करने की स्थिति को छोड़कर पहले छोड़ी गई राहत का दावा करने के लिए बाद का मुकदमा लाने से रोक दिया जाता है। इसलिए, यह एक संयुक्त पठन से स्पष्ट है।

आदेश 2 नियम 2 (2) और (3) सी. पी. सी. के प्रावधानों में से कि आदेश 2 नियम 2 के उपरोक्त दो उप–नियम दो पर विचार करते हैं।

विभिन्न परिस्थितियाँ, अर्थात। , जहाँ कोई वादी दावे के किसी हिस्से को छोड़ देता है या छोड़ देता है जो वह करने का हकदार है और दूसरा, जहाँ वादी मुकदमे में दावा किए जा सकने वाले कई राहतों में से एक को छोड़ देता है या छोड़ देता है। यह केवल बाद की स्थितियों में है जहां वादी राहत की मांग करते हुए बाद का मुकदमा दायर कर सकता है।

पहले के मुकदमे में छूटने से यह साबित हुआ कि विशेष राहत का दावा करने में चूक के समय उन्होंने पहले मुकदमे में अदालत की अनुमति प्राप्त की थी।

48. इस मामले में, यह सच है कि जब 1963 की ओ. एस. संख्या 36 को अभिनिर्धारित किया गया था, तो आर. कृष्णम्मल द्वारा लाया गया पूर्व मुकदमा, अर्थात।

1958 का, एक समझौते के फरमान में समाप्त हुआ था। वाद के अवलोकन से ही पता चलता है कि 1963 के ओ. एस. सं. 36 में वादी ने 1958 के ओ. एस. सं. 71 में समझौते को स्वीकार किया है। उन्होंने दावा किया है कि

वाद के पैरा 7 में कहा गया है कि समझौते के तहत आर. कृष्णम्मल को उक्त वाद (वाद सं. ओ. एस. नं. 36

1963 का) वसीयत में शामिल संपत्तियों और कुछ नकदी के बदले में। वसीयत में शामिल बाकी संपत्तियों को उन्होंने प्रत्यर्थियों (लक्ष्मीया नायडू के बेटों) के पक्ष में दे दिया था। इसके बाद, यह माना जाता है कि प्रतिवादी दावा करते हैं, अर्थात, आर. कृष्णम्मल ने वाद में निर्धारित संपत्तियों पर पूर्ण स्वामित्व का दावा किया और जो कानून और तथ्यों दोनों में अस्थिर था। यह आगे तर्क दिया जाता है कि संपूर्ण समझौता डिक्री, विशेष रूप से, पूर्ण शीर्षक प्रदान करती है

आर. कृष्णम्मल में वाद संपत्तियों के लिए, दो वादी और प्रतिवादी 3 और 4 पर वैध और बाध्यकारी नहीं था, जो हमारे सामने अपीलकर्ता हैं। यह भी कहा जाता है कि अपीलकर्ताओं के पास संपत्तियों में निहित अधिकार हैं। उन्हें मुकदमे में शामिल नहीं किया गया था (जाहिरा तौर पर, 1958 का ओ. एस. नंबर 71)। यह माना गया कि आर. कृष्णम्मल ने अपीलार्थियों के हितों का प्रतिनिधित्व नहीं किया। मुकदमे के पैराग्राफ–8 में यह कहा गया है कि आर. कृष्णम्मल किसी भी समझौते से अपने अधिकारों का विस्तार नहीं कर सके।जो वाद मदें थीं, वसीयत और आर. कृष्णम्मल में शामिल संपत्तियों की केवल कुछ मदें, कानूनी रूप से, केवल उसी ब्याज का हकदार होंगी और दावा कर सकती हैं, यानी एक जीवन संपत्ति जो वसीयत के तहत उनके पास थी। इसके बाद, आर. कृष्णम्मल को 05.10.1959 दिनांकित एक नोटिस का संदर्भ है कि उनके पास केवल एक जीवन संपदा थी और उन्हें अलग–थलग करने से बचने के लिए। आर. कृष्णम्मल पर आरोप है कि उन्होंने असमर्थनीय आरोपों वाला जवाब भेजा है। यह माना जाता है कि उसने दावा किया, अन्य बातों के साथ–साथ, कि अपीलार्थी वसीयत के तहत कुछ भी दावा करने के हकदार नहीं होंगे और वह अपनी पसंद के किसी भी तरीके से संपत्तियों से निपटने की हकदार थी। यह भी कहा जाता है कि आर. कृष्णम्मल तब अपीलार्थियों के अधिकारों को विफल करने के लिए वाद संपत्तियों के संबंध में नाममात्र के दस्तावेज बनाने का प्रयास कर रहे थे। याचिका का अनुच्छेद–11 महत्वपूर्ण होने के कारण, ध्यान दिया जा सकता हैः

" 11. आर. वी. रंगास्वामी नायडू की वसीयत में यहाँ वर्णित संपत्तियों के अलावा अन्य संपत्तियाँ भी शामिल थीं जो समझौते के आदेश के तहत प्रथम प्रतिवादी द्वारा अपने पति के भाई के बेटों को दी गई थीं। वादी अपने अधिकार सुरक्षित रखते हैं –

उन गुणों का एक अलग कार्रवाई के लिए सम्मान।

49. यह तदनुसार है कि 1963 का ओ. एस. सं. 36 दायर किया गया था जिसमें यह घोषणा करने की मांग की गई थी कि आर. कृष्णम्मल के पास केवल एक जीवन संपदा थी जिसके पास कोई शक्ति नहीं थी।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

अलगाव और अपीलार्थियों के पास वसीयत के तहत उक्त संपत्तियों में निहित शेष राशि है। 'कहा' शब्द स्पष्ट रूप से 1963 के ओएस No.36 में निर्धारित वस्तुओं को संदर्भित करता है।

50. सूट (1983 का ओ. एस. नंबर 89) मूल रूप से इस पर आधारित है

1977 में आर. कृष्णम्मल की मृत्यु और वसीयत के तहत अपीलार्थियों के पूर्ण अधिकारों का विकास। दूसरे शब्दों में, वसीयत के तहत जीवन संपदा रखने वाले आर. कृष्णम्मल जीवित थे जब 1963 का ओ. एस. संख्या 36 दायर किया गया था। वसीयत के तहत पूर्ण अधिकार, अपीलार्थियों के पक्ष में, केवल जीवन संपदा धारक की मृत्यु के साथ शुरू हुआ। इस संदर्भ में, इसमें कोई संदेह नहीं है कि हमें एक पहलू को स्पष्ट करना चाहिए। भारतीय उत्तराधिकार की धारा 119

अधिनियम, 1925 (इसके बाद संक्षेप में "भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम" के रूप में संदर्भित) विरासत को सौंपने की तारीख से संबंधित है, जब अन्य बातों के साथ, कब्जा स्थगित कर दिया जाता है। प्रासंगिक चित्रण के साथ प्रावधान इस प्रकार हैः

" 119. भुगतान या कब्जा करते समय विरासत को सौंपने की तिथि

स्थगित कर दिया। जहाँ वसीयत की शर्तों के अनुसार उत्तराधिकारी नहीं है।

वसीयत की गई चीज़ के तत्काल कब्जे का हकदार, एक अधिकार

इसे उचित समय पर प्राप्त करने के लिए, जब तक कि कोई विपरीत इरादा न हो

वसीयत द्वारा प्रकट होता है, वसीयतकर्ता के वसीयत में निहित हो जाता हैमृत्यु हो जाती है, और यदि वह मर जाता है तो वसीयतकर्ता के प्रतिनिधियों के पास जाएगा

उस समय से पहले और विरासत प्राप्त किए बिना, और

ऐसे मामलों में वसीयतकर्ता की मृत्यु से विरासत निहित है।

ब्याज में।

स्पष्टीकरण। एक इरादा कि किसी भी व्यक्ति के लिए एक विरासत होगी

उसके हित में निहित नहीं होना केवल अनुमान नहीं लगाया जाना चाहिए

एक प्रावधान से जिसके द्वारा वस्तु का भुगतान या कब्जा

वसीयत को स्थगित कर दिया जाता है, या जिसके तहत उसमें पूर्व ब्याज होता है

वसीयत की गई निधि से तब तक जमा होने का निर्देश दिया जाता है जब तक कि भुगतान का समय आता है, या एक प्रावधान से कि, यदि कोई विशेष

घटना घटित होगी, विरासत किसी अन्य व्यक्ति को दी जाएगी।

दृष्टांतः

(i) XXX XXX ((ii) XXX

(iii) एक निधि ए को जीवन भर के लिए और उसकी मृत्यु के बाद बी को विरासत में दी जाती है।

वसीयतकर्ता की मृत्यु पर बी की विरासत बी में निहित हो जाती है।

XXX "

XXX

XXX

51. यह भी उचित है कि हम संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम, 1882 (इसके बाद संक्षेप में 'टी. पी. अधिनियम' के रूप में संदर्भित) की धारा 19 पर ध्यान देते हैं। धारा 19 निहित स्वार्थ से संबंधित है। वह इस प्रकार हैः

" 19. निहित ब्याज। जहाँ, संपत्ति के हस्तांतरण पर, बिना निर्दिष्ट किए किसी व्यक्ति के पक्ष में ब्याज बनाया जाता है।

वह समय जब यह प्रभावी होना है, या निर्दिष्ट करने के संदर्भ में कि यह है

तत्काल प्रभाव से या किसी घटना के घटित होने पर, जो होनी ही चाहिए, ऐसा हित निहित है, जब तक कि कोई विपरीत इरादा प्रकट न हो। हस्तांतरण की शर्तों से। निहित स्वार्थ पराजित नहीं होता है।

कब्जा प्राप्त करने से पहले हस्तांतरणकर्ता की मृत्यु से।

स्पष्टीकरण। एक इरादा कि कोई ब्याज निहित नहीं किया जाएगा, केवल उस प्रावधान से अनुमान नहीं लगाया जाना चाहिए जिसके द्वारा उसका आनंद स्थगित किया जाता है, या जिसके द्वारा उसी संपत्ति में पूर्व ब्याज किसी अन्य व्यक्ति को दिया जाता है या आरक्षित किया जाता है, या

जिसके द्वारा संपत्ति से उत्पन्न होने वाली आय को निर्देशित किया जाता है

आनंद का समय आने तक जमा किया जाता है, या इस प्रावधान से कि यदि कोई विशेष घटना होती है तो ब्याज को पारित किया जाएगा

एक और व्यक्ति।

52. निहित ब्याज आकस्मिक ब्याज से अलग होता है। इन दोनों के परिणाम बहुत अलग हैं। आर. कृष्णम्मल की मृत्यु एक निश्चित घटना होने के कारण, शेष लोगों का हित एक निहित स्वार्थ है। टी. पी. अधिनियम की धारा 19

और भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 119 के बीच समानता, और जो इस मामले के तथ्यों के अनुरूप है, निम्नानुसार हैः

जब वसीयत के तहत, आर. कृष्णम्मल के पक्ष में एक जीवन संपदा बनाई गई थी, जिसमें अपीलार्थियों के पक्ष में एक पूर्ण शेष राशि थी, तो वसीयतकर्ता की मृत्यु के समय से अपीलार्थियों के पक्ष में विरासत निहित हो गई थी। संपत्ति का अधिकार और आनंद,

हालाँकि, वसीयत के तहत, जीवन संपदा धारक का अधिकार क्षेत्र था, अर्थात। , आर. कृष्णम्मल जब तक वह जीवित थी। हालाँकि, उन्हें वसीयत के तहत अपने अधिकार की सीमाओं को बढ़ाने का कोई अधिकार नहीं था। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह अधिशासी विधान के प्रभाव के अधीन है जिस पर चर्चा की जाएगी।

बाद में। उसके एकतरफा कार्य से या यहां तक कि तीसरे पक्ष के साथ मिलकर, यह जीवन संपदा धारक के लिए शेष पुरुषों के अधिकारों को हराने के लिए खुला नहीं होगा। भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 119 चित्रण (।।।) के तहत एक मामले को शामिल करने का महत्व यह है कि वसीयतकर्ता की मृत्यु के साथ, संपत्ति में अधिकार एल. आर. एस. द्वारा वी. कल्याणस्वामी (डी) के पास निहित हो जाता है।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

उस परजीवन संपदा धारक के क्षणिक कब्जे और आनंद के बाद निहित है, एक वंशानुगत अधिकार, जो वास्तव में, वसीयतकर्ता की मृत्यु के समय उत्पन्न हुआ था, निरपेक्ष के उत्तराधिकारियों को कानूनी अधिकार प्रदान करेगा।

वसीयत के तहत मालिक जब उसकी संपत्ति का उत्तराधिकार खुलता है, तो क्या वह वसीयत को पीछे नहीं छोड़ना चाहता है। यद्यपि अधिकार संपत्ति में निहित है, वसीयत के तहत एक पूर्ण मालिक की निरपेक्षता के साथ संपत्ति का आनंद आर. कृष्णम्मल की मृत्यु के बाद ही अपीलार्थियों द्वारा किया जा सकता है। भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 119 के संदर्भ में 'पूर्ण अधिकार' शब्दों पर प्रकाश डालने के बाद, यह वह अधिकार है जिसे घोषणा और विभाजन के लिए डिक्री का विषय बनाने की मांग की गई थी। यह स्पष्ट है कि वर्ष 1963 में या आर. कृष्णम्मल की मृत्यु तक, जिन अधिकारों को लागू करने की मांग की गई थी, वे अपीलार्थियों के साथ नहीं थे जैसा कि समझाया गया था। आर. कृष्णम्मल के जीवित रहने के दौरान वे वादी अनुसूचित संपत्तियों के विभाजन की मांग नहीं कर सकते थे।

53. हम कन्या उद्योग (अंग्रेजी) में इस न्यायालय के शब्दों को फिर से सुनते हैं। प्राइवेट लिमिटेड v. वेंचरटेक सॉल्यूशंस प्राइवेट लिमिटेड 28 निर्णय के पैराग्राफ-11 में पाया गयाः

" 11. आवेदन के लिए मुख्य आवश्यकता

इसलिए, आदेश 2 नियम 2 (2) और (3) में निहित प्रावधान यह है कि बाद के मुकदमे में कार्रवाई का कारण पहले मुकदमे के समान होना चाहिए। .....

54. इस प्रकार, चाहे वह आदेश ।। नियम 2 (2) के तहत कार्रवाई के कारण से उत्पन्न होने वाले दावे को छोड़ना या जानबूझकर त्यागना हो या मांग नहीं करना हो।

आदेश ।। नियम 2 (3) के तहत राहत, उनके घातक परिणाम,

यह केवल तभी उत्पन्न होता है जब कार्रवाई का कारण समान हो। यद्यपि हम इस तथ्य से अनजान नहीं हैं कि 1963 के ओ. एस. सं. 36 में वादी 1958 के ओ. एस. सं. 71 में समझौता डिक्री के बारे में घोषणा की मांग कर सकते थे, वसीयत के तहत आने वाली सभी संपत्तियों के बारे में, हम सोचेंगे कि इस मामले के तथ्यों में, 1963 के ओ. एस. सं. 36 में कार्रवाई का कारण और वर्तमान मुकदमा (1983 का ओ. एस. सं. 1989) स्पष्ट रूप से स्पष्ट हैं, जो हमने चर्चा की है और आर. कृष्णम्मल की मृत्यु की तारीख के तथ्य को ध्यान में रखते हुए। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि 1963 के ओएस No.36 में कार्रवाई का कारण उसमें निर्धारित वस्तुओं के अलगाव का खतरा था। हम 1963 के ओ. एस. संख्या 36 को अधिक एक के रूप में देखेंगे

28 (2013) 1 एससीसी 625 [2020] 9 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 (इसके बाद) की धारा 119 के तहत संपत्ति में निहित हित रखने वाले व्यक्तियों द्वारा सुरक्षात्मक कार्रवाई।

संक्षेप में 'भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम' के रूप में संदर्भित)। हमें इस सिद्धांत से भी बेखबर नहीं रहना चाहिए कि कार्रवाई का कारण मांगी गई राहत के साथ भ्रमित नहीं होना चाहिए। इसका अधिक संबंध उस राहत के आधार से है जिसकी मांग की गई है। हम इस संबंध में केवल वही दोहरा रहे हैं जो प्रिवी काउंसिल ने निर्धारित किया है, जब उसने कहा था कि "यह मीडिया को संदर्भित करता है जिस पर वादी ने अदालत से अपने पक्ष में एक निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कहा था" (मोहम्मद खलील खान बनाम देखें। महबूब अली मियां 2 9)।

ओ. एस. नं. में पारित प्रस्तावों और निर्णयों का प्रभाव। 71 1958 का और ओ. एस. नं. 36 1963 का और ओ. एस. नं. 732 1981 का

एस्टोपेल, वेवर, एक्विजेंस

55. 1958 का ओ. एस. सं. 71 आर. कृष्णम्मल द्वारा दायर एक मुकदमा था। प्रतिवादी सं। 1 4 लोग लक्ष्मीया नायडू के पुत्र थे। पाँचवाँप्रतिवादी वसीयत का निष्पादक था। आर. कृष्णम्मल ने अपने दिवंगत पति वी. रंगास्वामी नायडू द्वारा निष्पादित वसीयत का संग्रह किया। वैकल्पिक रूप से, उन्होंने विभाजन के लिए एक फरमान का भी दावा किया, वस्तुतः वसीयत के तहत अपने अधिकार को छोड़ दिया और इस आधार पर कि वी. रंगास्वामी नायडू की निर्वसीयत मृत्यु हो गई। मामला सुनवाई के लिए नहीं गया। यह एक समझौते में समाप्त हुआ। समझौते का सार यह है कि वसीयत में उल्लिखित कुछ वस्तुओं में से सात वस्तुओं को आर के पूर्ण गुणों के रूप में मान्यता दी गई थी।

कृष्णम्मल हालांकि, वसीयत के तहत, उन वस्तुओं पर उनका केवल सीमित अधिकार था। आर. कृष्णम्मल ने अपने हिस्से के लिए, समझौते के आदेश के तहत बाकी संपत्तियों के संबंध में अपने अधिकारों को छोड़ दिया। हम वी. राघवचारी के तर्क पर ध्यान देते हैं, जो विद्वान वरिष्ठ वकील हैं।

लक्ष्मीया नायडू। वसीयत द्वारा कवर की गई संपत्तियां संपत्ति के बड़े निकाय का केवल एक बहुत छोटा हिस्सा थीं, जो संयुक्त परिवार से संबंधित थीं। यह बताने के लिए सबूत हैं कि जैसा कि प्रथम अपीलीय न्यायालय ने पाया कि आर. कृष्णम्मल अपने पूर्ण अधिकारों की मांग करने की स्थिति में नहीं थे और उन्हें जो मिल सकता था, उससे वह संतुष्ट थीं। लेकिन जो बात कहीं अधिक प्रासंगिक है, वह यह है कि अपीलार्थी पक्षकार नहीं थे

29 एयर 1949 पी. सी. 78 वी. कल्याणस्वामी (डी) बायल्स। & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

समझौता करें। अपीलार्थी आर के तहत अपने अधिकारों का पता नहीं लगा रहे थे।

वसीयत, क्योंकि वसीयत के तहत आने वाली संपत्तियों पर उसके पास केवल एक जीवन संपदा थी। अपीलार्थी उन संपत्तियों के लिए पूर्ण अधिकार प्रदान करने की मांग करने वाले समझौते में प्रवेश करने के लिए उसके कार्यों से भी बाध्य नहीं थे, जो वसीयत की विषय वस्तु थीं, जिनके संबंध में उन्हें आर. कृष्णम्मल की मृत्यु के बाद आनंद लेने का अधिकार था।56. 1963 का ओ. एस. सं. 36 चार अपीलार्थियों में से दो द्वारा दायर किया गया था, जो वसीयत के तहत वसीयतदार हैं। उन्होंने इस प्रभाव के लिए एक घोषणा की मांग की कि आर. कृष्णम्मल अपने अधिकार का विस्तार नहीं कर सकती हैं और वह संपत्तियों को अलग नहीं कर सकती हैं (बहुत सात आइटम, जो ओ. एस. एन. ओ. के समझौते के आदेश के तहत हैं। 71 1958 में, उनकी पूर्ण संपत्तियों के रूप में मान्यता दी गई थी)। यह सच है कि 1963 के ओ. एस. सं. 36 में वादी ने वर्तमान में वाद अनुसूची संपत्तियों को शामिल करने का विकल्प नहीं चुना था।

उन पर मुकदमा चलाएँ और उनके खिलाफ घोषणा की मांग करें। इसके दो पहलू हैं, जिन्हें हमें ध्यान में रखना चाहिए। सबसे पहले, 1963 का ओ. एस. नंबर 36 दाखिल करने के लिए कार्रवाई का कारण यह आशंका थी कि आर. कृष्णम्मल उन सात वस्तुओं को अलग करने वाले थे जिन पर उन्होंने 1958 के ओ. एस. नंबर 71 के तहत पूर्ण अधिकार प्राप्त किए थे (वास्तव में, यह आरोप लगाया गया था कि एक वस्तु को अलग किया गया था)। दूसरा, हम पहले ही याचिका के अनुच्छेद–11 पर ध्यान दे चुके हैं। इसमें, वादी ने अपने मन का खुलासा किया है कि वे अन्य संपत्तियों के लिए अपने अधिकार का पीछा करने का इरादा रखते हैं जो स्पष्ट रूप से 1983 के ओ. एस. नंबर 89 में वाद अनुसूची संपत्तियां हैं। हम पहले ही संकेत दे चुके हैं कि सी. पी. सी. के आदेश ॥ नियम 2 का प्रतिबंध लागू नहीं होगा। अपीलार्थियों के तर्क में कुछ योग्यता है कि 1963 के ओ. एस. सं. 36 में पारित डिक्री में 1958 के ओ. एस. सं. 71 में समझौता डिक्री की शर्तों को कम करना शामिल था। 1963 के ओ. एस. संख्या 36 में समझौते की तारीख तक, स्थिति यह थी कि सात वस्तुओं में से चार को आर. कृष्णम्मल द्वारा अलग कर दिया गया था, जबकि एक संपत्ति सरकार द्वारा अधिग्रहित की गई थी। जहां तक वस्तु संख्या का संबंध है। 5 और 1963 के ओ. एस. सं. 36 में वाद अनुसूची में 6, दिनांकित वसीयत की शर्तों को दोहराया गया। यह इस कारण से है कि 1958 के ओ. एस. संख्या 71 में डिक्री की शर्तों से प्रस्थान करते हुए, जिसके तहत आर. कृष्णम्मल [2020] 9 एस. सी. आर.

मद संख्या के संबंध में पूर्ण अधिकार प्रदान किए गए थे। 5 और 6, समान वस्तुओं के संबंध में, 1963 के ओ. एस. संख्या 36 में समझौता डिक्री के तहत, आर. कृष्णम्मल को केवल इस अवधि के दौरान संपत्तियों का आनंद लेना था।

उसका जीवनकाल और अलगाव की शक्ति के बिना। दूसरे शब्दों में, दिनांकित वसीयत की शर्तें 1963 के ओ. एस. संख्या 36 में समझौते के फरमान द्वारा प्रतिबिंबित और प्रबलित देखी जाती हैं। 1958 के ओ. एस. सं. 71 और 1963 के ओ. एस. सं. 36 दोनों में न्यायालय द्वारा कोई निर्णय नहीं दिया गया है। वह क्या औचित्य है जिसके कारण पक्षकारों ने प्रवेश किया

समझौता फरमान, उन पक्षों के कानूनी अधिकारों के लिए निर्णायक नहीं हो सकता है जिन्हें हमें घोषित करने के लिए कहा जाता है। शाखा की कार्रवाई लक्ष्मीया नायडू, जो 1963 के ओ. एस. संख्या 36 में पक्षकारों के रूप में भी शामिल हुए थे, और जिनका प्रतिनिधित्व वकील ने किया था, अपीलार्थियों की ओर से वसीयत साबित करने की आवश्यकता को कम नहीं कर सकते हैं।

57. एक और पहलू जिस पर ध्यान दिया जाना चाहिए वह यह है कि 1963 के ओ. एस. संख्या 36 में समझौते के आदेश में, हमारा ध्यान इस तथ्य की ओर आकर्षित किया गया है कि वादी ने कहा है कि वे अन्य प्रतिवादियों के खिलाफ कोई राहत नहीं मांग रहे हैं जिसमें लक्ष्मीया शाखा भी शामिल है। इससे यह तर्क दिया जाता है कि लक्ष्मीया नायडू की शाखा का हित, जो 1958 के ओ. एस. संख्या 71 के समझौते के आदेश के तहत सुरक्षित था, जिसके तहत आर. कृष्णम्मल ने उन सात मदों के अलावा सभी संपत्तियों के संबंध में अपने अधिकारों को छोड़ दिया था, जिन पर उन्हें पूर्ण अधिकार दिए गए थे, को अबाधित और निर्विवाद छोड़ दिया गया था। इस आचरण पर हमारे सामने जोर दिया गया है, यह इंगित करने के लिए कि यह सिद्धांतों के माध्यम से एक बाधा का गठन करेगा, जिसमें अपीलार्थियों के लिए 1983 की ओ. एस. संख्या 89 को स्थापित करने में रोक और सहमति शामिल है, जिस पर आर. कृष्णम्मल ने 1958 की ओ. एस. संख्या 71 में अपने सभी अधिकारों को छोड़ दिया था। इस संबंध में, हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि 1963 के ओ. एस. संख्या 36 में भी, सात मदों के अलावा अन्य संपत्तियां, निश्चित रूप से मुकदमे की विषय वस्तु नहीं थीं। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि समझौते में जो कहा गया है वह यह है कि उक्त मुकदमे में अन्य प्रतिवादियों के खिलाफ कोई राहत का दावा नहीं किया गया है। यह भी उतना ही सच है कि 1963 के ओ. एस. संख्या 36 में डिक्री के पारित होने तक, लक्ष्मीया शाखा का हित प्रभावित नहीं हुआ था। यही कारण है कि मद संख्या के संबंध में। 5 और 1963 के ओ. एस. संख्या 36 में 6, जिस पर आर. कृष्णम्मल के अधिकार एक जीवन संपदा तक सीमित थे, जिसे समझौते के तहत वसीयत की शर्तों के अनुरूप लाने के लिए अलगाव के खिलाफ वर्जित था, लक्ष्मीया नायडू की शाखा के लिए कोई मायने नहीं रखता था। यही कारण है कि जहां तक उनका संबंध है, वे पहले से ही 1958 के ओ. एस. संख्या 71 में समझौते के आदेश से बंधे थे, जिसके तहत आर. कृष्णम्मल को एल. आर. एस. द्वारा वी. कल्याणस्वामी (डी) बनाया गया था।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

एक ओर वसीयत की शर्तों को 1963 के ओ. एस. संख्या 36 में समझौता डिक्री के तहत दोहराया गया। 5 और 6. 1958 के ओ. एस. सं. 71 के फरमान को अन्यथा अछूता छोड़ दिया गया था। इसलिए हम यह निष्कर्ष निकालेंगे कि 1963 के ओ. एस. संख्या 36 में एक डिक्री का पारित होना एक ऐसा मामला है जो पूरी तरह से अपीलार्थियों और आर. कृष्णम्मल के बीच है। वास्तव में, लक्ष्मीया नायडू शाखा, हालांकि दलों को बनाया समझौता, वास्तव में फरमान के पक्षकार नहीं थे। उन्होंने समझौते के फरमान के पक्षकारों के रूप में हस्ताक्षर नहीं किए हैं। इसलिए, न तो अपीलार्थी और न ही प्रत्यर्थी 1963 की ओ. एस. संख्या 36 दाखिल करने या उसमें समझौता डिक्री पारित करने से कोई लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

1963 के ओ. एस. सं. 36 में वादियों ने 1981 का ओ. एस. सं. 732 भी दायर किया है। लक्ष्मीया शाखा (अपीलों में उत्तरदाताओं के बीच) पार्टियाँ नहीं थीं। यह 1963 के ओ. एस. सं. 36 में निर्धारित मद 5 और 6 के विभाजन के लिए एक सूट था। यह स्पष्ट है कि वे सिद्धांतों पर भरोसा नहीं कर सकते।

1981 के ओ. एस. No.732 पर आधारित रेज़ जुडिकाटा या रचनात्मक रेज़ जुडिकाटा, जो उक्त मुकदमे के पक्षकार नहीं हैं। हालाँकि, जिस बात का आग्रह किया जाना चाहिए, वह यह है कि जिस आधार पर 1981 की ओ. एस. संख्या 732 में डिक्री पारित की गई थी, वह वर्तमान मुकदमे में कार्रवाई के कारण के साथ पूरी तरह से असंगत है। दूसरे शब्दों में, यह बताया गया है कि 1981 के ओ. एस. संख्या 732 में, आर. कृष्णम्मल के पास संपत्ति पर अधिकार था और यह वर्तमान मुकदमे में स्थापित मामले से असंगत था। यह तर्क दिया गया था कि अपीलकर्ताओं को हटा दिया गया थाइस तरह की कार्रवाई करना। हम निम्नलिखित आचरण का भी अनुमान लगा सकते हैं। 1981 के ओ. एस. सं. 732 में कार्रवाई के कारण में सुरक्षित अधिकारों (वस्तु सं. 5 और 1963 के ओ. एस. सं. 36 में 6) 1958 के ओ. एस. सं. 71 में जिसके तहत लक्ष्मीया शाखा ने आर. कृष्णम्मल के अधिकारों को स्वीकार किया जिन्होंने संपत्तियों पर अपने अधिकारों को भी छोड़ दिया जिसमें मामले में वाद अनुसूची आइटम शामिल थे। हालाँकि, हम अनुमानित आयामों से अनजान नहीं हैं, हम यह नहीं सोचेंगे कि संपत्ति का अधिकार, यदि अन्यथा अपीलार्थियों के पक्ष में स्थापित किया जाता है, तो यह खो जाएगा। इसे अभियोग अनुसूची संपत्तियों के अधिकारों के परित्याग के मामले के रूप में नहीं माना जा सकता है (इस संबंध में शा मूलचंद एंड कंपनी लिमिटेड ([2020] 9 एस. सी. आर. में देखें।

परिसमापन), आधिकारिक प्राप्तकर्ता द्वारा, उच्च न्यायालय, मद्रास बनाम। जवाहर मिल्स लिमिटेड, सलेम 3 और डॉ. करण सिंह बनाम। जम्मू और कश्मीर राज्य और अन्य 3 1. जो उत्तरदाता 1981 के ओ. एस. सं. 732 के पक्षकार नहीं थे, वे विरोध का मामला स्थापित नहीं कर सकते।

इच्छा की तारीख 10.05.1955 हो चुकी है

सिद्ध किया गया

[साक्ष्य अधिनियम की धारा 33, 68 और 69]

58. विचाराधीन वसीयत एक विशेषाधिकार प्राप्त वसीयत है। एक विशेषाधिकार प्राप्त वसीयत बनाने का तरीका भारतीय उत्तराधिकार की धारा 63 में प्रदान किया गया है।

एक्ट करें। ताकि एक वैध वसीयत न केवल बनाई जाए, यह आवश्यक है कि

वसीयतकर्ता को दस्तावेज़ को निष्पादित करना चाहिए लेकिन निष्पादन को कम से कम दो गवाहों द्वारा सत्यापित किया जाना चाहिए। किसी दस्तावेज़ की सामान्य गवाही की आवश्यकता नहीं है, बल्कि सत्यापन की आवश्यकता है जो भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 63 में प्रदान किया गया है। 59. भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 68 (इसके बाद संक्षेप में 'साक्ष्य अधिनियम' के रूप में संदर्भित) कानून द्वारा सत्यापित किए जाने के लिए आवश्यक दस्तावेज़ के निष्पादन के प्रमाण से संबंधित है। उसी के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि वसीयत के मामले में, एक दस्तावेज होने के नाते जिसे भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 63 द्वारा सत्यापित किया जाना आवश्यक है, यदि कोई सत्यापित करने वाला गवाह जीवित है और अदालत की प्रक्रिया के अधीन है और सबूत देने में सक्षम है, तो वसीयत केवल तभी साबित की जा सकती है जब प्रमाणित करने वाले गवाहों में से एक को उसके निष्पादन को साबित करने के लिए बुलाया जाता है।

60. साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 69 इस प्रकार हैः

यूनाइटेड किंगडम में निष्पादित किया गया है, यह साबित किया जाना चाहिएकि कम से कम एक प्रमाणित करने वाले गवाह का प्रमाणन उसकी लिखावट में है, और यह कि निष्पादन करने वाले व्यक्ति के हस्ताक्षर

दस्तावेज़ उस व्यक्ति की लिखावट में है।

61. यद्यपि प्रयोग की गई अभिव्यक्ति है 'यदि ऐसा कोई प्रमाणक गवाह नहीं पाया जा सकता है, तो अन्य बातों के साथ, इसकी निम्नलिखित व्याख्या है'। 'गवाह को प्रमाणित करने' से पहले 'इस तरह' शब्द का उद्देश्य साक्ष्य अधिनियम की धारा 68 में उल्लिखित प्रमाणित करने वाले गवाह को संदर्भित करना है। जहाँ तक अभिव्यक्ति की बात है

' 'पाया गया' संबंधित है, यह परिस्थितियों की एक विस्तृत विविधता को शामिल करेगा। यह.

30 ए. आई. आर 1953 एस. सी 98

31 (2004) 5 एस. सी. सी. 698 वी. कल्याणस्वामी (डी) एल. आर. एस. & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. द्वारा। & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

इसमें किसी भी शारीरिक बीमारी के कारण साक्ष्य देने में असमर्थता का मामला शामिल होगा। यह निश्चित रूप से एक ऐसी स्थिति को शामिल करेगा जहां

धारा 68 के तहत प्रमाणन साबित करने का कार्य करना साक्ष्य अधिनियम, और इसलिए, यह एक ऐसी स्थिति बन जाती है जहाँ वह नहीं पाया जाता है।

62. बाबू सिंह और अन्य बनाम। राम सहाय उर्फ राम सिंह 3 2,

न्यायालय ने धारा 69 के संबंध में निम्नलिखित रूप में निर्धारित किया:

" 17. यह अन्य बातों के साथ-साथ ऐसे मामले में लागू होगा जहां सत्यापन

गवाह या तो मर चुका है या अदालत के अधिकार क्षेत्र से बाहर है या रखा गया हैप्रतिकूल पक्ष द्वारा रास्ते से बाहर या इसके बावजूद पता नहीं लगाया जा सकता है

मेहनती खोज। केवल उस घटना में, इच्छा में साबित किया जा सकता है धारा 69 में इंगित किया गया तरीका अर्थात गवाहों की जाँच करके जो

वसीयतकर्ता या निष्पादक की लिखावट को साबित करने में सक्षम थे।सबूत का भार तब दूसरों पर स्थानांतरित किया जा सकता है।

18. जबकि, हालांकि, एक वसीयत को आम तौर पर साबित किया जाना चाहिए

उत्तराधिकार की धारा 63 के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए

अधिनियम और अधिनियम की धारा 68, इसके घटकों की स्थिति में,

जैसा कि यहाँ पहले देखा गया है, रिकॉर्ड पर लाया गया है, इसका सख्त सबूत है

निष्पादन और प्रमाणन में ढील दी गई है। हालांकि, हस्ताक्षर औरजैसा कि धारा 69 में विचार किया गया है, लिखावट को साबित किया जाना चाहिए। "

(जोर दिया गया)

63. साक्ष्य अधिनियम की धारा 69 से निपटने के लिए, हम नोटिस करते हैं

के. लक्ष्मणन बनाम में इस न्यायालय का निर्णय। थेक्कायिल पद्मिनी और अन्य 3 3:

" 32. चूँकि दोनों प्रमाणित करने वाले गवाह नहीं हैं

जांच की गई, अधिनियम की धारा 69 के संदर्भ में यह अनिवार्य था

अपीलार्थी पर यह साबित करने के लिए कि कम से कम एक का सत्यापन

प्रमाणित करने वाला गवाह उसकी लिखावट में है और उस पर

दस्तावेज़ को निष्पादित करने वाला व्यक्ति उस व्यक्ति की लिखावट में होता है। डी. डब्ल्यू. 3, जो एक्सट में भी एक पहचान करने वाला गवाह था। बी–2, विशेष रूप से

कहा कि उन्होंने इस संबंध में पहचान करने वाले गवाह के रूप में हस्ताक्षर नहीं किए थेएक्सट. बी–2 और यह भी कि वह हस्ताक्षर के बारे में नहीं जानता था

एक्स. बी–2। इसके अलावा, दस्तावेज़ की प्रकृति पर विचार करते हुए जो

उपहार का एक विलेख था और यह मानते हुए भी कि कोई अभिवचन दायर नहीं किया गया है

विशेष रूप से दस्तावेज़ के निष्पादन से इनकार करना

तथ्य यह है कि वादी ने कभी भी उपहार विलेख के निष्पादन को स्वीकार नहीं किया और इसलिए, इसे इस तरह साबित करने की आवश्यकता थीकोई अन्य दस्तावेज़ "।

64. इस मामले में, इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि दोनों प्रमाणित करने वाले गवाह प्रासंगिक समय पर जीवित नहीं हैं। इसलिए, सवाल तब होंगे

इस प्रकार हैः

क्या यह अभी भी कानून की आवश्यकता है जब दोनों प्रमाणन करते हैं

ए।

अर्थात्। , दोनों गवाहों द्वारा प्रमाणन को साबित करना होगा? या क्या यह साबित करने के लिए पर्याप्त है कि कम से कम एक प्रमाणक गवाह का प्रमाणन उसकी लिखावट में है, जो कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 69 का शाब्दिक आदेश है और बाद वाले अंग को साबित करने के अलावा है?

बी।

आगे जो सवाल उठेगा वह यह है कि क्या प्रदर्शनी

बी7, जो वसीयत में प्रमाणित करने वाले गवाहों में से एक के साक्ष्य की प्रति है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के तहत कार्यवाही में आवश्यकताओं को पर्याप्त रूप से पूरा करती है।

साक्ष्य अधिनियम की धारा 33 के तहत?

65. हम सबसे पहले साक्ष्य अधिनियम की धारा के प्रभाव से संबंधित मुद्दे को उठाएंगे। यह कोई ऐसा मामला नहीं है जिसमें उच्च द्वारा प्रवेश किया गया हो।

टी. साक्ष्य अधिनियम की धारा 33 इस प्रकार हैः

" 33. साबित करने के लिए कुछ सबूतों की प्रासंगिकता,

बाद की कार्यवाही में तथ्यों की सच्चाई बताई गई। न्यायिक कार्यवाही में या उससे पहले गवाह द्वारा दिया गया साक्ष्य

इसे लेने के लिए कानून द्वारा अधिकृत कोई भी व्यक्ति, बाद की न्यायिक कार्यवाही में या बाद के चरण में साबित करने के उद्देश्य से प्रासंगिक है।

उसी न्यायिक कार्यवाही की, उन तथ्यों की सच्चाई जो वी. कल्याणस्वामी (डी) ने एल. आर. एस. द्वारा कहा है कि जब गवाह मर चुका हो या उसे नहीं पाया जा सकता हो, या वह साक्ष्य देने में असमर्थ हो, या प्रतिकूल पक्ष द्वारा उसे रास्ते से हटा दिया जाता है।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

या अगर उसकी उपस्थिति बिना किसी देरी के प्राप्त नहीं की जा सकती है

या व्यय जो, मामले की परिस्थितियों में, न्यायालय द्वारा

बशर्ते कि कार्यवाही समान पक्षों के बीच थी याहित में उनके प्रतिनिधि; कि पहले में प्रतिकूल पक्ष

कार्यवाही को पार–जाँच करने का अधिकार और अवसर था; कि

जारी किए गए प्रश्न काफी हद तक पहले के समान थे।

दूसरी प्रक्रिया।

स्पष्टीकरण। आपराधिक मुकदमा या जाँच को ऐसा माना जाएगा –

अभियोजक और अभियुक्त के बीच एक कार्यवाही हो इस खंड का अर्थ "।

(जोर दिया गया)

66. उत्तरदाताओं का तर्क केवल इतना प्रतीत होता है कि,

याचिकाकर्ता पक्षकार नहीं थे। इसलिए, कार्यवाही उसी के बीच नहीं थी। धारा 33 के पहले परंतुक का दूसरा अंग। , कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 33 लागू होने के लिए, कार्यवाही हैब्याज में उनके प्रतिनिधियों के बीच पूरा नहीं किया जाता है। यह तर्क उठाया गया है कि अपीलार्थी, जो वसीयत के तहत शेष व्यक्ति हैं, उन्हें आर. कृष्णम्मल के हित में प्रतिनिधियों के रूप में नहीं माना जा सकता है।

67. इसके अलावा धारा 145 की कार्यवाही की प्रकृति पर प्रकाश डाला गया है।

जैसा कि तीसरा परंतुक आकर्षित नहीं करता है। शब्द की व्याख्या

' कृष्णय्या सूर्य राव बहादुर गारू और अन्य (प्रतिवादी) बनाम में रिपोर्ट किए गए निर्णय में 'ब्याज में प्रतिनिधि' प्रिवी काउंसिल के समक्ष विचार के लिए आया है। वेंकट कुमार महिताथी सूर्य रावबहादुर गारू 3 4 जहाँ अदालत ने मामले के कानून के एक बड़े निकाय का उल्लेख किया था

और एक विस्तृत समीक्षा के बाद, निम्नानुसार आयोजित किया गयाः

" 20. कुछ भी आसान नहीं होता अगर यह वांछित होता।

पहली कार्यवाही के लिए या के साथ संपत्ति में गुप्त होना चाहिएदूसरी कार्यवाही के लिए पार्टी के शीर्षक में पूर्ववर्ती। इसके बजाय

इस तरह के जाने–माने शब्दों का उपयोग करने के लिए, एक अधिक लोचदार वाक्यांश है

नियोजित, और एक जो न तो तकनीकी है और न ही कला का शब्द है।

34 AIR 1933 PC 202 [2020] 9 S. C. R.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

विधायी प्राधिकरण था, यह याद रखना चाहिए, जिसके साथ काम करना था

एक ऐसा देश जिसमें (अन्य संस्थानों के बीच) हिंदू संयुक्त रूप से

परिवार में एक प्रकार और डिग्री की रुचि का प्रतिनिधित्व शामिल है

और उन परिस्थितियों में जो अंग्रेजी कानून से अपरिचित हैं। इसे ध्यान में रखते हुए वास्तव में, उनके प्रभुत्त्व यह अनुमान लगाए बिना नहीं रह सकते हैं कि कठोरता की चूक

अंग्रेजी कानूनी शब्दावली और कम प्रतिबंधित लोगों का रोजगार

वाक्यांश 'हित में प्रतिनिधि' जानबूझकर और जानबूझकर था।

यह एक प्रश्न होगा जो इसके सही उत्तर के आधार पर होगा

व्यापक के भीतर दूसरी कार्यवाही के लिए एक पक्ष के हित में जिसका अर्थ उनके प्रभु–जहाज इन शब्दों को बताते हैं। घूम रहा है।

पहले परंतुक की ओर लौटते हुए, उनके प्रभुत्त्व के दृष्टिकोण में, यह आवश्यक है कि

पहिल कार्यवाहीमे पक्षकारकेँ हितमे प्रतिनिधित्व करबाक चाही।

प्रश्न के संबंध में दूसरी कार्यवाही में पक्षकार

पहली कार्यवाही में जिन तथ्यों के लिए साक्ष्य जारी किया गया है

राज्य प्रासंगिक थे। इसमें न केवल संपत्ति में गोपनीयता के मामले शामिल हैं

और शीर्षक का उत्तराधिकार, लेकिन ऐसे मामले भी जहां निम्नलिखित दोनों

स्थितियाँ मौजूद हैं, अर्थात। (1) संबंधित पक्ष का हितविषय में दूसरी कार्यवाही–पहली कार्यवाही का विषय है

के हित के अनुरूप और विरोधी नहीं पहली कार्यवाही के लिए प्रासंगिक पक्षकार; और (2) दोनों का हित

में मुद्दे में विशेष प्रश्न के दिए जाने वाले उत्तर में

पहली कार्यवाही समान है। अन्य मामले शामिल हो सकते हैं

पहले परंतुक द्वारा; लेकिन यदि उपरोक्त दोनों शर्तें पूरी हो जाती हैं,

पहले संबंधित पक्ष को दूसरी कार्यवाही में आगे बढ़ानामुद्दे में विशेष प्रश्न के संबंध में उसकी रुचि के संबंध में

पहली कार्यवाही में, भूमि व्याकरणिक और सच्चाई से हो सकती है दूसरे पक्ष के हित में एक प्रतिनिधि के रूप में वर्णित

आगे बढ़ रहा है "।

[जोर दिया गया]

68. 'ब्याज में प्रतिनिधि' शब्द, दूसरे शब्दों में, होना है

उदारतापूर्वक और उन मामलों तक सीमित नहीं जहाँ गोपनीयता है

ई और शीर्षक का उत्तराधिकार। वे पार्टी के ऐसे प्रतिनिधि हैं।

ई बाद की कार्यवाही। इस मामले के तथ्यों में दो परीक्षणों का उत्तर देते हुए, उत्तरदाता यह तर्क नहीं दे सकते हैं कि अपीलकर्ताओं में से अधिकांश आर के हित के साथ असंगत थे।

वी. कल्याणस्वामी (डी) एलआरएस द्वारा। & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

कृष्णम्मल और विशेष रूप से वसीयत का निष्पादक। यह निश्चित रूप से उनके हितों के विरोधी नहीं था। वसीयत वास्तव में आर. कृष्णम्मल और निष्पादक द्वारा स्थापित की गई थी। इसलिए, यह सुरक्षित रूप से निष्कर्ष

निकाला जा सकता है कि ए पक्ष के दोनों व्यक्तियों का हित, जो कब्जे का संरक्षण था, भी अपीलार्थियों के हित में था। यह सच हो सकता है कि अपीलकर्ता आर के तहत अपना शीर्षक प्राप्त नहीं करते हैं।

कृष्णम्मल। लेकिन साक्ष्य अधिनियम की धारा 33 के तहत आवश्यकताओं को सी. पी. सी. की धारा 11 के तहत एक मामले में भी पूरा किए जाने वाले तत्वों के साथ भ्रमित नहीं किया जाना चाहिए। यह तर्क नहीं दिया जा सकता है कि अपीलकर्ताओं का हित आर. कृष्णम्मल और निष्पादक के खिलाफ दंड प्रक्रिया संहिता की कार्यवाही की धारा 145 में पूछे गए प्रश्न का उत्तर देने में निहित है, जो मजिस्ट्रेट के समक्ष पक्षकार थे। वसीयत का मामला स्पष्ट रूप से स्थापित किया गया था और साथ ही 10.5.1955 की घोषणा और आगे के घटनाक्रम भी। इसलिए, तीसरे परंतुक पर आधारित विवाद भी हमें आकर्षित नहीं करता है। इसके अलावा न केवल बी पक्ष से जिरह करने का अवसर था, बल्कि इसका लाभ भी उठाया गया। साक्ष्य अधिनियम की धारा 33 की प्रयोज्यता भी निर्णय की प्रकृति पर निर्भर नहीं करती है जो पहले की कार्यवाही में दी गई है। हम सोचेंगे कि इस आधार पर, जैसा कि प्रदर्शनी–बी7 और यहां तक कि बी13 (निष्पादक द्वारा बयान) वास्तव में वह साक्ष्य है जो मजिस्ट्रेट के समक्ष पिछली कार्यवाही में प्रस्तुत किया गया था, जो निश्चित रूप से कानून द्वारा साक्ष्य लेने के लिए अधिकृत था, जो धारा 33 के तहत उसमें निहित तथ्यों की सच्चाई को साबित करने के लिए प्रासंगिक है।

69. आगे का सवाल यह है कि क्या इस तथ्य के बावजूद कि दोनों प्रमाणक गवाह मर चुके थे, साक्ष्य अधिनियम की धारा 69 के तहत साबित किया जाने वाला मामला साक्ष्य अधिनियम की धारा 68 के तहत साबित किए जाने वाले मामले के समान है। दूसरे शब्दों में, साक्ष्य अधिनियम की धारा 68 के तहत, भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 63 के तहत आने वाली वसीयत के मामले में, यह अपरिहार्य है कि कम से कम एक प्रमाणक गवाह से न केवल उसके द्वारा प्रमाणन साबित करने के लिए पूछताछ की जानी चाहिए, बल्कि उसे दूसरे प्रमाणक गवाह द्वारा प्रमाणन भी साबित करना चाहिए [1995 (6) एस. सी. सी. 212 देखें]। इस न्यायालय का विचार है कि जबकि यह हैवसीयत और प्रमाणन को साबित करने के लिए एकल प्रमाणक गवाह की जांच करने के लिए, यह उसके लिए बाध्यकारी है कि वह न केवल स्वयं बल्कि अन्य प्रमाणक गवाह द्वारा भी प्रमाणन साबित करे। प्रत्यर्थियों का यह तर्क है कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 69 के तहत, प्रदर्शनी–बी7 कानून की उस आवश्यकता से कम है जो दोनों गवाहों द्वारा फांसी के प्रमाणन को साबित करती है। प्रदर्शनी–बी7 के माध्यम से हमें ले जाने के बाद, यह बताया गया कि यह स्पष्ट है कि उक्त बयान में भी, गवाह [2020] 9 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

दूसरे गवाह द्वारा प्रमाणन के बारे में गवाही नहीं दी है, अर्थात। , डॉ. सी. एस. रामास्वामी अय्यर दूसरी ओर, अपीलार्थियों का तर्क और जिसे प्रथम अपीलीय न्यायालय से अनुमोदन मिल गया है, यह है कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 69 केवल यह अपेक्षा करती है कि

उसकी लिखावट में कम से कम एक प्रमाणक गवाह साबित किया जाना चाहिए। यह, निश्चित रूप से यह साबित करने के अलावा है कि निष्पादन करने वाले वसीयतकर्ता के हस्ताक्षरदस्तावेज़ उस व्यक्ति की लिखावट में है।

एक प्रमाणक गवाह उपलब्ध है, वसीयत को उसकी जाँच करके साबित किया जाना है। उसे न केवल यह साबित करना चाहिए कि प्रमाणन उसके द्वारा किया गया था, बल्कि उसे दूसरे प्रमाणक गवाह द्वारा प्रमाणन भी साबित करना चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह उस स्थिति के अधीन है जिस पर साक्ष्य अधिनियम की धारा 71 में विचार किया गया है, जो अन्य दस्तावेजों के साथ-साथ वसीयत के प्रमाण में अन्य सबूतों को प्रस्तुत करने की अनुमति देता है, जहां सत्यापित करने वाला गवाह वसीयत या अन्य दस्तावेज़ के निष्पादन से इनकार करता है या उसे याद नहीं करता है। दूसरे शब्दों में, एक दस्तावेज़ के तहत हस्तांतरणकर्ता या एक वसीयतदार का भाग्य, जो कानून द्वारा सत्यापित किया जाना आवश्यक है, सत्यापित करने वाले गवाह की दया पर नहीं रखा जाता है और कानून प्रमाणित करने वाले गवाह द्वारा दस्तावेज़ के निष्पादन से इनकार करने के बावजूद दस्तावेज़ को प्रभावी बनाने में सक्षम बनाता है।

दस्तावेज़ को निष्पादित करने वाला व्यक्ति अपनी लिखावट में साबित होता है, फिरएक प्रमाणित करने वाले गवाह का प्रमाणन उसकी लिखावट में साबित होना चाहिए। दूसरे शब्दों में, साक्ष्य अधिनियम की धारा 69 के तहत आने वाले मामले में, साक्ष्य अधिनियम की धारा 68 के लिए प्रासंगिक आवश्यकता है कि –

धारा के तहत यह आवश्यकता है कि दोनों गवाहों द्वारा प्रमाणन साक्ष्य अधिनियम की धारा 69 के तहत आने वाले मामले में साबित किया जाए। में। संक्षेप में, साक्ष्य अधिनियम की धारा 69 के तहत आने वाले मामले में, जहां तक प्रमाणक गवाह का संबंध है, जो साबित किया जाना है, वह यह है कि प्रमाणक गवाहों में से एक का प्रमाणन उसकी लिखावट में है।

वी. कल्याणस्वामी (डी) बायल्स। & एएनआर। वी.

भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. द्वारा। & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

खंड की आयु स्पष्ट और असंदिग्ध है। की धारा 68

अधिनियम, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा व्याख्या की गई है, गवाहों को प्रमाणित करने के लिए प्रमाणन पर विचार करता है। लेकिन साक्ष्य अधिनियम की धारा 69 में इसकी आवश्यकता नहीं है।

72. अब, हम प्रदर्शनी-बी7 की ओर मुड़ते हैं। यह उचित है कि हम विज्ञापन देते हैं

इनमें से ईः

" मैं मृतक रंगास्वामी नायडू को जानता हूं। उन्होंने एक वसीयत लिखी।

और मुझे इसे प्रमाणित करने के लिए कहा। मैं चला गया। उन्होंने मुझे इसकी पुष्टि करने के लिए कहा। द.

पहला हस्ताक्षर मेरा है। वसीयत Ex है। पी-68। हर पृष्ठ रहा है

मृतक द्वारा हस्ताक्षरित। अंतिम पृष्ठ पर हस्ताक्षर करने के बाद, मैंने हस्ताक्षर कियागवाह। डॉक्टर सी. एस. रामास्वामी अय्यर डॉक्टर हैं।

रामनाथपुरम। वह भी उपस्थित थे। मैं उपस्थित था जब वह था

पंजीकृत। उप–पंजीयक घर आए। मैंने भी हस्ताक्षर किए हैं।

उप–पंजीयक के समक्ष। मृतक बीमार था। वह सक्षम था चीजों को समझें। मैं एक आयकर व्यवसायी हूँ।

क्रॉस परीक्षा। : उस समय मैं डेढ़ या दो स्थानों पर रह रहा था।

मृतक के घर से मीलों दूर। मैं वहाँ गया।

मृतक का घर लगभग 10 बजेः 30 ए. एम. मैंने लगभग 11–30 पर हस्ताक्षर किए

12 दोपहर। मेरे वहाँ जाने के बाद डॉक्टर आए। वह 11.30 ए. एम. पर आया।

मुझे नहीं पता कि डॉक्टर उनकी देखभाल करने आए थे या नहीं।

इस दस्तावेज़ को प्रमाणित करने के लिए। बाद में उप–पंजीयक आए।

दोपहर लगभग 1 बजे मैं उप–पंजीयक के आने तक रहा। लेकिन

डॉक्टर चले गए। उप–पंजीयक 1–30 पर चला गया2 पी. एम. डॉक्टर बाद में नहीं लौटे। डॉक्टर वहाँ कुल के लिए था

15 मिनट की अवधि। मुझे याद है कि उन्होंने एक इंजेक्शन दिया था। लेकिन मैं हूँ।

इसका यकीन नहीं है। जब मैं वहाँ गया तो वसीयत पहले ही टाइप हो चुकी थी।रंगासामी नायडू बिस्तर पर लेटे हुए थे। उसे खिलाया जा रहा था

क्या कोई दवा दी गई थी। पृष्ठ 1 में स्याही के अंश और 4 मुझे नहीं पता कि इसे दस्तावेज़ के मुख्य भाग में किसने लिखा था। यह.

यहाँ सदस्यता नहीं ली गई है कि इसे किसने लिखा या टाइप किया है। द.

मृतक के सिर में चोट लगी थी और वह पीड़ित था। वह.

दर्द और पीड़ा में था। मैंने उसे कम से कम परेशानी दी।

अपने स्वास्थ्य में रुचि रखते हैं। कभी–कभी दर्द से उबरने के लिए

और थका हुआ वह चुपचाप लेट जाता। उसे परेशान न करने के लिए हम

पूछा।

(sic) संयम। मैं यह नहीं कह सकता कि हर मिनट

वह होश में था या आधा होश में या कोमा में था।

[2020] 9 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

पुनः परीक्षा। जब उन्होंने मुझसे बात की तो वे होश में थे।

(एस. डी.) बी. वेंकटस्वामी नायडू, 1-2-56।

मेरे द्वारा खुले कोर्ट में गिराया गया, पढ़ा गया और स्वीकार किया गया

सही होना। (एस. डी.) के. एस. नरसिम्हन, ईएफसीएम। 1-2-56 . "

(जोर दिया गया)

73. हमें इस स्तर पर एक अन्य पहलू से भी हिरासत में लिया जाना चाहिए।

भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 69 के बारे में। धारा 69 वसीयत को उसमें दिए गए तरीके से साबित करने के बारे में बात करती है। साक्ष्य अधिनियम की धारा 3 में 'सिद्ध' शब्द को निम्नानुसार परिभाषित किया गया हैः -

इसका अस्तित्व इतना संभावित है कि एक बुद्धिमान व्यक्ति को इसके तहत होना चाहिए विशेष मामले की परिस्थितियाँ, अनुमान पर कार्य करने के लिए

कि यह मौजूद है "।

74. इसलिए, सवाल यह होगा कि क्या

69 , न्यायालय साक्ष्य पर अपना दिमाग लगाने और यह पता लगाने के लिए कि क्या धारा 69 की आवश्यकताएं साबित हुई हैं, अपने बोझ से मुक्त नहीं है। दूसरे शब्दों में, साक्ष्य की विश्वसनीयता या गवाहों की विश्वसनीयता है एक ऐसा मामला जिस पर न्यायालय को अभी भी विचार करना है। जहाँ तक इस मामले का संबंध है, सत्यापित करने वाले गवाहों में से एक का साक्ष्य बी7 में निहित है और

जिसे हमने धारा 33 के तहत प्रासंगिक पाया है, यह स्थापित करता है कि वह एक आयकर व्यवसायी था। उन्हें रंगास्वामी नायडू ने इशारा किया और बताया कि उन्होंने एक वसीयत लिखी है और इसे सत्यापित किया जाना है। उस दिन वहाँ जाने पर भी उन्हें वास्तव में सत्यापित करने के लिए कहा गया था। वह हर पृष्ठ पर वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर करने के बारे में बात करता है और साथ ही, उसने अपने हस्ताक्षर करने के बारे में भी बात की है। इसलिए, इसमें कोई संदेह नहीं है कि वह सत्यापित करने वाले गवाहों में से एक के हस्ताक्षर के संबंध में धारा 69 की आवश्यकता को स्थापित करता है।

उसकी लिखावट में साबित किया जा रहा है। हम गवाही पर संदेह करने का कोई कारण नहीं देखते हैं। जहाँ तक वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर का संबंध है, बी7 और बी13 के अलावा, निष्पादक ने वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर की बात

की है। इसके अलावा, पीडब्लू1 ने अपदस्थ कर दिया है कि उसे वसीयत दिखाई गई थी, उसने स्वीकार किया कि हर पृष्ठ निहित है

पैतृक चाचा के हस्ताक्षर के साथ। इस प्रकार, धारा 69 के तहत वसीयत के प्रमाण की आवश्यकता पूरी हो जाती है।

वी. कल्याणस्वामी (डी) एलआरएस द्वारा। & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

बी10 की दूसरी बार प्राप्ति

सबूत कानूनी?

75. चाहे बी10 की स्वीकृति जो वसीयत की प्रमाणित प्रति है, कानून में या तथ्यों पर असुरक्षित है। निचली अदालत ने पाया है कि

बी68 मूल वसीयत है जिसे सी. आर. पी. सी. की धारा 145 के तहत कार्यवाही में मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया गया था। यह उत्तरदाताओं के इस तर्क को समाप्त करने के बाद है कि बी68 मूल वसीयत नहीं थी। निचली अदालत ने माध्यमिक के खिलाफ आपत्ति में बहुत कम योग्यता पाई है

वसीयत का प्रमाण, अर्थात। , पंजीकृत वसीयत की प्रमाणित प्रति प्रस्तुत की जा रही है। वास्तव में हमारे पास बी7 और एक्स 1 के रूप में सबूत हैं जो यह दर्शाते हैं कि वसीयत पंजीकृत होने के लिए आई थी।

76. अपीलार्थियों के मामले के अनुसार वसीयत का मूल निष्पादक के पास बना रहा जो वास्तव में उनके भतीजे थे।

आर. कृष्णम्मल, रंगस्वामी नायडू की विधवा। एक प्रयास था

मूल वसीयत को उस समय प्रस्तुत करने के लिए बनाया गया जब निष्पादक का निधन हो गया था, इस आधार पर कि उसके बेटे के पास मूल वसीयत थी। उन्हें सी1 द्वारा वसीयत तैयार करने के लिए बुलाया गया था। उन्होंने यह बताते हुए जवाब दिया कि उनके पास मूल वसीयत नहीं थी। प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा पुष्टि किए गए विचारण न्यायालय के निष्कर्ष में कहा गया है कि परिस्थितियां वसीयत को साबित करने के लिए द्वितीयक साक्ष्य को स्वीकार करने की गारंटी देती हैं। हम अलग दृष्टिकोण रखने का कोई कारण नहीं देखते हैं और उच्च न्यायालय द्वारा लिए गए दृष्टिकोण को कायम नहीं रखा जा सकता है।

77. यह सच हो सकता है कि 1958 की ओ. एस. संख्या 71 और 1963 की ओ. एस. संख्या 36 की कार्यवाही में वसीयत को सबसे पहले आर. कृष्णम्मल द्वारा पेश किया गया था।

और उसके बाद, 1963 के ओ. एस. सं. 36 में पादरी जो हमारे समक्ष अपीलकर्ताओं में से हैं। लेकिन, यह मामला सुनवाई के लिए नहीं गया। हमारा यह भी विचार है कि वसीयत को साक्ष्य अधिनियम के तहत साबित किया जाना चाहिए, न कि 1963 के ओ. एस. संख्या 36 में डिक्री के आधार पर अपीलकर्ताओं द्वारा की गई रोक

की याचिका के संदर्भ में, जो वसीयत पर आधारित है और उत्तरदाताओं ने समझौते में भी पक्षकारों के रूप में भाग नहीं लिया है, लेकिन यह निष्कर्ष निकालने से बहुत दूर है कि मामले के तथ्य वसीयत के संबंध में द्वितीयक साक्ष्य को स्वीकार करने की गारंटी नहीं देते हैं।

इच्छाशक्तिः चाहे वह सामान्य इच्छा हो

रंगास्वामी नायडू? फिर भी यह किसी भी मैदान पर प्रभावित होता है?

78. हम निम्नलिखित को वसीयत के प्रासंगिक भागों के रूप में देखते हैंः

" एंडापिल्लर के पुत्र श्री वी. रंगास्वामी नायडू एमएलसी द्वारा मई 1995 के इस 10 वें दिन अंतिम वसीयत और वसीयतनामा निष्पादित किया गया।

उप्पिलिपलायम कोयंबटूर वालुक प्रथम के वेंकटस्वामी नायडू के पास अचल संपत्तियां हैं जो यहाँ Sch.A में निर्धारित हैं।

1932 में लकाशमैया नायडू और जो उस तारीख से मेरे अनन्य अधिकार और आनंद में हैं, मैं 1932 से एक विभाजित सदस्य रहा हूं और आज तक ऐसा ही रहा हूं। मुझे इस संबंध में किसी भी अनिश्चितता से बचने के लिए आज अपनी विभाजित स्थिति की खुली घोषणा की। अचल संपत्तियों के अलावा मैं नकदी और अन्य राशियों का हकदार हूं जैसा कि यहाँ Sch.B में निर्धारित किया गया है कि मुझे अपनी संपत्ति का जमाकरण करना चाहिए। जिस तरह से यहां मेरे हाल के खराब स्वास्थ्य और असफल शक्ति को देखते हुए और मेरे मतभेद को देखते हुए भी संकेत दिया गया है क्योंकि मैं लंबे समय तक जीवित नहीं रह सकता हूं, मैं अपनी मानसिक शक्तियों के पूर्ण अधिकार में नहीं हूं और मैं इस इच्छा और नियम को गहन विचार-विमर्श और विचार के बाद बना रहा हूं और सर्वोत्तम इरादों के साथ श्री रामचंद्र बाइडू को कंगल्लर वेंकटस्वामी नायडू के पुत्र नियुक्त कर रहा हूं।

अलगिरिस्वामी कृष्णम्मल के पुत्र, मेरी आखिरी बहन। यह मेरी हार्दिक इच्छा है कि ये चार व्यक्ति अपनी संपत्तियों को अपने पास रखें।संबंधित परिवारों को उनका निपटान नहीं करना चाहिए, लेकिन आवश्यकता पड़ने पर उन्हें पहले उन्हें किसी अन्य शेयर को बेचना चाहिए। एस. एच. बी. में निर्धारित नकदी और अन्य प्रतिभूतियों का मूल्य Rs.44,000/- (चालीस हजार रुपये) को एल. आर. एस. द्वारा वी. कल्याणस्वामी (डी) के रूप में प्राप्त किया जाना चाहिए।

मेरी मृत्यु के बाद जितनी जल्दी हो सके और निम्नलिखित तरीके से निम्नलिखित व्यक्ति को भुगतान किया जाएगा। श्रीमती अमिर्तिम श्री की पत्नी

कल्याणस्वामी ने कहा Rs.10,000.0। 0 , 2. अम्मानम्मल मेरी दूसरी बहन Rs.10,000.0। 0 3. नागम्मल मेरी तीसरी बहन

8 रुपये, 000.0। 0 4. रंगनायकियाम्मल मेरी बहन रु. 8,000.0। 0

5. कृष्णम्मल, मेरी पाँचवीं और आखिरी बहन, 8,000 रुपये, 0.00 मैं पहले ही अपनी पत्नी के लिए वसीयत के तहत संपत्तियों के अलावा कुछ अन्य प्रावधान कर चुका हूँ, वे इन प्रावधानों से किसी भी तरह से प्रभावित नहीं होते हैं। वह उन चल संपत्तियों की हकदार है जो यहां की अनुसूची में शामिल नहीं हैं। ..... वी. रंगास्वामी, 3. ..... यह मेरा पहला इच्छा और नियम सभी पिछले स्वभाव और इरादा

अंत में प्रवृत्तियों को निरस्त कर दिया जाता है। यह होगामेरे जीवनकाल के बाद प्रभाव। .....

विशेष रूप से और अपने अधिकार में। कथित संपत्तियों में उनके द्वारा खरीदी गई संपत्तियां और 1932 में उनके और उनके भाई के बीच उनके परिवार के विभाजन में उन्हें आवंटित संपत्तियां शामिल हैं। उन्होंने आगे कहा कि वे 1932 से विभाजित सदस्य रहे हैं और बने हुए हैं।तो वसीयत की तारीख तक। अंत में, उनका कहना है कि उन्होंने किसी भी अनिश्चितता से बचने के लिए आज अपनी विभाजित स्थिति की खुली घोषणा की। वसीयत आगे उन राशियों को संदर्भित करती है जो वह अनुसूची बी में निर्धारित राशि का हकदार है। अनुसूची ए में पूरी संपत्ति, जिसमें उसका घर भी शामिल है, उसकी पत्नी के लिए अलग होने की शक्तियों के बिना निर्धारित की गई है। वह आगे कहता है कि वह उम्मीद करता है कि उसकी पत्नी भूमि संपत्तियों से होने वाली आय का उपयोग औपचारिक और विशेष अवसरों पर उपहारों के खर्च को पूरा करने के लिए करेगी।

बहनों के परिवार अपने परिवार के खर्च, घर के रखरखाव को पूरा करने के बाद। एक शेष है, प्रकृति में निरपेक्ष, उसके चार को दिया गया है।

अपने चार बहनों के माध्यम से उसके भतीजे, यानी लीगेटीज। उन्होंने अपनी गंभीर इच्छा व्यक्त की कि चारों उत्तराधिकारियों को अपने-अपने परिवारों के लिए संपत्तियों को रखना चाहिए और उनका निपटान नहीं करना चाहिए, लेकिन आवश्यकता पड़ने पर उन्हें पहली बार में किसी अन्य हिस्सेदार को बेचना चाहिए। ध्यान देने योग्य अंतिम भाग यह कथन है कि उन्होंने वसीयत के तहत संपत्तियों के अलावा अपनी पत्नी के लिए पहले ही अन्य प्रावधान कर लिए हैं।

80. एक पहलू है जिसे हमारे सामने भी, उसी संबंध में, उत्तरदाताओं द्वारा दबाया जाता है। यह तर्क दिया जाता है कि वहाँ

1932 में भाइयों के बीच कोई मौखिक विभाजन नहीं है, यह एक ऐसा मामला है जहां वसीयतकर्ता ने वसीयत में एक गलत बयान दिया है जो वसीयत को ही वास्तविक नहीं मानता है।

81. वसीयत में गलत बयान के बारे में पहलू के संबंध में, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि वसीयत में पूरी तरह से गलत बयान देना उत्तेजित करता है।

शक होता है। यह इस सिद्धांत पर है कि वसीयतकर्ता वसीयत करते समय गलत बयान नहीं देगा। यदि वह एक रैंक गलत बयान देता है तो अनुमान यह है कि उसने वह वसीयत नहीं की होगी। यह सिद्धांत इस मामले के तथ्यों में लागू नहीं होगा। यह बयान देना कि 1932 में विभाजन हुआ था और संपत्तियां उन्हें आवंटित की गई थीं, जाहिर तौर पर वसीयतकर्ता की समझ है। इस मुद्दे ने अदालतों में बहस पैदा कर दी। वसीयतकर्ता द्वारा व्यक्त किए गए विचार को अदालतों का समर्थन नहीं मिला, लेकिन यह एक सरासर गलत बयान के रूप में वर्णित करने से बहुत दूर है। जब तक यह वसीयतकर्ता द्वारा की गई वसीयत का एक हिस्सा है और उसे इसमें विश्वास है, इस संबंध में अदालत द्वारा दिया गया निष्कर्ष प्रतिवादी के मामले को आगे नहीं बढ़ाएगा।

82. हम आगे निम्नलिखित पहलुओं पर ध्यान देते हैंः

रंगस्वामी नायडू एक शिक्षित व्यक्ति थे। वे एक पूर्व एम. एल. सी. थे। वे एक संपन्न व्यक्ति थे। उसे कोई परेशानी नहीं है। वे अपनी बहनों के प्रति स्नेही थे। उन्होंने अपनी बहनों की प्रत्येक शाखा का पक्ष लेने का फैसला किया है। प्रत्येक शाखा में से एक पुत्र को उत्तराधिकारी के रूप में चुनकर जिसमें संपत्ति निहित होनी थी। वास्तव में, उन्होंने यह भी प्रावधान किया है कि संपत्तियां परिवार में ही रहें और यदि कोई भी उत्तराधिकारी बेचना चाहता है, तो इसे अन्य उत्तराधिकारियों को दिया जाना चाहिए। जहाँ तक उनके स्वास्थ्य की बात है, यह अच्छी तरह से तय है कि ध्वनि निपटान क्षमता की आवश्यकता नहीं है।शारीरिक कल्याण के साथ भ्रमित होना। एक व्यक्ति जिसे शारीरिक बीमारी है, इसलिए हो सकता है कि वह अपनी ध्वनि निष्पादन क्षमता से वंचित न हो।

यह तथ्य कि कोई व्यक्ति शारीरिक बीमारी से पीड़ित है या वह अत्यधिक दर्द में है, उसे वसीयत बनाने की क्षमता से वंचित नहीं करेगा। महत्वपूर्ण बात यह है कि क्या वह इस बात से अवगत है कि वह क्या कर रहा है और इच्छाशक्ति यह दर्शाती है कि उसने क्या निर्णय लेने के लिए चुना है। हालांकि यह सच हो सकता है कि वह गले के कैंसर से पीड़ित थे, लेकिन सबूतों में यह संकेत देने के लिए कुछ भी नहीं है कि वह वसीयत को पीछे छोड़ने के मामले में अपना मन बनाने में असमर्थ थे। यह तथ्य कि उन्हें एक नली द्वारा खिलाया जा रहा था, शायद ही उन्हें वसीयत बनाने की उनकी क्षमता से वंचित कर सकता था। हम आगे देखते हैं कि वसीयत एक पंजीकृत वसीयत है। पंजीयक घर आए। प्रदर्शनी एक्स 1 से पता चलता है कि रंगास्वामी नायडू को जब अपने अंगूठे का निशान लगाने के लिए कहा गया, तो उन्होंने हस्ताक्षर करने पर जोर दिया। हमारे विचार में, इस आचरण की पहली अपीलीय अदालत, तथ्यों पर अंतिम अदालत द्वारा सही ढंग से सराहना की गई है। इसके विपरीत जो निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए, वह हमें आकर्षित नहीं करता है। साक्ष्य से यह भी स्पष्ट है कि दूसरा एल. आर. एस. द्वारा वी. कल्याणस्वामी (डी) को प्रमाणित करता है।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

डॉ. सी. एस. रामास्वामी अय्यर गवाह थे, जो काफी प्रसिद्ध चिकित्सक और पारिवारिक मित्र थे। पीडब्लू1, प्रतिवादी की ओर से गवाह ने स्वयं उक्त डॉक्टर के निधन पर श्रद्धांजलि प्रकाशित करना स्वीकार किया है।

पीडब्लू1 उसके बारे में एक सज्जन के रूप में बात करता है और वह अवैध तरीके से काम नहीं करेगा। बी7 में दूसरे प्रमाणक गवाह ने भी डॉक्टर के वहाँ रहने और पंजीयक के आने से पहले चले जाने के बारे में बात की है। हम पहले ही मान चुके हैं कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 69 की आवश्यकता अन्यथा पूरी होती है। यह तथ्य कि लक्ष्मीया नायडू के पुत्रों के पक्ष में कोई वसीयत नहीं की गई है, को संदिग्ध नहीं माना जा सकता है। परिस्थिति. यह स्पष्ट है कि लक्ष्मीया नायडू बहुत अमीर थे। अपनी पत्नी के भतीजे को वसीयत का निष्पादक बनाना, वास्तव में, हमें इस बात का आश्वासन देता है कि वसीयतकर्ताओं की ओर से कोई गड़बड़ी नहीं है। अपने साक्ष्य में [बी13 जो 145 कार्यवाहियों में निष्पादक द्वारा दिया गया साक्ष्य है], उन्होंने वसीयतकर्ता के बारे में बात की है जो 2-3 मौकों पर वसीयत को निष्पादित करने की इच्छा व्यक्त करता है। पीडब्लू1 द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य से भी, हम सोचेंगे कि वसीयत के संबंध में पहली अपीलीय अदालत द्वारा लिए गए दृष्टिकोण को दूसरी अपील में हस्तक्षेप की गारंटी देने वाले विकृत दृष्टिकोण के रूप में वर्णित नहीं किया जा सकता है।

83. अंत में, जबकि वसीयत को साबित करने और अदालत की अंतरात्मा को संतुष्ट करने का बोझ है कि कोई संदिग्ध परिस्थितियाँ नहीं हैं या यदि

उन्हें समझाने के लिए कुछ भी है जो वसीयत के प्रस्तावक पर है, यह साबित करने का बोझ है कि वसीयत जबरदस्ती, अनुचित प्रभाव या धोखाधड़ी से प्राप्त की जाती है उन उत्तरदाताओं पर जिन्होंने ऐसा ही आरोप लगाया है। पीडब्लू1 के साक्ष्य से पता चलेगा कि उत्तरदाता यह साबित करने में विफल रहे हैं कि इस संबंध में वसीयत दूषित है। इसलिए, हम इस निष्कर्ष पर पहुंचेंगे कि वसीयत वास्तव में आर. नायडू द्वारा निष्पादित की गई थी और यह उनकी अंतिम वसीयत थी।

84. निस्संदेह, रंगास्वामी नायडू और लक्ष्मीया नायडू

वे भाई थे, एक हिंदू कॉपरसेनरी में सह-भागीदार थे। अपीलार्थियों का मामला उनके हिंदू संयुक्त परिवार से अलग होने पर आधारित है। अभिव्यक्ति 'हिंदू संयुक्त परिवार' इस मामले के संदर्भ में है, जिसे सह-पक्ष के रूप में समझा जाना चाहिए। का तर्क

दूसरी ओर, लक्ष्मीया नायडू शाखा का प्रतिनिधित्व करने वाले उत्तरदाता

यह है कि, जब रंगस्वामी नायडू की मृत्यु 01.06.1955 पर हुई और जब, इसलिए, उनकी संपत्ति का उत्तराधिकार खोला गया, तो लक्ष्मीया नायडू उत्तराधिकारी बने।

रंगस्वामी नायडू के रूप में अपने भाई की संपत्ति की बिना किसी विवाद के मृत्यु हो गई और इसलिए, कानून के तहत, जैसा कि उस तारीख को था, लक्ष्मीया नायडू उत्तरजीविता द्वारा संपत्ति में सफल हुए।

85. अपीलार्थियों का मामला वास्तव में इस बात पर आधारित है कि वर्ष 1932 में दोनों भाइयों के बीच मौखिक विभाजन हुआ था। तीन।

अदालतों को इस तर्क में कोई दम नहीं मिला है। वास्तव में, अपीलकर्ताओं ने भी हमारे सामने इस तर्क को आगे नहीं बढ़ाया। दूसरी ओर, हमारे सामने जो तर्क रखा गया है, वह यह है कि जब इस तरह के उत्तराधिकार को रंगास्वामी नायडू की संपत्ति के लिए 'आईडी1' पर खोला गया, तो रंगास्वामी नायडू ने 'आईडी2' दिनांकित बी1 नोटिस प्रकाशित किया, जिससे संयुक्त परिवार में व्यवधान पैदा हुआ और इसलिए, रंगास्वामी नायडू की मृत्यु उनके भाई से अलग हो गई। इसके अलावा, अपीलार्थी का मामला बी10 पर आधारित है–निष्पादित किया जाएगा और रंगास्वामी द्वारा 10.05.1955 पर भी पंजीकृत किया जाएगा।

नायडू।

हिंदू संयुक्त परिवार में रुचि; भागीदारी; यह है

प्रभाव 86. इन विवादों के आलोक में, हिंदू संयुक्त परिवार से संबंधित अवधारणाओं, इसके जारी रहने के प्रभाव, की जांच करना आवश्यक है।

जिस तरह से, संयुक्त परिवार समाप्त हो जाता है और 'संयुक्त परिवार का विभाजन' अभिव्यक्ति के अर्थ के अलग–अलग रंग भी। इसके अलावा, हमें वसीयत बनाने के संबंध में एक हिंदू के अधिकार और उस पर सीमा पर विचार करना चाहिए।

87. एपोवियर वी. राम सुब्बा अयान और अन्य 3, प्रिवी काउंसिल के पास इन अवधारणाओं पर विचार करने का अवसर था। इससे पहले अपीलार्थी

न्यायालय, जो भारत के तीनों न्यायालयों में असफल रहा, ने तर्क दिया कि हिंदू संयुक्त परिवार में विभाजन होने के बावजूद, यह अभी भी प्रभावी नहीं था क्योंकि यह पूर्ण रूप से विभाजन में समाप्त नहीं हुआ था। इस प्रश्न पर विचार करते हुए न्यायालय ने अन्य बातों के साथ–साथ निम्नलिखित निर्णय दिया:

" 1. यह मद्रास में सुडर न्यायालय के एक आदेश से लाई गई एक अपील है, जिसने मद्रास के जिला न्यायालय के आदेश की पुष्टि की थी।

टिनेवेल्ली, जिसने स्वयं उस जिले के सुद्दर अमीन के मूल फरमान की पुष्टि की। इसलिए, यह तीन फरमानों की अपील है, जो अपीलार्थी के दावे को खारिज करने में सर्वसम्मत है। वर्तमान अपील इस आरोप पर आधारित है कि कुछ संपत्ति (जिन शेयरों में अपीलार्थी द्वारा दावा किया जाता है) उस परिवार की अविभाजित संपत्ति बनी हुई है जिसका अपीलार्थी सदस्य था और जो मूल रूप से एक अविभाजित परिवार था। अपीलार्थी के दावे के बचाव का आधार एक साधन है,

35 [1866] 11 M.I.A.75 वी. कल्याणस्वामी (डी) बी. एल. आर. एस. & एएनआर। वी.

भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. द्वारा। & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

जिसे हम वर्तमान उद्देश्य के लिए 22 मार्च, 1834 का विभाजन विलेख कहेंगे। 2. अपीलार्थी द्वारा कुछ सिद्धांतों या कानून के कथित नियमों के पक्ष में दृढ़ता से तर्क दिया गया है। उनमें से एक यह है कि यदि किसी अविभाजित परिवार के सदस्यों के बीच विभाजन का कोई विलेख है, जो बताता है कि उस परिवार की संपत्ति के विभाजन पर सहमति हो गई है, तो वह विलेख अविभाजित संपत्ति को विभाजित संपत्ति में बदलने के लिए अप्रभावी है।

जब तक यह मीट्स और बाउंड्री द्वारा एक वास्तविक विभाजन द्वारा पूरा नहीं हो जाता है।

3. उनके प्रभुत्व यह नहीं पाते हैं कि ऐसा कोई सिद्धांत स्थापित किया गया है; और उनके प्रभुत्वों को यह तर्क प्रतीत होता है कि वे उपाधि के विभाजन को पद के साथ भ्रमित करने में त्रुटि पर आगे बढ़ते हैं। उस विषय का विभाजन जिस पर शीर्षक लागू किया जाता है।

तब से कुछ परिभाषित शेयरों में स्वामित्व का विषय होना चाहिए, तब अविभाजित संपत्ति और संयुक्त उपभोग का स्वरूप है –विषय से लिया गया–इस तरह से निपटाने के लिए सहमत मामला; और संपत्ति में प्रत्येक सदस्य के पास तब से एक निश्चित और निश्चित हिस्सा है, जिसे वह प्राप्त करने और कई में आनंद लेने के अधिकार का दावा कर सकता है, हालांकि संपत्ति को वास्तव में अलग और विभाजित नहीं किया गया है।

XXX

XXX

XXX

XXX

12. फिर, यदि एक की संयुक्त किरायेदारी का रूपांतरण होता है

अविभाजित परिवार उस अविभाजित परिवार के सदस्यों के समान किरायेदारी में, अविभाजित परिवार एक विभाजित परिवार बन जाता है [2020] 9 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

उस संपत्ति के संदर्भ में जो उस समझौते का विषय है,

और यह ब्याज और अधिकार में एक अलगाव है, हालांकि नहीं

इसके तुरंत बाद विषय का वास्तविक विभाजन किया गया। बात है। यह किसी भी समय अलग के आधार पर दावा किया जा सकता है

सही है। ”

(जोर दिया गया)

88. अब प्रिवी काउंसिल के फैसले पर ध्यान देना उचित है।

गिरजा बाई बनाम में बताया गया है। सदाशिव धुंडीराज और अन्य 3 6. उक्त में

इस मामले में, एक संयुक्त मिताक्षर हिंदू परिवार के सदस्यों में से एक ने अपने एक तिहाई हिस्से को विभाजित करने की इच्छा व्यक्त करते हुए एक नोटिस दिया। इसके बाद, उन्होंने विभाजन के लिए मुकदमा दायर किया। मुकदमे के लंबित रहने के दौरान, वादी की मृत्यु हो गई और उसकी विधवा जीवित रह गई। वह प्रतिस्थापन के लिए चली गई। प्रतिवादियों द्वारा इसका इस आधार पर विरोध किया गया था कि उसकी मृत्यु के समय, वादी एक संयुक्त हिंदू परिवार का अविभाजित सदस्य था और उसकी मृत्यु पर, उसका हिस्सा उत्तरजीविता द्वारा उन्हें दिया गया था। यह इस तथ्य के बावजूद है कि इससे पहले, मुकदमे में, प्रतिवादियों ने वादी के दावे को स्वीकार किया था और तर्क दिया था कि वे संपत्ति को विभाजित करने के लिए तैयार थे और मुकदमा अपरिपक्व था। अदालत ने पंडित सूरज नारायण और एक अन्य v में रिपोर्ट किए गए प्रिवी काउंसिल के पहले के फैसले का उल्लेख किया। पंडित इकबाल नारायणंद अन्य 3 7। यह ध्यान देना प्रासंगिक है कि अदालत ने क्या निर्धारित किया:

" 25. उनके अधिपतियों को ऐसा प्रतीत होता है कि अपीलीय न्यायालय

संदर्भ ऊपर दिया गया है, अर्थात। , स्थिति का विच्छेदजो शेयरों के आवंटन के साथ व्यक्तिगत इच्छा का मामला है।

जो निजी द्वारा विभिन्न तरीकों से प्रभावित हो सकता है

समझौता, पक्षों द्वारा नियुक्त मध्यस्थों द्वारा, या, अंतिम में

आश्रय, न्यायालय द्वारा "।

एपोवियर (ऊपर) में बयानों का उल्लेख करने के बाद, न्यायालय ने

निम्नलिखित रूप में आयोजित किया गया:

" 28. भारत के कुछ न्यायालयों ने लॉर्ड माना है।

वेस्टबरी की अभिव्यक्तियाँ यह दर्शाती हैं कि स्थिति का विच्छेद हो सकता है

केवल समझौते से होता है। उनके प्रभुओं को इसमें कोई संदेह नहीं है कि

यह एक गलत दृष्टिकोण है। बोर्ड वहाँ एक मामले से निपट रहा था

जिसमें अधिकार का विभाजन पहले ही हो चुका था, जैसा कि प्रमाणित है

36 ए. आई. आर. 1916 पी. सी. 104 37 (1912–13) 40 आई. ए. 40; (1913) 11 ऑल एल. जे. 172 वी. कल्याणस्वामी (डी) एल. आर. एस. द्वारा।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

"विभाजन के विलेख" द्वारा। इस संयुक्त संपत्ति में प्रत्येक सदस्य का जो अधिकार था, वह विलेख या दस्तावेज़ से उत्पन्न नहीं हुआ था।

पक्षकारों का समझौता जिसके लिए उसने अभिव्यक्ति दी; समझौता केवल प्रत्येक व्यक्ति में मौजूदा अधिकारों को मान्यता देता है

सदस्य जिसे वह अपनी पसंद के किसी भी समय दावा करने का हकदार था। 29 . अलग होने का इरादा अलग-अलग तरीकों से व्यक्त किया जा सकता है, या तो

स्पष्ट घोषणा या आचरण द्वारा।

89. इसके बाद, हमें इस न्यायालय के तीन विद्वान न्यायाधीशों की पीठ द्वारा दिए गए फैसले पर ध्यान देना चाहिए, जिसकी रिपोर्ट अड्डगडा राघवम्मा में दी गई है।

90. न्यायालय अभिलेख पर साक्ष्य पर विस्तृत रूप से विचार करने के लिए आगे बढ़ा और इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि साक्ष्य अपीलार्थी के तर्क का समर्थन नहीं करता है जो यह था कि 1894 में, वर्ष 1946 में वसीयत निष्पादित होने से बहुत पहले, एक विभाजन हुआ था। इसके बाद, प्रस्तुत की गई राय में निम्नलिखित अनुच्छेदों पर ध्यान देना आवश्यक हैअदालत द्वाराः

" 25. अब हम वसीयत से निपटने के लिए आगे बढ़ेंगे, Ex। ए-2 (ए), जिस पर विद्वान अधिवक्ता द्वारा मजबूत निर्भरता रखी जाती है

जनरल ने अपने इस तर्क के समर्थन में कि 14 जनवरी, 1945 को, यानी जिस तारीख को वसीयत को निष्पादित किया गया था, चिम्पिरय्या को उनके पोते सुब्बाराव से स्थिति में विभाजित माना जाना चाहिए। वसीयत केवल वसीयतकर्ता की मृत्यु की तारीख से बोली जाती है। अविभाजित सह-सदस्य के सदस्य के पास वसीयत निष्पादित करने की कानूनी क्षमता होती है, लेकिन वह संयुक्त परिवार की संपत्ति में अपने अविभाजित हित को वैध रूप से वसीयत नहीं कर सकता है। यदि उसकी मृत्यु परिवार के एक अविभाजित सदस्य के रूप में हुई है, तो उसका हित परिवार के अन्य सदस्यों के लिए रहता है, और,

इसलिए, वसीयत संयुक्त परिवार की संपत्ति के हित पर काम नहीं कर सकती है। लेकिन अगर वह अपनी मृत्यु से पहले परिवार से अलग हो गया था,

वसीयत प्रभावी होगी। इसलिए, जो महत्वपूर्ण सवाल उठता है वह यह है कि क्या वर्तमान मामले में वसीयतकर्ता अलग हो गया था।उनकी मृत्यु से पहले संयुक्त परिवार से।

XXX

XXX

XXX

27. कानून का जो मुख्य सवाल उठता है वह यह है कि क्या कोई सदस्य है।

एक संयुक्त हिंदू परिवार का सदस्य परिवार के अन्य सदस्यों से केवल परिवार से अलग होने के अपने स्पष्ट इरादे की घोषणा करके अलग हो जाता है, बिना इसे परिवार के अन्य सदस्य के संज्ञान में लाए। इस संदर्भ में हिंदू विधि ग्रंथों का संदर्भ उपयुक्त होगा, क्योंकि वे वे स्रोत हैं जिनसे न्यायालयों ने व्यावहारिक दृष्टिकोण से सिद्धांत विकसित किया है।

प्रकाश। उन्हें विश्वनाथ शास्त्री, जे. द्वारा संकलित और अनुवादित किया गया है, जिन्हें हिंदू कानून के स्रोतों का विलेख और स्थायी ज्ञान है। आदियालथ बीचू [आई. एल. आर. 1930 मैड 502]; और हम उनके अनुवादों को सही के रूप में स्वीकार करते हैं और वास्तव में दोनों पक्षों की विद्वान सलाह उस आधार पर आगे बढ़ी। याज्ञवल्क्य, अध्याय ।।, धारा 121 "। भूमि, क्षार (वार्षिकी, आदि), या दादा से प्राप्त धन में, पिता और पुत्र का स्वामित्व केवल समान है। उक्त श्लोक पर टिप्पणी करते हुए विज्ञानेश्वर कहते हैंः

" ..... और इस प्रकार हालांकि माँ को मासिक धर्म हो रहा है

(उसने बच्चे पैदा करने की क्षमता नहीं खोई है) और पिता को लगाव है और वह विभाजन नहीं चाहता है, फिर भी बेटे की इच्छा (या इच्छा) से दादा की संपत्ति का विभाजन होता है। (सेतलूर का मिताक्षर, पीपी। 646–48) .

सरस्वती विलास, शांति 28 "। इसी से पता चलता है कि

केवल निर्धारण (या संकल्प), विभाजन प्रभावित होता है, जैसे एक नियुक्त बेटी का गठन बिना किसी इरादे के किया जाता है।भाषण "।

हित मिश्र का वीरमित्रोदय (अध्याय ।।, प्ल. 23)।

वी. कल्याणस्वामी (डी) बायल्स। & एएनआर। वी.

भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. द्वारा। & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

" यहाँ भी पिता के जीवनकाल के दौरान या उनकी मृत्यु के बाद विभाजन और देश के विभाजन के बीच कोई अंतर नहीं है।

पुत्रों की इच्छा या यहाँ तक कि इच्छा (या एक एकल सह–भागीदार की इच्छा पर) से भी हो सकती है।

नीलकण्ठभट्ट के व्यवहार मयूखाः (अध्याय IV, धारा III–I)।

" किसी भी आम (संयुक्त परिवार) संपत्ति के अभाव में भी, अलगाव वास्तव में केवल घोषणा के परिणामस्वरूप होता है।

" मैं तुमसे अलग हूँ "क्योंकि अलगाव मन की एक विशेष स्थिति (या स्थिति) है और घोषणा केवल एक है

इस मानसिक स्थिति (या स्थिति) की अभिव्यक्ति।

सरस्वती विलास में संस्कृत अभिव्यक्ति "संकल्प" (संकल्प), वीरमित्रोदय में "अकेच्छय" (एकल सह–भागीदार की इच्छा)।

" व्यवहार मयूख में बुधिविसेश (मन की विशेष स्थिति या स्थिति) इस विचार को सामने लाता है कि संयुक्त स्थिति का विच्छेद व्यक्तिगत दिशा का मामला है। इसलिए हिंदू कानून ग्रंथ इस प्रस्ताव का समर्थन करते हैं कि स्थिति में अलगाव है

विवेकाधिकार के एकतरफा अभ्यास द्वारा लाया गया। 28. हालांकि शुरुआत में विचारों का टकराव दिखाई दिया, लेकिन बाद के फैसलों ने हिंदू कानून की सही व्याख्या की।

ग्रंथ। इस पहलू पर विचार किया गया है और उससे संबंधित कानून को निर्णयों की एक श्रृंखला में प्रिवी काउंसिल द्वारा सटीक रूप से निर्धारित किया गया हैः सूरज नारायण बनाम देखें। इकबाल नारायण [(1912) आई. एल. आर. 35 ऑल 80 (पी. सी.)]; गिरिया बाई बनाम। सदाशिव धुंडीराज [(1916) आई. एल. आर. 43 कैल 1031 (पी. सी.)]; कवाल नारायण बनाम। बुद्ध सिंह [(1917) आई. एल. आर. 39 ऑल 496 (पी. सी.)] और बमालिंगा अन्नवी बनाम। नरवन अन्नवी [(1922) आई. एल. आर. 45 मैड 489 (पी. सी.)]। सैयद कासम बनाम। जोरावर सिंह [(1922) आई. एल. आर. 50 कैल 84 (पी. सी.)] न्यायिक समिति ने अपने पहले के निर्णय की समीक्षा करने के बाद इस विषय पर तय कानून इस प्रकार रखाः

" यह तय कानून है कि संयुक्त हिंदू परिवार के मामले में

मिताक्षर के कानून के अधीन, संपत्ति का विच्छेदन संयुक्त धारकों में से एक की ओर से अपने हिस्से को अलग से रखने के इरादे की एक स्पष्ट घोषणा से प्रभावित होता है।

भले ही कोई वास्तविक विभाजन नहीं होता है।

अब तक, इसलिए, कानून अच्छी तरह से तय किया गया है। , कि संपत्ति में विच्छेद व्यक्तिगत विवेक का विषय है और उस राज्य को लाने के लिए उस प्रभाव [2020] 9 एस. सी. आर. के लिए एक स्पष्ट घोषणा होनी चाहिए।

प्रस्ताव हिंदू कानून ग्रंथों द्वारा निर्धारित किए गए हैं और न्यायालयों के आधिकारिक निर्णयों द्वारा स्वीकृत हैं। लेकिन मुश्किल सवाल यह है कि क्या परिवार के अन्य प्रभावित सदस्यों की ओर से इस तरह के प्रकट इरादे का ज्ञान आवश्यक है। स्थिति में विभाजन के गठन के लिए शर्त। हिंदू कानून ग्रंथ इस संबंध में प्रत्यक्ष रूप से हमारी बहुत मदद नहीं करते हैं, सिवाय इसके कि इसमें उपयोग की गई गर्भवती अभिव्यक्तियाँ एक विचार की रेखा का सुझाव देती हैं जिसे अदालतों द्वारा बदलते समाज की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अवधारणाओं को विकसित करने के लिए अपनाया गया था। व्यवहार मयूख में निम्नलिखित कथन इस संदर्भ में सहायक हैः

" ..... अलगाव वास्तव में मात्र के परिणामस्वरूप होता है

घोषणा "'मैं तुमसे अलग हूँ' क्योंकि अलगाव मन और घोषणा की एक विशेष स्थिति (या स्थिति) है।

यह केवल इस मानसिक स्थिति (या स्थिति) की अभिव्यक्ति है। "

कोई भी अपनी मानसिक स्थिति को शून्य में घोषित या प्रकट नहीं कर सकता है। घोषणा करने का अर्थ है दूसरों को बताना, दूसरों पर जोर देना। अन्य अनिवार्य रूप से उक्त घोषणा से प्रभावित होने चाहिए। इसलिए एक संयुक्त हिंदू परिवार के सदस्य को दूसरों से खुद को अलग करने की इच्छा रखने वाले परिवार के अन्य सदस्यों को अपनी मंशा से अवगत कराना होगा, जिनसे वह अलग होना चाहता है। अभिव्यक्ति की प्रक्रिया परिस्थितियों के अनुसार भिन्न हो सकती है। इस विचार को विद्वान न्यायाधीशों द्वारा विभिन्न शब्दावली को अपनाकर व्यक्त किया गया था, लेकिन उन्होंने संभवतः इसे घोषणा की अवधारणा में निहित पाया। सदाशिव अय्यर, जे., सौन-दरारियां बनाम में। अरुणाचलम चेट्टी

[(1915) आई. एल. आर. 39 मैड 159 (पी. सी.)] ने कहा कि सूरज नारायण बनाम में प्रिवी काउंसिल द्वारा "स्पष्ट रूप से व्यक्त" अभिव्यक्ति का उपयोग किया गया है। इकबाल

नारायण [(1912) आई. एल. आर. 35 ऑल 80 (पी. सी.)] का अर्थ था "स्पष्ट रूप से अन्य सह-भागीदारों के निश्चित ज्ञान के लिए व्यक्त किया गया"। गिरजा बाई बनाम। सदाशिव धुंडीराज [(1916) आई. एल. आर. 43 कैल 1031 (पी. सी.)] न्यायिक समिति ने कहा कि प्रकट इरादे को अन्य सह-भागीदारों को "स्पष्ट रूप से सूचित" किया जाना चाहिए। बाल कृष्ण बनाम में सर जॉर्ज लौनल्स। राम किशन [(1931) आई. एल. आर. 53 ऑल 300 (पी. सी.)] ने इसे एक स्थापित कानून के रूप में लिया कि एक अलगाव को स्पष्ट और स्पष्ट रूप से प्रभावित किया जा सकता है। एक संयुक्त हिंदू परिवार के एक सदस्य की ओर से अपने सह-भागीदारों को संयुक्त परिवार से खुद को अलग करने की इच्छा की स्पष्ट घोषणा। बाबू रामसरय प्रसाद चौधरी बनाम में सर जॉन वालिस। राधिका देवी [(1935) 43 एल. डब्ल्यू. 172 (पी. सी.)] ने फिर से इस प्रस्ताव को स्थापित कानून के रूप में स्वीकार किया कि "एक संयुक्त वी. कल्याणस्वामी (डी) बी. एल. आर. एस. की सदस्य।

भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. द्वारा। & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

हिंदू परिवार अपने कृत्यों या अलग होने के एक निश्चित इरादे की घोषणा द्वारा एक स्पष्ट और अचूक सूचना देकर स्थिति में अलगाव को प्रभावित कर सकता है। कामेपल्ली अविलम्मा बनाम में सर जॉन वालिस, सी. जे. और कुमारस्वामी शास्त्री, जे. मानेम वेंकटस्वामी [(1913) 33 एमएलजे (746)] ने जोर देकर कहा था कि यदि कोई सह-भागीदार अपने जीवनकाल के दौरान संवाद नहीं करता है, तो उसका अन्य सह-भागीदारों में विभाजित होने का इरादा है।

उनके इरादे की मात्र घोषणा, भले ही व्यक्त या प्रकट की गई हो, स्थिति में अलगाव को प्रभावित नहीं करती थी। इन निर्णयों ने आधिकारिक रूप से यह प्रस्ताव रखा कि परिवार के सदस्यों की जानकारी कि उनमें से किसी एक का उनसे अलग होने का प्रकट इरादा है, इसे लाने के लिए एक आवश्यक शर्त है।

सदस्य का परिवार से अलगाव। लेकिन यह कहा जाता है कि मद्रास उच्च न्यायालय के दो फैसलों ने एक प्रस्थान दर्ज किया

उक्त नियम। उनमें से पहला राम अय्यर बनाम में माधवन नायर, जे. का निर्णय है। मीनाक्षी अम्मल [(1930) 33 एल. डब्ल्यू. 384]। वहाँ, विद्वान न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया कि स्थिति का विच्छेद उस तारीख से संबंधित है जब संचार भेजा गया था। विद्वान न्यायाधीश ने इस प्रस्ताव का निष्कर्ष इस स्वीकृत सिद्धांत से निकाला कि अन्य सह-भागीदारों के पास इस मामले में कोई विकल्प या विकल्प नहीं था। लेकिन उस मामले में महत्वपूर्ण परिस्थिति यह थी कि वसीयतकर्ता नोटिस की तामील की तारीख के बाद तक जीवित रहा। यदि ऐसा था, तो तथ्यों पर वह निर्णय सही था। हम बाद के चरण में वापस संबंधित होने के सिद्धांत पर चर्चा करेंगे। दूसरा निर्णय मद्रास उच्च न्यायालय की एक खंड पीठ का है, जिसमें शामिल हैं –

वरदाचारियार और राजा, जे. जे. , नारायण राव बनाम। पुरुषोत्तम राव [आई. एल. आर. 1938 मैड 315,318]। वहाँ, एक वसीयतकर्ता ने संयुक्त परिवार की संपत्ति में अपने हिस्से का निपटान एक वसीयत के पक्ष में किया।

अजनबी और 5 अगस्त, 1926 को उनकी मृत्यु हो गई। वसीयतकर्ता द्वारा भेजा गया नोटिस

3 अगस्त, 1926 को उनके बेटे को वास्तव में 9 अगस्त, 1926 को उनके द्वारा प्राप्त किया गया था। यह तर्क दिया गया था कि स्थिति में विभाजन केवल 9 अगस्त, 1926 को प्रभावी हुआ था, जब बेटे को नोटिस प्राप्त हुआ था और चूंकि वसीयतकर्ता की मृत्यु 5 अगस्त, 1926 को हुई थी और संपत्ति उस तारीख को बेटे को उत्तरजीविता द्वारा पारित कर दी गई थी, इसलिए 9 अगस्त, 1926 को नोटिस की प्राप्ति बेटे को उस संपत्ति से वंचित नहीं कर सकती थी और इसलिए वसीयत वैध नहीं थी। न्यायाधीश वरदाचारियार ने पीठ का निर्णय देते हुए इस प्रकार टिप्पणी कीः

" यह सच है कि अधिकारी आम तौर पर यह निर्धारित करते हैं कि अन्य [2020] 9 एस. सी. आर. में विभाजित होने के इरादे का संचार।

सह–भागीदार आवश्यक हैं, लेकिन उनमें से कोई भी यह नहीं बताता है किस्थिति में अलगाव तब तक नहीं होता है जब तक कि अन्य सह–भागीदारों द्वारा इस तरह का संचार प्राप्त नहीं हो जाता है।

उनके समक्ष प्रस्तुत विवाद को स्वीकार करने में उत्पन्न होने वाली विभिन्न विसंगतियों की ओर इशारा करने के बाद, विद्वान न्यायाधीश ने आगे कहाः

" यह हो सकता है कि यदि कानून अधिकृत रूप से तय किया गया है, तो यह नहीं है

हम केवल इस आधार पर इसे लागू करने से इनकार कर सकते हैं कि इससे विसंगत परिणाम हो सकते हैं, लेकिन जब प्राधिकरण के किसी भी निर्णय में कानून को इस तरह से नहीं कहा गया है और नियमों के कारण इस तरह का दृष्टिकोण आवश्यक या उचित नहीं है, तो हम विभिन्न मामलों में 'संचार' के संदर्भ की व्याख्या करने का कोई कारण नहीं देखते हैं, जिसका अर्थ है कि अलगाव सूचना तक उत्पन्न नहीं होता है।

वास्तव में प्राप्तकर्ता या प्राप्तकर्ताओं द्वारा प्राप्त किया गया है।

हम इस दृष्टिकोण को स्वीकार करने में अपनी असमर्थता के लिए खेद व्यक्त करते हैं। पहला, क्योंकि, जैसा कि हमने पहले बताया है, न्यायिक समिति के निर्णयों द्वारा कानून को अच्छी तरह से तय किया गया है कि प्रकट इरादे से प्रभावित परिवार के अन्य सदस्यों को अवगत कराया जाना चाहिए; दूसरा, क्योंकि इसमें विसंगतियां होंगी।

दोनों में से किसी भी विचार को स्वीकार करना। तीसरा, यह किसी इरादे की घोषणा के सिद्धांत में निहित है कि इसे किसी के सामने घोषित किया जाना चाहिए और कौन हो सकता है कि कोई उस व्यक्ति के अलावा हो जो इससे प्रभावित होता है।

XXX

XXX

XXX

32. इसलिए, यह स्पष्ट है कि हिंदू कानून ग्रंथों ने सुझाव दिया है

और न्यायालयों का विकास तर्क की प्रक्रिया के साथ–साथ एक व्यावहारिक दृष्टिकोण से हुआ कि ऐसी घोषणा को प्रभावी होना चाहिए।

एक प्रक्रिया या किसी दी गई स्थिति के लिए उपयुक्त अन्य प्रक्रिया से प्रभावित व्यक्ति या व्यक्ति तक पहुँचें।

XXX

XXX

XXX

34. इस अपील में तीसरे प्रश्न पर निर्णय लिया जाना है। यह इस प्रकार हैः किस तारीख से स्थिति में विच्छेद हुआ माना जाता है? क्या यह इरादे की अभिव्यक्ति की तारीख है या वह तारीख जब इसे अन्य सदस्यों के संज्ञान में लाया जाता है?

वी. कल्याणस्वामी (डी) बायल्स। & एएनआर। वी.

भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. द्वारा। & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

यदि यह बाद की तारीख है, तो क्या यह वह तारीख है जब सदस्यों में से किसी ने पहली बार ज्ञान प्राप्त किया था या वह तारीख जब उनमें से अंतिम ने उक्त ज्ञान प्राप्त किया था या अलग-अलग तारीखें जिन पर परिवार के प्रत्येक सदस्य को इरादे के बारे में जानकारी मिली थी? यदि अंतिम विकल्प स्वीकार किया जाता है, तो विभाजन

मामले भी कोई रास्ता नहीं बताते हैं। इसलिए, यह इस न्यायालय के लिए खुला है कि वह हिंदू कानून के सिद्धांतों के साथ हिंसा किए बिना एक उचित और न्यायसंगत समाधान विकसित करे। वापस संबंध के सिद्धांत को पहले से ही विकसित हिंदू कानून द्वारा मान्यता दी गई है अदालतों में और गोद लेने से संबंधित कानून की उस शाखा में लागू किया गया। एक सदस्य के अलग होने के इरादे की घोषणा के दो तत्व होते हैं। एक इरादे की अभिव्यक्ति है और दूसरा अभिव्यक्ति को व्यक्ति या व्यक्तियों के ज्ञान में लाना है।

प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करता है-यह उस तारीख से संबंधित हैजब इरादा बनता है और व्यक्त किया जाता है। लेकिन बीच में

दो तारीखों में, इरादा व्यक्त करने वाला व्यक्ति पारिवारिक संपत्ति में अपनी रुचि खो सकता है; वह विभाजित करने का अपना इरादा वापस ले सकता है; विभाजित करने के अपने इरादे से परिवार के अन्य सदस्यों को सूचित करने से पहले वह मर सकता हैः परिणामस्वरूप उसकी रुचि अन्य सदस्यों के लिए बनी रहती है। एक संयुक्त हिंदू परिवार का प्रबंधक परिवार पर बाध्यकारी ऋण के लिए पूरी पारिवारिक संपत्ति बेच सकता है। इसी तरह के अन्य मामले भी हो सकते हैं। यदि संबंध वापस करने के सिद्धांत को बिना किसी सीमा के लागू किया जाता है, तो इस तरह बनाए गए निहित अधिकार प्रभावित होंगे और तय किए गए खिताब बाधित हो सकते हैं। समानता के सिद्धांतों की आवश्यकता होती है और सामान्य ज्ञान एक सीमा की मांग करता है जो

शीर्षक के भ्रम से बचने के लिए उस पर रखा जाना चाहिए। यह सुझाव देने से अधिक न्यायसंगत और उचित क्या होगा कि सिद्धांत निहित अधिकारों को प्रभावित नहीं करना चाहिए? इस तरह की सीमा लागू करके हम [2020] 9 एस. सी. आर.

हम किसी भी अच्छी तरह से स्थापित हिंदू कानून सिद्धांत के दायरे को कम नहीं कर रहे हैं, लेकिन हम एक आकस्मिकता को पूरा करने के लिए एक सीमा के अधीन केवल एक सिद्धांत का आह्वान कर रहे हैं। इसके अलावा, पूर्व सक्रियता का सिद्धांत, जब तक कि कोई विधायी इरादा स्पष्ट रूप से इसके विपरीत न हो, निहित अधिकारों को बचाता है। जैसा कि संबंध वापस के सिद्धांत में शामिल है

तर्क की समानता से पूर्व सक्रियता निहित अधिकारों को प्रभावित नहीं कर सकती है। इसके बाद यह होगा कि, हालांकि अलगाव की तारीख वह है

संयुक्त परिवार की संपत्ति में दूसरों को अर्जित अधिकार को उक्त अभिव्यक्ति के बीच अलग करने के इरादे की अभिव्यक्ति और

अन्य सदस्यों द्वारा इसके बारे में जानकारी सहेजी जाएगी।

35. वर्तमान मामले में उक्त सिद्धांतों को लागू करते हुए, यह अभिनिर्धारित करना होगा कि चिम्पिरय्या की मृत्यु पर उनका हित सुब्बाराव पर निर्भर था और इसलिए, उनकी वसीयत, भले ही परिवार से अलग होने के उनके इरादे का पता लगाने के लिए उस पर भरोसा किया जा सके, पारिवारिक संपत्ति में उनकी रुचि को व्यक्त नहीं कर सकी, क्योंकि यह स्थापित नहीं किया गया है कि सुब्बाराव या उनके अभिभावक को चिम्पिरय्या की मृत्यु से पहले उक्त वसीयत की सामग्री के बारे में जानकारी थी। ”

91. न्यायालय ने पैराग्राफ 37 में यह विचार भी व्यक्त किया कि यह तय करना आवश्यक नहीं था कि वसीयत में आवश्यक प्रावधान हैं या नहीं।

और परिवार से खुद को अलग करने के इरादे की स्पष्ट घोषणा। 92. इसके बाद, इस न्यायालय के निर्णयों की पंक्ति में पुत्रांगम्मा और अन्य बनाम में रिपोर्ट किया गया निर्णय है। एम. एस. रंगन्ना और अन्य 3 9 39 अपील विभाजन के लिए एक मुकदमे से उत्पन्न हुई। जो सवाल उठे उनमें से एक यह था कि क्या वादी की मृत्यु एक संयुक्त परिवार के विभाजित सदस्य के रूप में हुई थी। इस संदर्भ में, न्यायालय ने निम्नानुसार निर्धारित कियाः

" 5. यह अब हिंदू कानून का एक स्थापित सिद्धांत है कि एक संयुक्त हिंदू परिवार का एक सदस्य अपनी स्थिति में अलगाव ला सकता है उनके इरादे की एक निश्चित, स्पष्ट और एकतरफा घोषणा

परिवार से खुद को अलग करना और कई में अपने हिस्से का आनंद लेना। यह आवश्यक नहीं है कि संयुक्त स्थिति को बाधित करने के लिए सभी सह–भागीदारों के बीच एक समझौता होना चाहिए। यह महत्वहीन है।

ऐसे मामले में क्या अन्य सह–भागीदार अलगाव के लिए अपनी सहमति देते हैं या नहीं। इस सिद्धांत का न्यायिक आधार रहा है

हिंदू कानून के प्रारंभिक लेखकों द्वारा व्याख्या की गई।

93. इस न्यायालय ने अपने विचार पर अपील को स्वीकार कर लिया। , कि वादी ने वास्तव में सिद्धांतों पर संयुक्त परिवार में व्यवधान पैदा किया था कानून जो व्यक्त किए गए हैं।

39 एयर 1968 एससी 1018 वी. कल्याणस्वामी (डी) बी. एल. आर. एस. & एएनआर। वी.

94. इसके बाद, हमें कृष्णबाई आर गणपतराव देशमुख बनाम में इस न्यायालय के फैसले का उल्लेख करना चाहिए। अप्पासाहेब तुलजारामराव निंबालकरअन्य। उक्त मामले में उच्च न्यायालय, जो समर्पण और अपने लाभ के लिए एक मुकदमा था, ने यह विचार लिया कि यह यहां स्थापित नहीं किया गया था, वर्ष 1902 में प्रभावी विभाजन था जैसा कि न्यायालय ने पाया था। इस न्यायालय ने निचली अदालत के फैसले को बहाल किया और फैसला सुनाया

कमियाँः

" 16. हम श्री बाल द्वारा प्रचार किए गए प्वाइंट नंबर 1 को लेंगे। जिस प्राथमिक प्रश्न पर विचार किया जाना है, वह यह है कि क्या 1902 में या

इससे कुछ समय पहले ही दो भाइयों नारायणराव और रामचंद्रराव के बीच विभाजन हो गया था।

कानून। इस संबंध में, शुरुआत में, इस बिंदु पर हिंदू कानून के मूल सिद्धांतों पर ध्यान देना आवश्यक है। द.

पार्टियों को माना जाता है कि मिताक्षर स्कूल ऑफ हिंदू द्वारा शासित किया जाता है। कानून। मिताक्षर अवधारणा के एक अविभाजित हिंदू परिवार में, नहीं

सदस्य कह सकता है कि वह पारिवारिक संपत्ति में आधे, एक तिहाई या एक चौथाई हिस्से का मालिक है।

परिवार अविभाजित रहते हुए आनंद का स्वामित्व और समानता। ऐसी एकता और समानता आवश्यक गुण हैं।

संयुक्त परिवार की स्थिति की अवधारणा। इस एकता का आधार औरसमानता का अर्थ है संयुक्त परिवार की स्थिति को समाप्त करने वाला या अलग करना, या, जो हिंदू कानून के तहत, "विभाजन" है; चाहे वह संपत्ति और सीमा के साथ हो या उसके बाद हो। संयुक्त स्थिति का विघटन, स्वयं, प्रभु के रूप में

वेस्टबरी ने इसे एपोवियर बनाम में रखा। राम सुब्बा अयान [(1886) 11 एम. आई. ए. 75: 2 एसआर 218: 8 डब्ल्यू. आर. पी. सी. 1], वास्तव में, "अधिकार के विभाजन और संपत्ति के विभाजन दोनों को शामिल करता है"। उसी स्थिति को दोहराते हुए, गिरजा बाई बनाम। सदाशिव [AIR 1916 PC 104: (1916) 43 आई. ए. 151], न्यायिक समिति ने समझाया कि संयुक्त स्थिति, या विभाजन के विभाजन का अर्थ है "हित और अधिकार में अलगाव, हालांकि इसके तुरंत बाद इसका वास्तविक विभाजन नहीं होता है।

17. संयुक्त स्थिति का विभाजन संयुक्त परिवार के किसी भी वयस्क सदस्य द्वारा सूचित, संकेत या संकेत करके किया जा सकता है।स्पष्ट और स्पष्ट शब्दों में अन्य सदस्यों का प्रतिनिधित्व करते हुए,

9) 4 एससीसी 60 [2020] 9 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

विविध रूप। कभी-कभी इसका प्रमाण एक स्पष्ट घोषणा से मिलता है।(लिखित या मौखिक); कभी-कभी यह आचरण द्वारा प्रकट होता है

पूर्व परिवार के साथ अलग व्यवहार करने में परिवार के सदस्य

संपत्तियाँ। एक सदस्य द्वारा किसी मुकदमे की सूचना या संस्था की सेवा /

विभाजन के लिए अन्य सदस्यों/सह-भागीदारों के विरुद्ध सह-भागीदार और अलग कब्जा व्यवधान पैदा करने के लिए पर्याप्त हो सकता है

संयुक्त स्थिति "।

(जोर दिया गया)

कल्याणी (मृत) में एल. आर. वी. नारायणन और अन्य 1, एक बेंच

विद्वान न्यायाधीशों को निम्नानुसार निर्धारित किया गया हैः

" 10. मामले के सामने आने में अगला चरण यह है कि क्या एक्स। पी.

1 विभाजन के रूप में प्रभावी है। विभाजन तकनीकी महत्व का एक शब्द है

हिंदू कानून में। विभाजन एक अर्थ में संयुक्त स्थिति का विच्छेद है।

और एक सह-पक्ष का सह-भागीदार एक मामले के रूप में इसका दावा करने का हकदार है।अपनी व्यक्तिगत इच्छा से। इस संकीर्ण अर्थ में वह सब जो आवश्यक है

विभाजन का गठन एक निश्चित और स्पष्ट संकेत है एक संयुक्त परिवार के सदस्य द्वारा खुद को अलग करने का इरादा

सदस्य और इस तरह अधिकार के साथ सह-अधिवेशन को समाप्त कर देते हैंउत्तरजीविता और ऐसे अलग किए गए सदस्य की उस समय से धारण

संयुक्त परिवार को सामान्य किरायेदार के रूप में बाधित करना। इस तरह का विभाजन

चाहे वह गुणों के विभाजन के साथ हो या उसके बादमेट्स एंड बाउंड्स अधिकार और विभाजन दोनों को शामिल करता है

संपत्ति (एपोवियर वी. देखें। राम सुब्बा अयान [(1886) 11 एम. आई. ए.

75 : 2 सार 218: 8 डब्ल्यू. आर. पी. सी. 1] कृष्णबाई में अनुमोदन के साथ उद्धृत

भर्तार गणपतराव देशमुख बनाम। अप्पासाहेब तुलजारामराव निंबालकर [(1979) 4 एस. सी. सी. 60,68])। संयुक्त परिवार में व्यवधान

एक निश्चित और स्पष्ट संकेत द्वारा स्थिति को अलग करने का तात्पर्य है

ब्याज और अधिकार में अलगाव, हालांकि तुरंत पालन नहीं किया गयाविषय–वस्तु के वास्तविक विभाजन द्वारा। यह हो सकता है

किसी भी समय, अलग अधिकार के आधार पर दावा किया जाए (गिरजा देखें)

1980 एससी 1173 वी. कल्याणस्वामी (डी) बायल्स। & एएनआर। वी.

भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. द्वारा। & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

बाई वी। सदाशिव [ए. आई. आर. 1916 पी. सी. 104 43 आई. ए. 151 18 बॉम एल. आर.

621]) . वस्तु और सीमा द्वारा संपत्ति का भौतिक और वास्तविक विभाजन स्थिति के व्यवधान से होता है और इसे व्यापक अर्थों में विभाजन कहा जाएगा।

हम पैराग्राफ 18 पर भी ध्यान दे सकते हैं जो इस प्रकार हैः18. एक बात बिल्कुल स्पष्ट है कि Ex। पी–1 इस अर्थ में विभाजन का विलेख नहीं है कि इसका उद्देश्य संपत्ति को आपस में विभाजित करना नहीं है।

संयुक्त परिवार और संयुक्त परिवार की संपत्ति के लिए कानून "विभाजन" शब्द को एक विशेष अर्थ में समझा जाता है। यदि संयुक्त स्थिति का विच्छेद किसी विलेख, लिखित या इस तरह के व्यवधान को लाने के इरादे की एक स्पष्ट घोषणा द्वारा लाया जाता है, तो संयुक्त परिवार, विभाजन का गठन करता है (राघवम्मा वी देखें। चेनचम्मा [ए. आई. आर. 1964 एस. सी. 136 (1964) 2 एस. सी. आर. 933: (1964) 1 एससीए 593])। को।

एक विभाजन का गठन करें जो आवश्यक है वह एक निश्चित है और

एक संयुक्त परिवार के सदस्य द्वारा खुद को परिवार से अलग करने के इरादे का स्पष्ट संकेत। ऐसी रुचि की ऐसी सूचना, संकेत या प्रतिनिधित्व किस रूप में होना चाहिए

प्रत्येक मामले की परिस्थितियों पर निर्भर करता है। ए. आगे

आवश्यकता यह है कि इरादे का यह स्पष्ट संकेत

अलग से प्रभावित व्यक्तियों के ज्ञान के लिए होना चाहिए

ऐसी घोषणा। निर्णयों की समीक्षा से पता चलता है कि अलग होने का यह इरादा विभिन्न तरीकों से प्रकट हो सकता है। यह हो सकता है नोटिस देकर या मुकदमा दायर करके। निस्संदेह, संकेत या सूचना संयुक्त परिवार के सदस्यों के लिए होनी चाहिए जो इस तरह से प्रभावित होने की संभावना रखते हैं।

घोषणा "।

भगवंत पी. सुलाखे बनाम में यह न्यायालय। दिगंबर गोपाल सुलाखे थेरस (सुप्रा) निम्नलिखित रूप में आयोजित किए गए:

" 14 ..... किसी भी संयुक्त परिवार की संपत्ति का स्वरूप संयुक्त परिवार की स्थिति के विच्छेद के साथ नहीं बदलता है और एक संयुक्त परिवार की संपत्ति अपने संयुक्त परिवार के चरित्र को बनाए रखती है। जब तक संयुक्त परिवार की संपत्ति अस्तित्व में है और सह-भागीदारों के बीच विभाजित नहीं है। एकतरफा अधिनियम द्वारा संयुक्त परिवार के किसी भी सदस्य के लिए किसी भी संयुक्त परिवार की संपत्ति को परिवर्तित करने का अधिकार नहीं है।

अपनी निजी संपत्ति में। ”

क्या कल्याणी (मृत) के बीच संघर्ष है

वी. नारायण और अन्य [एयर 1980 एससी 1173] और [2020] 9 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

भागवंत पी. सुलेखे वी. दिगंबर गोपाल सुलेखे और अन्य [एयर 1986 एससी 79]

95. कल्याणी (सुप्रा) में, एक करप्पन जिसकी दो पत्नियाँ और बच्चे उनके माध्यम से थे, विरासत के मामले में शासित था औरअनिवार्य रूप से प्रथागत कानून द्वारा उत्तराधिकार और किसी निर्दिष्ट प्रथा के अभाव में, वह हिंदू मिताक्षर कानून द्वारा शासित था। वह.

एक पंजीकृत विलेख पी1 को निष्पादित किया था जिसे विभिन्न रूप से वसीयत या विभाजन के विलेख के रूप में या एक पारिवारिक व्यवस्था का प्रमाण के रूप में वर्णित किया गया था। जिस मुकदमे से मामला खड़ा हुआ, वह उसकी पहली पत्नी से उसके एक बेटे की विधवा द्वारा दायर किया गया था। इस अदालत ने पाया कि पी1 को वसीयत के रूप में समर्थित नहीं किया जा सकता है क्योंकि करप्पन के पास वसीयत द्वारा पैतृक संपत्ति तैयार करने की कोई शक्ति नहीं थी। न्यायालय ने आगे विचार किया कि क्या बी1 विभाजन के रूप में प्रभावी था। इसी संदर्भ में निर्णय के पैराग्राफ-10 में टिप्पणियां की गईं। न्यायालय ने पैराग्राफ-10 में टिप्पणियां करने के बाद पाया कि बी1 द्वारा मेट्स और बाउंड्स द्वारा कोई प्रभावी विभाजन नहीं था, हालांकि बेटों के शेयरों को निर्दिष्ट किया गया था और महिला सदस्यों के लिए भी प्रावधान किए गए थे। इसके बाद न्यायालय ने यह प्रश्न उठाया कि यदि बी1 विभाजन विलेख के रूप में प्रभावी नहीं है, तो संयुक्त परिवार की निरंतर स्थिति पर इसके प्रभाव की जांच की जानी चाहिए। इसके बाद जब अदालत ने पैरा 18 में टिप्पणियां कीं जो हमने निर्धारित की हैं। न्यायालय ने आगे

यह पाया कि प्रदर्शनी पी1 में हिस्सेदारी को निर्दिष्ट करके पहले शेयरों को निर्दिष्ट करके संयुक्त परिवार में व्यवधान पैदा किया गया था। एक बार व्यवधान होने के बाद, इसे संयुक्त परिवार के दर्जे में रखा गया था, सह-भागीदारों ने संपत्ति को संयुक्त किरायेदारों के रूप में रखना बंद कर दिया था, लेकिन वे इस रूप में आयोजित किए गए थे

आम में किरायेदार। यह अदालत का दृष्टिकोण था कि यह तथ्य कि सह-भागीदार एक ही छत के नीचे रहते रहे या आनंद लेते रहे

उल्का और बंधी द्वारा विभाजन के बिना गुण, कोई फर्क नहीं पड़ता था। जब तक पुनर्मिलन का अनुरोध और स्थापना नहीं की जाती, तब तक वे संयुक्त किरायेदारों के रूप में नहीं रहते थे। हमें, इस मामले में, इस मामले में जो निर्धारित किया गया है और बाद के फैसले में जो निर्धारित किया गया है, उसके साथ सामंजस्य स्थापित करने के लिए भी कहा जाता है। बाद का निर्णय भगवंत पी. सुलाखे (उपरोक्त) भी तीन विद्वान न्यायाधीशों की पीठ द्वारा दिया गया था।

96. हम उक्त मामले में शामिल तथ्यों पर संक्षेप में ध्यान दे सकते हैं। अपीलार्थी, जो दूसरे के साथ वाद में वादी था

उसमें प्रतिवादी और उसके दो भाई एक संयुक्त हिंदू परिवार के सदस्य थे। एक पब्लिक लिमिटेड कंपनी थी और एक फर्म भी। अपीलार्थी ने एक प्रबंध अभिकर्ता के रूप में कार्य किया था।

उन्होंने वी. कल्याणस्वामी (डी) बायलर्स के रूप में भी काम किया था। & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

कंपनी के प्रबंध निदेशक। उसी संबंध में, उन्होंने पारिश्रमिक अर्जित किया था। वह प्रश्न जो अनिवार्य रूप से इस न्यायालय के समक्ष उठायह था कि क्या इसे अपीलार्थी की व्यक्तिगत आय के रूप में माना जाना था या क्या यह संयुक्त परिवार से संबंधित था। साझेदारी विलेख और अन्य सामग्रियों पर विचार करने के बाद, न्यायालय ने अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित टिप्पणी कीः

" 14 ..... किसी भी संयुक्त परिवार की संपत्ति का चरित्र नहीं है।

संयुक्त परिवार की स्थिति के विच्छेद के साथ परिवर्तन और एक संयुक्त परिवार की संपत्ति अपने संयुक्त परिवार के चरित्र को तब तक बनाए रखती है जब तक कि संयुक्त परिवार की संपत्ति अस्तित्व में है और सह-भागीदारों के बीच विभाजित नहीं है। एकतरफा कार्य से यह नहीं है

संयुक्त परिवार के किसी भी सदस्य को किसी भी संयुक्त परिवार की संपत्ति को अपनी व्यक्तिगत संपत्ति में बदलने का अधिकार है।

97. इस मामले में विचारण न्यायालय ने इस न्यायालय की टिप्पणियों के आधार पर इस आशय का आश्वासन दिया है कि जब तक संयुक्त परिवार की संपत्ति है अस्तित्व में है और विभाजित नहीं है, संयुक्त परिवार की संपत्ति का चरित्र नहीं बदलता है। इसने निष्कर्ष निकाला कि भले ही बी1 जारी करके विभाजन किया जाता है, लेकिन वी. रंगास्वामी नायडू और उनके भाई के संयुक्त परिवार की संपत्तियां संयुक्त बनी रहीं और इसे वी. रंगास्वामी

नायडू द्वारा अभिमानी नहीं माना जा सकता था, जैसा कि उन्होंने किया था। पहली अपीलीय अदालत ने यह कहते हुए निर्णय को अलग किया कि यह तथ्यों में बदल गया।

98. हम सोचेंगे कि वास्तव में ऐसा कोई संघर्ष नहीं है। हम पहले ही देख चुके हैं कि प्रिवी द्वारा पहले ही क्या निर्धारित किया जा चुका हैएपोवियर में परिषद (ऊपर)। न्यायालय ने अन्य बातों के साथ-साथ यह भी निर्धारित किया है कि जब हिंदू अविभाजित परिवार के सदस्य आपस में सहमत हों

कि उसके बाद कोई विशेष संपत्ति कुछ परिभाषित शेयरों में स्वामित्व का विषय होगी, फिर, अविभाजित संपत्ति का स्वरूप और संयुक्त उपभोग उससे छीन लिया जाता है और उसके बाद प्रत्येक सदस्य का एक निश्चित और निश्चित हिस्सा होगा, भले ही संपत्ति को स्वयं अलग और विभाजित नहीं किया गया हो।

99. यह याद रखना चाहिए कि उक्त मामले में वास्तव में एक

अविभाजित हिंदू संयुक्त परिवार, जिसमें विभाजन का एक विलेख और विवाद था, जिस पर न्यायालय द्वारा विचार किया जाना था, यह था कि अविभाजित संपत्ति को विभाजित संपत्ति में तब तक परिवर्तित करना अप्रभावी था जब तक कि यह वास्तविक विभाजन द्वारा पूरा नहीं हो जाता। न्यायालय अनिवार्य रूप से एक सह-भागीदार द्वारा एक संयुक्त परिवार की स्थिति में विभाजन के कारण अलग होने की घोषणा के प्रभाव पर विचार नहीं कर रहा था।

अदालत इस सवाल पर भी विचार नहीं कर रही थी कि क्या स्थिति में इस तरह के विभाजन पर, संपत्तियों की विशिष्ट वस्तुओं पर सह-भागीदार के अधिकारों को समझौते या विभाजन के बिना भी अनन्य और पूर्ण अधिकारों में बदल दिया जाएगा।

100. गिरजा बाई बनाम। सदाशिव धुंडीराज 42, प्रिवी काउंसिल एक ऐसी स्थिति से निपट रही थी जहाँ अपीलार्थी के पति ने एक मिताक्षरा संयुक्त परिवार के प्रबंधक को विभाजन प्राप्त करने की अपनी इच्छा व्यक्त करते हुए नोटिस दर्ज किया गया और जिसके बाद विभाजन के लिए एक मुकदमा दायर किया गया। हमने उसमें अनुच्छेद 25 और 28 पर ध्यान दिया है।

101. इसलिए, चर्चा के एक पहलू पर हम आयोजित करेंगे

इस प्रकार हैः

हम जिस हिंदू कानून पर विचार कर रहे हैं, उसमें विभाजन के दो अर्थ हैं।

के साथ। एक अर्थ में, विभाजन पहला कदम है जो आम तौर पर एक उल्का और सीमा विभाजन में समाप्त होता है। एक सह-साझेदारी में, संयुक्त किरायेदारी होती है। एक हिंदू सह-सदस्य, जिसे बनाया नहीं जा सकता है

पार्टियों के बीच समझौता लेकिन कानून का निर्माण है, बाधित किया जा सकता है या एक विभाजन संयुक्त परिवार को समाप्त करने के लिए एक सह-भागीदार द्वारा एकतरफा घोषणा के कारण होता है। विभाजन प्रस्तुत किए जाने से पहले सह-भागीदार के पास जो कुछ भी होता है, वह ब्याज होता है, जैसा कि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 6 और 30 दोनों में संदर्भित किया गया है। घोषणा होने पर,

बिना किसी और चीज के अलग होने का इरादा व्यक्त करना, लेकिन इसमें कोई संदेह नहीं है कि अन्य सह-भागीदारों/सह-भागीदारों के साथ भी ऐसा ही होगा, विभाजन उपरोक्त अर्थ में। जिससे शीर्षक का विभाजन होता है। जैसा कि पहले ही देखा जा चुका है, उपरोक्त अर्थों में विभाजन दूरगामी है

परिणाम। संयुक्त किरायेदारी, जिसमें उत्तरजीवी द्वारा विरासत के अधिकार की अवधारणा शामिल है, को पहले अर्थ में विभाजन के साथ समाप्त कर दिया जाता है। यदि ऐसा विभाजन करने के बाद सह-भागीदार की मृत्यु हो जाती है, क्योंकि उत्तरजीविता के सिद्धांत के आधार पर अधिकार समाप्त हो जाता है, तो इस तरह के विभाजन के बाद उसकी मृत्यु के परिणामस्वरूप उसके उत्तराधिकारी सफल होने के हकदार बन जाएंगे। उस अर्थ में, संयुक्त किरायेदारी को सामान्य किरायेदारी द्वारा प्रतिस्थापित किया जाएगा, लेकिन यह कहने के समान नहीं है कि परिवार की संपत्तियां, जहां पहले अर्थ में विभाजन हुआ है, बिना किसी और चीज के विभाजित सदस्यों की अलग और अनन्य संपत्तियों में बदल जाएंगी। यह वह दृष्टिकोण है, जो इस न्यायालय द्वारा भगवंत पी. सुलाखे में लिया गया है। हम प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा लिए गए इस विचार को स्वीकार करने में असमर्थ हैं कि कानून के सिद्धांत, जो निम्नलिखित में निहित हैं –

42 एयर 1916 पी. सी. 104 वी. कल्याणस्वामी (डी) एल. आर. एस. & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

निर्णय के पैराग्राफ-14 को, जैसा कि हमारे द्वारा निकाला गया है, केवल उक्त मामले के विशेष तथ्यों में समझा जाना है। विभाजन, एक व्यापक अर्थ में और जैसा कि आम तौर पर समझा जाता है, शेयरों के अनुसार संपत्तियों का विभाजन है।

एक हिंदू एक इच्छा बना सकता है? बाहर निकलने की उनकी शक्ति पर क्या सीमाएँ थीं

एक इच्छा? क्या हिंदू सफलता अधिनियम, 1956 की धारा 30 को लागू करने से कोई बदलाव हुआ है? 102. ऐसा प्रतीत होता है कि हिंदू कानून के ग्रंथों में वसीयत की अवधारणा का संदर्भ नहीं है। हालांकि, कुछ समय के लिए,

अदालतों ने एक हिंदू के लिए वसीयत बनाने की शक्तियों को मान्यता दी है। हम इस मामले में मिताक्षर कानून के बारे में चिंतित हैं। इसके तहत, एक हिंदू हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम लागू होने से पहले ही अपनी अलग और स्व-अर्जित संपत्तियों को वसीयत कर सकता था। एक हिंदू संयुक्त का सदस्य होने के नाते

पृष्ठ 341–342। जहाँ तक वसीयत बनाने को नियंत्रित करने वाले कानून का संबंध है, कोई विशेष कानून नहीं था जो इसे नियंत्रित करता हो। वर्ष 1865 में उत्तराधिकार अधिनियम पारित किया गया था। यह हिंदुओं पर लागू नहीं होता था। हिंदू वसीयत अधिनियम 1870 जो सीमित थाआवेदन (यह मद्रास शहर में हिंदुओं द्वारा वसीयतों पर अन्य बातों के साथ लागू होता है) निस्संदेह 1865 के भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम के कुछ प्रावधान हिंदुओं पर लागू होते हैं। प्रोबेट और प्रशासन अधिनियम, 1881 के तहत

निष्पादक, उत्तरजीविता से संबंधित कानून के अधीन एक हिंदू का कानूनी प्रतिनिधि था। भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 211,

1925 वही कानूनी स्थिति जारी है। हालाँकि, 1925 के भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, जिसने पहले के उत्तराधिकार अधिनियम को निरस्त कर दिया था, ने धारा 57 के माध्यम से भाग V। के प्रावधान किए हैं जो अधिनियम की अनुसूची ।।। में निर्धारित किए गए हैं, जो किसी भी हिंदू, बौद्ध, सिख या जैन द्वारा 1 जनवरी 1927 को या उसके बाद बनाए गए सभी वसीयतों और संहिताओं पर लागू होते हैं, जिन पर वे प्रावधान पूर्ववर्ती खंडों के तहत लागू नहीं होते हैं। खंड (ए)और (ख) धारा 57। इस प्रकार यह है कि 1 जनवरी, 1927 के बाद एक वंचित व्यक्ति के मामले में धारा [2020] 9 एस. सी. आर. की आवश्यकता को एक हिंदू द्वारा निष्पादित किया जाएगा।

63 जिसमें कम से कम दो गवाहों द्वारा ऐसी वसीयत का सत्यापन अनिवार्य हो गया। इस प्रकार, एक हिंदू द्वारा वसीयत का निष्पादन भी 1 जनवरी, 1927 से विनियमित किया जाने लगा।

103. हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 30 इस प्रकार हैः

" 30. नियम संबंधी उत्तराधिकार। कोई भी हिंदू वसीयत या अन्य वसीयतनामा के माध्यम से किसी भी संपत्ति का निपटान कर सकता है, जो उसके द्वारा या उसके द्वारा इस तरह से निपटाया जा सकता है।

तारवाड़, तवाज़ी, इलम, कुटुम्बा या कवारू की संपत्ति में तवाज़ी, इलम, कुटुम्बा या कवारू, इस अधिनियम या कुछ समय के लिए लागू किसी अन्य कानून में कुछ भी निहित होने के बावजूद, द्वारा निपटाई जाने में सक्षम संपत्ति मानी जाएगी।इस खंड के अर्थ के भीतर उसे या उसके द्वारा "।

104. क्या यह वसीयत निष्पादित करने की हिंदू की शक्ति से संबंधित कानून में बदलाव लाता है? जैसा कि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम से पहले भी देखा गया था, एक हिंदू अपनी अलग और स्व–अर्जित संपत्ति की वसीयत कर सकता था। जहां तक संयुक्त परिवार की संपत्ति में अपने हित से संबंधित वसीयत को निष्पादित करने के उसके अधिकार का संबंध है, जिसमें वह एक सह–भागीदार है, कानून इस तरह के अभ्यास की अनुमति नहीं देता है। हम एम. एन. आर्यमूर्ति बनाम में इस न्यायालय के निर्णय का उल्लेख कर सकते हैं। एम. डी. सुब्बाराय सेट्टी 1 3; जिसमें इस न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित कियाः

" .....लेकिन दुर्भाग्य से, लचियाह, हालांकि एक पिता थे, हिंदू कानून के तहत, वसीयत, संयुक्त पारिवारिक संपत्ति या किसी भी अन्य संपत्ति का निपटान नहीं कर सकते थे।उसके भाग और एक वसीयत के रूप में यह स्पष्ट रूप से विभिन्न पर निष्क्रिय था

उनके द्वारा किए गए व्यवहार (पार्वतीबाई बनाम देखें। भगवंत

पंढरीनाथः 39 बम 593: ए. आई. आर. 1915 बम 265 और सुब्बारामी रेड्डी बनाम। राममा; 43 मद 824: ए. आई. आर. 1920 मैड 637)। इस बाद के मामले ने अप्पान पात्र चरियार बनाम में उस न्यायालय के पिछले निर्णय की शुद्धता पर सवाल उठाया है। वी. एस. श्रीनिवास चारियार और

अन्य; 40 मैड 1122: ए. आई. आर. 1918 मैड 531। निर्णय उस सिद्धांत पर आगे बढ़ते हैं जो वाइटल पुटन v में अच्छी तरह से तय किया गया था।

यमेनम्मा; (1874) 8 एम. एच. सी. आर. 6 और लक्ष्मण दादा नाइक बनाम। रामचंद्र दादा नायर; 5 बम 48 (पीसी): 7 आई. ए. 181, कि एक सह

43 1972 (4) एस. सी. सी. 7 वी. कल्याणस्वामी (डी) बायल्स। & एएनआर। वी.

भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. द्वारा। & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

साझेदार वसीयत द्वारा संयुक्त पारिवारिक संपत्ति तैयार नहीं कर सकता है, क्योंकि

उनकी मृत्यु की तारीख जब वसीयत प्रभावी होती है, तो कुछ भी नहीं होता है

इच्छा पर काम करने के लिए, जैसा कि, उनकी मृत्यु के समय, उनकीब्याज उत्तरजीविता द्वारा अन्य सह-भागीदारों को जाता है।

105. विल्लीअम्मई अची बनाम। नागप्पा चेट्टियार और एक अन्य 1 4,

न्यायालय, अन्य बातों के साथ, अभिनिर्धारित करता हैः

" 10. ..... यह संपत्ति पल्लनियप्पा की संयुक्त पारिवारिक संपत्ति है।

पिता वसीयत हटाने के हकदार नहीं थे और उनकी वसीयत बनाने से

संपत्ति के आने पर उसकी प्रकृति पर कोई फर्क न पड़े

पल्लनियप्पा के हाथों में। एक पिता संयुक्त परिवार नहीं बन सकता है।

केवल वसीयत बनाकर अपने बेटे की पूर्ण संपत्ति में संपत्ति,

इस प्रकार पुत्र के पुत्रों को वंचित करना जो इसके बाद पैदा हो सकते हैं

संयुक्त परिवार की संपत्ति में उनका अधिकार। यह अच्छी तरह से तय है कि

वह हिस्सा जो सह-भागीदार पैतृक संपत्ति के विभाजन पर प्राप्त करता है

उसके पुरुष मुद्दों के संबंध में पैतृक संपत्ति है। वे लेते हैं

जन्म से इसमें रुचि है कि क्या वे उस समय अस्तित्व में हैं

विभाजन या बाद में पैदा हुए हैंः [मुल्ला का हिंदू कानून देखें,

13 टी एडन। , पी। 249 , पैरा 223 (2) (4)]। अगर ऐसा है और चरित्र

जहां तक बेटों की बात है, पैतृक संपत्ति में कोई बदलाव नहीं होता है।

विभाजन के बाद भी चिंतित, हम यह देखने में विफल रहते हैं कि वह चरित्र कैसे है

केवल इसलिए बदल सकता है क्योंकि पिता एक वसीयत करता है जिसके द्वारा वहसंयुक्त परिवार की संपत्ति का अवशेष देता है (निश्चित करने के बाद)

बेटे के लिए)। मिताक्षरा परिवार में एक पिता के पास बहुत कुछ है। वसीयत बनाने का सीमित अधिकार और पल्लनियप्पा के पिता नहीं कर सके

पूरे संयुक्त परिवार की संपत्ति का निपटान करने के लिए, हालांकि

उसने अवशेष अपने बेटे को दे दिया। इसलिए हमारा मानना है कि

शायद एक कर्तव्यनिष्ठ पुत्र के रूप में प्रोबेट निकाला और किया पिता की इच्छा, संपत्ति की प्रकृति नहीं बदल सकी

और यह पल्लनियप्पा के हाथों में संयुक्त पारिवारिक संपत्ति होगीजहाँ तक उसके पुरुष मुद्दों का संबंध है।

106. इस बारे में कि क्या हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 30 लागू होती है

एनजी विल के मामले में एक हिंदू की शक्ति के मौलिक विचलन में, हम मैसूर की पूर्ण पीठ के निर्णय का उल्लेख कर सकते हैं।

सुंदर अडपा बनाम में न्यायालय। गिरिजा 1 5. उनके रूप में न्यायमूर्ति के. एस. हेगड़े

जहाज तब बेंच के लिए बोल रहा थाः

1967 एससी 1153

1962 (मैसूर) 72 [2020] 9 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

" 15. यह सर्वविदित है कि जब तक "अधिनियम" लागू नहीं हुआ, तब तक हिंदू संयुक्त परिवार में एक सह–भागीदार का हित, चाहे वह मिताक्षरा परिवार हो या एक अलियासंतन परिवार, एक वसीयतनामा के माध्यम से निपटाया नहीं जा सकता था, क्योंकि जब तक उसकी वसीयत प्रभावी हुई, तब तक अविभाजित परिवार में उसकी रुचि अन्य सह–भागीदारों द्वारा उत्तरजीविता द्वारा ली गई होगी। भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम ने उस स्थिति में कोई प्रवेश नहीं किया। भारतीय संविधान के प्रासंगिक प्रावधान

उत्तराधिकार अधिनियम भाग V। (संबंधित प्रावधान) में पाए जाते हैं –

वसीयती उत्तराधिकार) अनुसूची में पाए जाने वाले नियमों के साथ पढ़ा जाता है।।। लेकिन वे उस अनुसूची में निर्दिष्ट प्रतिबंधों और संशोधनों के अधीन भी हैं। अनुसूची ।।। में प्रतिबंध संख्या 1 में कहा गया हैः

" उसमें निहित कुछ भी वसीयतकर्ता को वसीयत करने के लिए अधिकृत नहीं करेगा। ऐसी संपत्ति जिसे वह अंतर–विवोस से अलग नहीं कर सकता था, या किसी भी व्यक्ति को रखरखाव के किसी भी अधिकार से वंचित नहीं कर सकता था, लेकिन

इस धारा के लागू होने पर, वह उन्हें वसीयत से वंचित नहीं कर सके। ”

17. न तो प्रथागत कानून के तहत और न ही अलियासंताना के तहत।

अधिनियम और न ही भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम के तहत एक के हित

एक अलियासंताना कुटुम्बा में सह–भागीदार को वसीयती स्वभाव से निपटाया जा सकता था। इस संबंध में धारा के स्पष्टीकरण के माध्यम से कानून में एक निश्चित परिवर्तन किया गया था। 30 (1) "अधिनियम"। इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि वर्तमान में एक अविभाजित अलियासंतना कुटुम्बा का सदस्य एक वसीयत के माध्यम से कुटुम्बा संपत्तियों में अपने हित का निपटान कर सकता है। लेकिन हम श्री जी. के. गोविंद भट से सहमत नहीं हैं जब वे कहते हैं कि स्पष्टीकरण

सेक को। 30 (1) एक विभाजित सह–भागीदार के अधिकारों का विस्तार किया। द.

धारा 30 का उद्देश्य स्पष्ट है। वह धारा न तो प्रत्यक्ष रूप से और न ही आवश्यक प्रभाव से विभाजित ब्याज के हस्तांतरण से संबंधित है।

जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, इसका उद्देश्य सीमित है। प्रयुक्त भाषा सरल है और इसलिए व्याख्या का कोई सवाल ही नहीं उठता है। श्री भट द्वारा किया गया यह तर्क देना सही नहीं है कि यदि धारा 30 (1) के स्पष्टीकरण को उस तरीके से समझा जाता है जिस तरह से उत्तरदाता चाहते हैं कि हम समझें, तो एक सह–भागीदार जो अविभाजित रूप से मर जाता है, वह अपने उत्तराधिकारियों के लिए विभाजित होने वाले व्यक्ति की

तुलना में अधिक मूल्यवान संपत्ति छोड़ जाएगा। ज्यादातर मामलों में, एक निसंताथी कावरू द्वारा लिया गया हिस्सा हालांकि कावरू के जीवन की अवधि तक सीमित है, लेकिन इसकी सीमा इससे अधिक होगी।

सेक के तहत गैर–प्रदान किया गया। 7 (2) "अधिनियम"।

हम पाते हैं कि यह न्यायालय जलजा शेठी और अन्य में है। वी. लक्ष्मी।

नमस्ते और ओआरएस। ; 1973 (2) एस. सी. सी. 773 ने एल. आर. एस. द्वारा वी. कल्याणस्वामी (डी) द्वारा लिए गए दृष्टिकोण को मंजूरी दी है।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

उपरोक्त मामले में उच्च न्यायालय। दूसरे शब्दों में, जैसा कि हम पहले ही संयुक्त परिवार की संपत्ति के मामले में देख चुके हैं, जब तक संपत्ति संयुक्त है, सह–भागीदार के अधिकार को ब्याज के रूप में वर्णित किया जा सकता है। द.

विभाजन अपने हिस्से के संदर्भ में अपने अधिकार का अनुमान या वर्णन नहीं कर सकता है। यह हिस्सा डूबा रहता है और संयुक्त परिवार में शीर्षक या स्थिति में विभाजन के साथ ही उभरता है। एक बार विभाजन होने पर सह–भागीदार का हिस्सा होता हैनंगे पड़े। इस संबंध में हम हरदेव राय बनाम में इस न्यायालय के फैसले पर ध्यान दे सकते हैं। पैराग्राफ 22 और 23 में शकुंतला देवी और अन्य।

यह नीचे लिखा हैः

" 22. संपत्ति में अपने हित को निर्धारित करने के उद्देश्य से, यह आवश्यक नहीं था कि सह–भागीदारों के बीच सीमा–दर–सीमा विभाजन होना चाहिए। जब सह–पक्षीय संपत्ति के विभाजन का इरादा व्यक्त किया जाता है, तो प्रत्येक सह–पक्षकार का हिस्सा स्पष्ट और सुनिश्चित हो जाता है। एक बार का हिस्सा

एक सह–सहभागी निर्धारित किया जाता है, यह एक सह–सहभागी संपत्ति नहीं रह जाती है। इस तरह की घटना में पक्षों के पास संपत्ति "संयुक्त किरायेदारों" के रूप में नहीं होगी, बल्कि "सामान्य किरायेदारों" के रूप में होगी। एस. बी. आई. [(1969) 2 एस. सी. सी. 33 में इस न्यायालय का निर्णयः ए. आई. आर. 1969 एस. सी. 1330], इसलिए, वर्तमान मामले में लागू नहीं है।

23. जहाँ एक सह–भागीदार संपत्ति में निश्चित हिस्सा लेता है, वह उस हिस्से का मालिक होता है और इस तरह वह उसे उसी तरह से बिक्री या बंधक द्वारा अलग कर सकता है जैसे वह अपने अलग हिस्से का निपटान कर सकता है।

संपत्ति "।

[इस संबंध में अनुच्छेद 4 में अपोवियर मामले (ऊपर) में निर्धारित कानून को भी देखें]।107. हम यह भी देख सकते हैं कि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम से पहले के कानून के तहत भी चार स्थितियां हो सकती हैं। संयुक्त हिंदू

परिवार के किसी सदस्य के संबंध में, जिसके पास अपनी अलग संपत्ति भी है, वह अपनी अलग संपत्ति की वसीयत कर सकता है। जहाँ तक संयुक्त परिवार की संपत्ति का संबंध है, वहाँ

तीन स्थितियाँ हो सकती हैं। पहली स्थिति यह है कि परिवार कहाँ रहता है।

462008 (7) एससीसी 46 [2020] 9 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

संयुक्त जिस मामले में सह-भागीदार का हित होगा। जहाँ तक इस हित का संबंध है, यह हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम से पहले वसीयत का विषय नहीं हो सकता था। दूसरी स्थिति ऐसे मामले में है जहाँ

उत्तराधिकार अधिनियम। वास्तव में, एक सह-भागीदार द्वारा विभाजन पर हिस्से के रूप में प्राप्त संपत्ति, जिसके पास कोई पुरुष मुद्दा नहीं है, को उसकी अलग संपत्ति के रूप में माना जाता है। जहाँ तक विभाजन के बाद पैदा हुए बेटे के प्रभाव का संबंध है, हमें उस पर उच्चारण करने की आवश्यकता नहीं है। उत्तराधिकार अधिनियम 2005 में संशोधन के बाद एक सह-भागीदार की बेटियों को उनके कार्यों में सह-भागीदार के रूप में शामिल किया गयास्वयं का अधिकार, यदि किसी हिंदू के पास महिला मुद्दा है तो विभाजन पर उसे आवंटित संपत्ति सह-आंशिक संपत्ति की प्रकृति का हिस्सा होगी। इस संबंध में "हिंदू कानून पर मुल्ला" में पृष्ठ 342 पर पैरा 228 खंड (6) में निम्नलिखित चर्चा देखें। 23 आरडी संस्करणः विभिन्न प्रकार की सूची बनाना

अलग संपत्तिः

" (6) विभाजन पर हिस्सा-उसके हिस्से के रूप में प्राप्त संपत्ति

एक सह-भागीदार द्वारा विभाजन पर, जिसके पास कोई पुरुष मुद्दा नहीं है (धारा 221 (4) देखें)।

इस स्थिति को अब शामिल करने के साथ भौतिक रूप से बदल दिया गया हैहिंदू उत्तराधिकार अधिनियम 2005 में संशोधन द्वारा अपने स्वयं के अधिकार में सह-भागीदारों के रूप में एक सह-भागीदार की बेटियाँ।

यदि इसलिए, वी. कल्याणस्वामी (डी) एलआरएस द्वारा। & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

भले ही विभाजन पर हिस्सा प्राप्त करने वाले सह-भागीदार के पास कोई पुरुष मुद्दा न हो, लेकिन महिला मुद्दा हो, विभाजन पर उसे आवंटित संपत्ति सह-पक्षीय संपत्ति की प्रकृति का हिस्सा होगी। इसलिए उपरोक्त प्रस्ताव को एक सह-भागीदार के रूप में पढ़ना होगा, जिसे विभाजन पर एक हिस्सा आवंटित किया गया है, इसे अपनी अलग संपत्ति के रूप में लेता है।

सह–भागीदार को निरस्त और समाप्त कर दिया गया है, दोनों सह–भागीदारों के रूप में स्थिति की समानता दी गई।

विभाजन के लिए दूसरे को सह–भागीदार बनाना एक हिंदू के लिए संयुक्त परिवार में अपने हित की वसीयत करने के लिए खुला है। दूसरे शब्दों में, "सह–आंशिक संपत्ति में ब्याज" शब्दों को केवल तभी अनुमानित किया जा सकता है जब एक संयुक्त संपत्ति हो। परिवार जो स्थिति में अक्षुण्ण हो और न कि जब परिवार में स्थिति में व्यवधान होने के अर्थ में विभाजन हो। इस प्रकार, संयुक्त परिवार में एक हिंदू का अधिकार एक हित है। व्यवधान या विभाजन पर, यह एक निश्चित हिस्से का रूप धारण करता है। जब कोई मेट्स एंड बाउंड्स विभाजन होता है तो शेयर विशिष्ट गुणों के निरपेक्ष अधिकारों में परिवर्तित हो जाता है।

हिंदू महिलाओं के अधिकार का प्रभाव

संपत्ति अधिनियम, 1937 (1937 का XVIII) (संक्षिप्त के लिए '1937 अधिनियम' के रूप में संदर्भित)।

108. 1937 के अधिनियम की धारा 2,3 और 5 पर ध्यान देना उचित हैः

" 2. आवेदन। –इसके विपरीत हिंदू कानून या प्रथा के किसी भी नियम के बावजूद, धारा 3 के प्रावधान लागू होंगे जहां किसी हिंदू की निर्वसीयत मृत्यु हो जाती है।

3. संपत्ति का हस्तांतरण। –

(1) जब दयाभाग स्कूल ऑफ हिंदू लॉ द्वारा शासित कोई हिंदू किसी भी संपत्ति को छोड़कर निर्वसीयत मर जाता है, और जब हिंदू कानून के किसी अन्य स्कूल या प्रथागत कानून द्वारा शासित कोई हिंदू अलग संपत्ति छोड़कर निर्वसीयत मर जाता है, तो उसकी विधवा, या यदि

एक से अधिक विधवाएँ हैं, उनकी सभी विधवाएँ एक साथ, उप–धारा (3) के प्रावधानों के अधीन रहते हुए, उस संपत्ति के संबंध में हकदार होंगी, जिसके संबंध में वह उसी संपत्ति के लिए निर्वसीयत रूप से मर जाता है।

बेटे के रूप में भाग लेंः बशर्ते कि पूर्व मृत पुत्र की विधवा को पुत्र की तरह विरासत में मिलेगा यदि कोई पुत्र जीवित नहीं है [2020] 9 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

ऐसे पूर्व मृत पुत्र का, और एक के रूप में समान तरीके से विरासत में मिलेगापुत्र का पुत्र यदि ऐसे पुत्र या पुत्र का पुत्र जीवित बचा है।

पूर्व मृत पुत्रः बशर्ते कि वही प्रावधान होगा

एक पूर्व मृत पुत्र की विधवा को मुतातिस उत्परिवर्तन लागू करेंएक पूर्व मृत पुत्र।

(2) जब कोई हिंदू हिंदू कानून के किसी भी स्कूल द्वारा शासित होता है

उनकी मृत्यु के समय एक हिंदू संयुक्त परिवार में उनकी रुचि थी सम्पत्ति, उसकी विधवा, उप–धारा के प्रावधानों के अधीन रहते हुए

(3) , संपत्ति में वही हित हो जो उसका स्वयं था।(3) प्रावधानों के तहत हिंदू विधवा पर कोई ब्याज

इस धारा का सीमित ब्याज हिंदू के रूप में जाना जाएगा।

पुरुष मालिक के रूप में विभाजन का दावा करने का समान अधिकार।(4) इस धारा के प्रावधान किसी संपत्ति पर लागू नहीं होंगे।

जो किसी प्रथा या उत्तराधिकार के अन्य नियम द्वारा या उस पर लागू अनुदान की शर्तें एकल उत्तराधिकारी के लिए उतरती हैं।

या ऐसी कोई संपत्ति जिसके लिए भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925,लागू होता है।

XXX

XXX

XXX

5. अभिव्यक्ति का अर्थ "निर्वसीयत मरें"। –के उद्देश्य के लिए

इस अधिनियम के संबंध में एक व्यक्ति को निर्वसीयत माना जाएगा –

वे सभी सम्पत्तियाँ जिनके बारे में उसने वसीयतनामा नहीं किया है

जो प्रभाव डालने में सक्षम है।

जैसा कि देखा जा सकता है, 1937 के अधिनियम की धारा 3 तब लागू होती है जब कोई हिंदू

निर्वसीयत मृत्यु हो जाती है।

यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि 1937 के अधिनियम की धारा 3 (1) संबंधित है।

मृत्यु के समय निर्वसीयत हिंदू द्वारा अलग संपत्ति छोड़ने के मामले के साथ। ऐसी स्थिति में, अगर एक विधवा होती, तो वह बन जाती संपत्ति के संबंध में पुत्र के समान हिस्से का हकदार है। इसे उप–धारा (3) के अधीन बनाया गया था जिसमें घोषणा की गई है कि उस पर देय ब्याज एक सीमित ब्याज होगा जिसे हिंदू महिला संपदा के रूप में जाना जाता है। अधिक महत्वपूर्ण परिवर्तन जो लाया गया था वह धारा 3 (2) में स्थित है। इसके तहत, जब दयाबाघा या प्रथागत कानून के अलावा किसी भी कानून के स्कूल द्वारा शासित हिंदू की मृत्यु हो जाती है, तो वह अपनी मृत्यु के समय हिंदू संयुक्त परिवार की संपत्ति, उसकी वी. कल्याणस्वामी (डी) बी. एल. आर. एस. में हिस्सेदारी छोड़ देता है।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

केवल एक आकस्मिकता के लिए प्रदान करने के लिए जहां उनकी निर्वसीयत मृत्यु हो गई। इसमें कोई संदेह नहीं है कि धारा 2 ने घोषणा की कि धारा 3 तब लागू की जानी थी जब एक हिंदू की निर्वसीयत मृत्यु हो गई थी। जब धारा 3 (2) की बात आती है, तो मिताक्षर कानून के दायरे में आने वाले मामले के संबंध में, विधानमंडल ने उस समय प्रचलित कानून को ध्यान में रखते हुए माना है कि एक हिंदू हिंदू संयुक्त परिवार में अपने हित के संबंध में एक वसीयत को निष्पादित नहीं कर सकता है। यह वह अवधारणा है, जिसे हिंदू की धारा 30 के स्पष्टीकरण को लागू करके दूर कर दिया गया है।उत्तराधिकार अधिनियम, जिसके तहत, यह एक हिंदू के लिए हिंदू संयुक्त परिवार की संपत्ति में अपने हित को वसीयत करने के लिए भी खुला है। हिंदू महिला संपत्ति अधिकार अधिनियम की धारा 3 (2) पर वापस आते हुए, विधानमंडल ने सलाह दी है कि "हिंदू संयुक्त परिवार की संपत्ति में ब्याज" शब्दों को चुना है, जो धारा 3 (1) के तहत प्रावधानों के विपरीत हो सकता है, जो हिंदू को अलग संपत्ति छोड़ने पर विचार करता है। इसलिए, धारा 3 (2) उस स्थिति पर विचार करती है, जब 1937 में अधिनियम के अधिनियमन के बाद हिंदू की मृत्यु हो जाती है (यह 14 अप्रैल, 1937 को लागू हुआ और इसे हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 की धारा 31 द्वारा निरस्त कर दिया गया था), ताकि विधवा धारा 3 (2) के तहत अपने पति के समान ब्याज प्राप्त कर सके, हिंदू को संयुक्त संपत्ति से अलग नहीं होने पर मरना चाहिए। यदि कोई हिंदू, जब उसकी मृत्यु हो जाती है, अलग हो जाता है और कम से कम, उसके कारण, कोई हिंदू संयुक्त परिवार नहीं है, तो यह ऐसा मामला नहीं होगा जहां धारा 3 (2) लागू होगी। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि एक हिंदू जब निर्वसीयत मर जाता है तो उसका हिंदू संयुक्त परिवार में हित हो सकता है और साथ ही उसकी अलग-अलग संपत्तियां भी हो सकती हैं। फिर उसे अलग करें।

धारा 3 (1) लागू होगी जबकि संयुक्त परिवार में उसके हित के संबंध में, धारा 3 (2) शासित होगी। धारा 3 (1) लागू नहीं हो सकती क्योंकि विवादित संपत्तियां उसकी अलग संपत्तियां नहीं थीं।

वी. रंगास्वामी नायडू के भाई लक्ष्मीया नायडू द्वारा किए गए उत्तरजीविता के दावे पर इस अधिनियम का क्या प्रभाव पड़ता है?

क्या जीवित रहने का अधिकार, 1937 के अधिनियम के पारित होने से बच गया? 1937 के अधिनियम की धारा 3 (2) के तहत हिंदू विधवा को दिए गए अधिकार की प्रकृति क्या है? ये सवाल उठ रहे हैं

न्यायालयों के समक्ष विचार।

हमें केवल एक निर्णय का उल्लेख करने की आवश्यकता है, अर्थात, शत्रुघ्न इशर बनाम। आईपरी और अन्य 47। उद्धृत करने के लिए:

" 7. अधिनियम द्वारा कुछ विरोधी अवधारणाओं का मिलान करने की कोशिश की जाती है। एक सह-भागीदार की विधवा को अधिनियम द्वारा निवेश किया जाता है

उसी ब्याज के साथ जो उनके पति को उनकी मृत्यु के समय सह-सदस्य की संपत्ति में था। इस प्रकार उसे सह-अधिवेशन में शामिल किया जाता है, और उसके पति के जीवित सह-भागीदारों और इस तरह से पेश की गई विधवा के बीच, समुदाय उत्पन्न होता है।हित और अधिकार की एकता। लेकिन विधवा उस कारण से सह-भागीदार नहीं बनती हैः हालाँकि उन्होंने उसी ब्याज के साथ निवेश किया जो उनके पति ने उस संपत्ति में किया था जिसे उन्होंने अर्जित नहीं किया था।

वह अधिकार जिसका उसका पति अन्य सह-भागीदारों के हितों पर प्रयोग कर सकता था। उसके वैधानिक प्रतिस्थापन के कारण

उसके पति के स्थान पर सह-पक्षीय संपत्ति में ब्याज, वह अधिकार जो अन्य सह-पक्षकारों को हिंदू कानून के तहत था

के नियम द्वारा उस रुचि को लेने का मिताक्षर स्कूल

उत्तरजीविता तब तक निलंबित रहती है जब तक कि वह संपत्ति सुरक्षित रहती है। लेकिन एक सह-सहभागी की मृत्यु पर सह-सहभागी का कोई विघटन नहीं होता है ताकि पक्ष में एक परिभाषित हित तैयार किया जा सके

सह-आंशिक संपत्ति में विधवाएँः लक्ष्मी पेरुमल्लू बनाम।

कृष्णवनम्मा [AIR (1965) SC 825]। अर्जित ब्याज धारा 3 (2) के तहत उसके द्वारा अलगाव पर प्रतिबंधों के अधीन है जो उसकी संपत्ति में निहित हैं। उसके पास अभी भी विभाजन की मांग करके अपने हित को निश्चित करने की शक्ति है, एक पुरुष मालिक हो सकता है। यदि विधवा अपने पति के परिवार में आने के बाद विभाजन की मांग नहीं करती है, तो उसकी संपत्ति की समाप्ति पर उसका हित सह-स्वामित्व वाली संपत्ति में विलय हो जाएगा।

लेकिन अगर वह विभाजन का दावा करती है, तो वह अन्य सदस्यों से अलग हो जाती है और उसका हित सह-अधिवेशन में एक परिभाषित हित बन जाता है।

संपत्ति, और अन्य सह-भागीदारों का उत्तरजीविता द्वारा उस ब्याज को लेने का अधिकार समाप्त हो जाएगा। यदि उसकी संपत्ति के विभाजन के बाद उसकी मृत्यु हो जाती है, तो उसमें निहित सह-आंशिक संपत्ति का ब्याज उसके पति के उत्तराधिकारियों को दिया जाएगा। यह सच है कि धारा 3 (2) द्वारा सह-आंशिक संपत्ति में ब्याज प्राप्त करने वाली विधवा को वह ब्याज विरासत में नहीं मिलता है। लेकिन एक बार जब उसके हित का संपत्ति में अविभाजित हित का चरित्र समाप्त हो जाता है, तो यह उसकी संपत्ति की समाप्ति पर हस्तांतरित हो जाएगा।

1967 एससी 272 वी. कल्याणस्वामी (डी) बायल्स। & एएनआर। वी.

भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. द्वारा। & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

अपने पति के उत्तराधिकारियों पर। मान लेना जैसा कि कुछ में किया गया है तय किए गए मामले कि सह-पक्षकारों का विधवा के हित के निर्धारण पर उसकी रुचि लेने का अधिकार उसके बाद भी बना रहता है

हित निश्चित हो गया है, क्योंकि विभाजन का दावा सभी वास्तविकताओं के विभाजन का दावा करने के अधिकार को अस्वीकार करना है।

उत्तरजीविता के सिद्धांत के आधार पर एक मृत सह-भागीदार की संपत्ति पर दावा, लेकिन अधिनियम उक्त अधिकार को निरस्त नहीं करता है। उत्तरजीवी द्वारा दावा करने का अधिकार निलंबित कर दिया गया लेकिन समाप्त नहीं हुआ। विधवा, हालांकि एक सह-भागीदार नहीं थी, अधिकांश मामलों में एक सह-भागीदार की तरह थी। उन्हें सम्मानित भी किया गया था विभाजन का दावा करने का अधिकार। जब तक उन्होंने विभाजन का दावा नहीं किया और उनकी मृत्यु के बाद संपत्ति बरकरार रही, तब तक उत्तरजीवी द्वारा दावा करने का अधिकार जो ग्रहण कर लिया गया, पुनर्जीवित किया गया और

सह-भागीदार इस आधार पर संपत्ति के हकदार बन जाएंगे।

वह उत्तराधिकार इस तरह खुल गया जैसे कि सह-भागीदार की मृत्यु हो गई जब विधवा की मृत्यु हो गई। दूसरी ओर, यदि विधवा विभाजन का दावा करती है, तो उसका हित एक परिभाषित हित और दावा करने के अधिकार में बदल जाता है।उत्तरजीविता, जो निलंबित थी, नष्ट हो गई थी। संपत्ति तब पति के उत्तराधिकारियों को दी जाएगी। यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि, धारा 3 (2) के आधार पर, सह-विभाजन में कोई विच्छेद नहीं है।

दूसरे शब्दों में, 1937 के अधिनियम की धारा 3 (2) द्वारा कोई विभाजन नहीं लाया गया है।

हमें उन दो घटनाओं से भी अनजान नहीं रहना चाहिए जो वी. रंगास्वामी नायडू की संपत्ति के लिए 01.06.1955 पर उत्तराधिकार खोले जाने के बाद हुई थीं। हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956

विभाजन की मांग की। हम पहले ही उस सिद्धांत को देख चुके हैं जो एक विधवा द्वारा विभाजन की मांग के प्रभाव के बारे में निर्धारित किया गया है जिसमें 1937 के अधिनियम की धारा 3 (2) के तहत अधिकार निहित किया गया था। लेकिन, जैसा कि हमने देखा है, पर्यवेक्षण हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के रूप में विधान, यदि यह धारा 14 (1) के तहत पूर्ण अधिकार प्रदान करता है, तो यह कानून का विषय है कि आर. कृष्णम्मल के पास अधिकार, [2020] 9 एस. सी. आर. की प्रकृति क्या थी।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

यहां तक कि जब उन्होंने 1958 का ओ. एस. नंबर 71 स्थापित किया था। यह स्पष्ट है कि यदि धारा 3 (2) लागू होती है, तो जब संपत्ति के लिए आई. डी. 1 पर उत्तराधिकार खोला जाता है, तो लक्ष्मीया नायडू के पास केवल उत्तरजीविता का निलंबित अधिकार होगा। 1958 के ओएस 71 में समझौता आदेश है जिसके तहत आर. कृष्णम्मल ने लक्ष्मीया शाखा के पक्ष में वादी अनुसूची संपत्तियों में अपने सभी अधिकारों को छोड़ दिया है।

109. हम हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 6 में संयुक्त परिवार में 'हित' की इस अवधारणा की विधायी मान्यता पाते हैं। धारा 6 से पहले

2005 के संशोधन अधिनियम 39 द्वारा इसके प्रतिस्थापन में यह प्रावधान किया गया था कि मिताक्षर सह–आंशिक संपत्ति में हित रखने वाले अधिनियम के बाद पुरुष हिंदू की मृत्यु के मामले में, संपत्ति को उत्तरजीवी द्वारा हस्तांतरित किया जाना था। प्रावधान के लिए। व्याख्या की शर्तें अधिक प्रासंगिक हैं। स्पष्टीकरण । की शर्तें जो संशोधन के बाद धारा 6 की उप–धारा (3) में स्पष्टीकरण के रूप में बरकरार रखी गई हैं, निम्नानुसार हैं:

स्पष्टीकरण। इस उप–धारा के प्रयोजनों के लिए, ब्याज

किसी हिंदू मिताक्षर सह–भागीदार का उस संपत्ति में हिस्सा माना जाएगा जो उसे आवंटित किया गया होता यदि उसकी मृत्यु से ठीक पहले संपत्ति का विभाजन हुआ होता, चाहे वह दावा करने का हकदार हो या नहीं।

विभाजन हो या न हो।

110. इसलिए, यह अवधारणा कि एक में क्या सह–भागीदार है

मिताक्षरा परिवार को विभाजन से पहले एक रुचि थी, दोहराया जाता है। धारा 6 के प्रयोजन के लिए, हालांकि, की सीमा निर्धारित करने के लिएउस ब्याज को वह हिस्सा माना जाता है जो उसे तब मिलेगा जब उसकी मृत्यु से ठीक पहले कोई काल्पनिक विभाजन होता। व्यवधान के अर्थ में विभाजन हालांकि उस हिस्से की सीमा को निर्धारित करता है जो अधिनियम की धारा 8 के तहत हस्तांतरित होगा। हम यह स्पष्ट करते हैं कि हमें यह घोषित किए जाने के रूप में नहीं माना जाना चाहिए कि धारा 6 के स्पष्टीकरण के तहत विचार किया गया काल्पनिक विभाजन सह–सदस्य के निधन के लिए है। धारा (30) के स्पष्टीकरण में भी कहा गया है कि

' ब्याज 'संपत्ति' के रूप में जो एक हिंदू के बाद एक हिंदू कर सकता है

उत्तराधिकार अधिनियम वसीयत।

वी. रंगास्वामी नायडू का शीर्षक क्या है

क्या वह पास हो सकता है?

111. 1983 का ओ. एस. सं. 89 एक मुकदमा है जिसमें वादी के मांगे गए अधिकार की घोषणा की गई है और विभाजन की डिक्री भी है।

एलआरएस द्वारा वी. कल्याणस्वामी (डी) का कारण। & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

विभाजन के लिए एक डिक्री पारित करने और विभाजन के मुकदमे के लिए अदालत, प्रतिवादी 1 से 3 जो हमारे सामने अपीलकर्ताओं में से हैं, एक वादी के स्थान पर खड़े होंगे। हम सोचेंगे कि 1983 का ओ. एस. नंबर 89 और यहाँ तक कि 1985 का ओ. एस. नंबर 649 भी शीर्षक पर आधारित मुकदमे हैं। इसमें शामिल संपत्ति के

अधिकार से संबंधित प्रश्न पर गौर किया जाना चाहिए और निर्णय लिया जाना चाहिए।112. हम पहले ही पा चुके हैं कि इस दावे में कि वी. रंगवामी नायडू ने मौखिक विभाजन के माध्यम से संपत्तियों पर अधिकार हासिल किया था, स्वीकार नहीं किया जा सकता है। यह दावा भी कि उन्होंने स्व–अधिग्रहण के माध्यम से संपत्तियों का अधिग्रहण किया था, टिक नहीं सकता है। यदि परिवार की स्थिति में कोई व्यवधान आया है, तो शीर्षक में विभाजन के संकीर्ण अर्थ में विभाजन होता है।

जगह। हमने यह भी पाया है कि संयुक्त परिवार में विभाजन होने का मतलब यह नहीं है कि वी. रंगास्वामी नायडू कानूनी रूप से वस्तुओं के अनन्य और पूर्ण स्वामित्व का दावा कर सकते हैं।

वसीयत के अंतर्गत आता है। मान लीजिए कि वाद अनुसूची की संपत्तियाँ हैं –

वसीयत के लिए निर्धारित संपत्तियों का हिस्सा। परिणाम यह होगा कि, लागू कानूनी सिद्धांतों के संदर्भ में, हम पाएंगे कि वी. रंगास्वामी नायडू के पास वसीयत के तहत निर्धारित संपत्तियों के रूप में अनन्य अधिकार नहीं था।

113. तथापि, इस संबंध में प्रथम अपीलीय न्यायालय के तर्क पर ध्यान दिया जा सकता है। यह पता लगाने के बाद कि एक सह–मालिक एकतरफा रूप से अपने हिस्से के लिए विशिष्ट संपत्तियों का आवंटन नहीं कर सकता है, अपीलीय न्यायालय ने निम्नलिखित पहलुओं पर विचार कियाः

उत्तरदाता (1985 के ओ. एस. सं. 649 में वादी) पहले के मुकदमे (1958 के ओ. एस. सं. 71 और ओ. एस. सं.) से अवगत थे।

36 1963) कि वी. रंगास्वामी नायडू ने एकतरफा किया थाआबंटन, और भले ही उन्हें उपरोक्त में अवसर मिला था

दो उदाहरणों में, उन्होंने एकतरफा आवंटन पर कोई आपत्ति नहीं जताई। इसके बाद, अपीलीय न्यायालय ने इस तथ्य पर ध्यान दिया कि भाइयों से युक्त हिंदू संयुक्त परिवार की सैकड़ों एकड़ से अधिक भूमि की संपत्तियों की नब्बे–तीन से अधिक वस्तुएं थीं, और इसलिए, एक छोटे से हिस्से के आवंटन को अन्यायपूर्ण नहीं माना जा सकता है। आर. कृष्णम्मल ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के तहत कार्यवाही में अपना अधिकार स्थापित करने का प्रयास किया था। इससे पहले

वसीयत, अर्थात 1958 का ओ. एस. सं. 71 और 1963 का ओ. एस. सं. 36, वसीयत के आधार पर दायर किए गए थे। उत्तरदाताओं के पास पर्याप्त था

एकतरफा आवंटन को चुनौती देने के अवसर और वे इसका उपयोग करने में विफल रहे, और इसलिए, उनके परिणामी कार्यों को बहुत महत्व मिला। न्यायालय ने भगवंत पी. सुलाखे (उपरोक्त) मामले में भी निर्णय को अलग

किया। यह आगे पाया गया है कि चूंकि वी. रंगास्वामी नायडू ने दिनांक 10.05.1955 के समाचार पत्र प्रकाशन की पुष्टि करते हुए लिखित उत्तर दिया था, इसलिए घोषणा नहीं की जा सकती है। इसे एकतरफा माना जाए और उनके कार्यों ने हिंदू संयुक्त परिवार की संपत्तियों के चरित्र को बदल दिया था। इसलिए, यह पाया गया है कि कोई आपत्ति उठाने में विफल रहने और आवंटन को स्वीकार करने का कार्य करने के बाद, प्रत्यर्थियों को आर. कृष्णम्मल के जीवन हित और अपीलार्थियों के निहित हित से इनकार करने का कोई अधिकार नहीं है।

114. अपीलीय न्यायालय का पूरा तर्क यह है कि 1958 की ओ. एस. संख्या 71 और 1963 की ओ. एस. संख्या 36 में उक्त आवंटन को चुनौती नहीं देने में उत्तरदाताओं के आचरण को देखते हुए, जबकि एक सह–भागीदार, विभाजन होने के बाद भी, किसी भी विशिष्ट संपत्ति को अपनी अनन्य संपत्ति के रूप में एकतरफा रूप से अधिग्रहित नहीं कर सकता है, उन्हें संपत्तियों के अधिकार की प्रकृति को चुनौती देने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। अपीलीय न्यायालय ने इस तथ्य पर भी भरोसा किया कि दो भाइयों से मिलकर बनी संपत्तियों की बड़ी सीमा की तुलना में वादी अनुसूची की संपत्तियां (37 एकड़ से कम) एक छोटा सा हिस्सा है।

115. जहाँ तक 1958 के ओ. एस. सं. 71 का संबंध है, उत्तरदाता

उत्तरदाताओं। यदि उक्त फरमान पर कोई निर्भरता रखी जानी है, तो तथ्य यह है कि समझौता फरमान के तहत, पूरे अधिकार दिए गए हैं जीवन संपदा धारक आर. कृष्णम्मल द्वारा दिया गया त्याग, एल. आर. एस. द्वारा अपने वी. कल्याणस्वामी (डी) में किसी को घूरता है।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

चेहरा। ए 2 समझौता फरमान है। यह दिनांकित 21.07.1958 है। मुकदमा 10.04.1958 पर दायर किया गया था। यह स्पष्ट रूप से प्रतिवादियों के लिए उपयुक्त हो सकता है कि वे मामले को मुकदमे में नहीं जाने दें। पीडब्लू1 की गवाही, अन्य बातों के साथ, इस प्रकार दिखाती हैः

आर. कृष्णम्मल ने बताया है कि आप कितना दे सकते हैं।

मुझे। आर. कृष्णम्मल ने रहने के लिए एक घर और भोजन के लिए जमीन मांगी है, अन्यथा, उन्होंने संपत्ति में समान हिस्से की मांग नहीं की।

समझौते के बारे में मामले पर विवाद किया और उसने बचाव किया 1958 के ओ. एस. सं. 71 में समझौता। वास्तव में उत्तरदाता थे,

किस आधार पर लक्ष्मीया शाखा समझौते के लिए उत्तरदायी हो गई। यह अलग हो सकता था अगर आर. कृष्णम्मल की कार्रवाई का कारण पूरी तरह से वसीयत के आधार पर था। इस मामले में,वैकल्पिक मामला उसके लिए उपलब्ध अधिकारों के आधार पर स्थापित किया गया, जैसा कि ऊपर कहा गया है, और यह देखते हुए कि वसीयत में कुछ वस्तुओं को उसकी अपनी के रूप में मान्यता दी गई थी, और अन्य आइटम जिनमें आइटम शामिल थे जो [2020] 9 एस. सी. आर. में शामिल थे।

विशाल संयुक्त पारिवारिक संपत्ति के हिस्से के रूप में भी, उन्होंने अपने अधिकारों को छोड़ दिया है, इसे वी. रंगास्वामी नायडू द्वारा एकतरफा आवंटन को चुनौती देने के लिए लक्ष्मीया शाखा द्वारा अवसर का उपयोग नहीं करने के रूप में वर्णित नहीं किया जा सकता है।

118. 1963 के ओ. एस. सं. 36 में भी, जैसा कि हम पहले ही चर्चा कर चुके हैं,

1974 में समझौते के समय, लक्ष्मीया शाखा पहले से ही 1958 की ओ. एस. संख्या 71 में समझौते में पक्षकार थी, जिसके तहत उन्होंने वास्तव में मद संख्या के संबंध में पूर्ण अधिकारों को मान्यता दी थी। 5 और आर. कृष्णम्मल के पक्ष में 6। उनके लिए यह बहुत कम मायने रखता था कि 1963 के ओ. एस. संख्या 36 में समझौते के आदेश के तहत, इसे आर. कृष्णम्मल द्वारा एक जीवन संपदा के रूप में प्राप्त किया जाना था और उनके द्वारा अलग-थलग नहीं किया जाना था। हमने देखा है कि यह कहा गया था कि उक्त मुकदमे में अन्य प्रतिवादियों के खिलाफ कोई राहत का दावा नहीं किया गया था। ऐसी परिस्थिति में एकतरफा आवंटन को चुनौती देने के अवसर का उपयोग नहीं करने के आधार पर प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा किया गया निष्कर्ष हमें आकर्षित नहीं करता है।

बड़ा, जिसके परिणामस्वरूप एकतरफा आवंटन को अन्यायपूर्ण नहीं माना जा सकता था। यह कानूनी मुद्दों को संबोधित नहीं करता है। इस आधार पर कि संयुक्त परिवार की स्थिति में विभाजन है, निस्संदेह, वी. रंगास्वामी नायडू इस सिद्धांत के गला घोंटने से मुक्त हो जाएंगे कि एक हिंदू अविभाजित परिवार में अपने हित की वसीयत नहीं कर सकता है। जैसा कि हमने देखा है, जिस क्षण विभाजन होता है, जो उभरता है वह पूर्ववर्ती सह-भागीदार का हिस्सा होता है। इस मामले में, केवल दो सह-भागीदार हैं, अर्थात्। , वी. रंगास्वामी नायडू और लक्ष्मीया नायडू। उनके बीच एक-आधा हिस्सा होगा। निस्संदेह, यदि वी. रंगास्वामी नायडू ने अपना आधा हिस्सा विरासत में दिया होता, तो यह कानूनी विवाद पैदा नहीं कर सकता था। हम इस बात पर जोर देते हैं कि इसमें व्यवधान हो सकता है। हमने यह भी देखा है कि यदि संकीर्ण अर्थों में संयुक्त परिवार की स्थिति और विभाजन में व्यवधान होता है, तो यह उत्पन्न करता है परिणामस्वरूप कि अलग किए गए सह-भागीदार के हिस्से के संबंध में, उसका

उत्तरजीविता के सिद्धांत के आधार पर किसी भी दावे से हिस्सा प्रतिरक्षित हो जाता है। हमने यह भी देखा है कि एक अविभाजित परिवार में अपने हित के किसी सदस्य द्वारा वसीयत कानूनी रूप से अभिशाप था, क्योंकि उत्तरजीविता के सिद्धांत के तहत, संपत्ति पर जन्म अधिकार के तहत दावा करने वाले व्यक्तियों को वसीयत के तहत दावा करने वालों की तुलना में प्राथमिकता दी जाएगी। एक बार यह

निर्वसीयत उत्तराधिकार के मामले में कानूनी उत्तराधिकारी के अधिकार पर बाधा को हटा दिया जाता है, यह उत्तराधिकारी होंगे, जो सफल होंगे।

यदि वह वी. कल्याणस्वामी (डी) एलआरएस द्वारा। & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

यदि ऐसा है, तो क्या कोई हिंदू, चाहे वह हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम से पहले हो, विशिष्ट संपत्तियों की वसीयत नहीं कर सकता है जिन पर उसे निस्संदेह संयुक्त अधिकार होंगे?

120. स्वामित्व में विभाजन लाने के बाद स्थिति क्या होगी, लेकिन इससे पहले कि संपत्ति को सीमा और सीमा के आधार पर विभाजित किया जाए? हमने देखा है कि मध्यावधि के दौरान, परिवार के गुण

संयुक्त बने रहेंगे [1986 (1) एस. सी. सी. 366 देखें]। दूसरे शब्दों में, जब तक कोई विभाजन नहीं होता है, तब तक संपत्तियां, हालांकि संयुक्त परिवार में विभाजन के अर्थ में विभाजन द्वारा शेयरों का निर्धारण किया जाता है, कोई भी सह-भागीदार किसी विशिष्ट वस्तु की ओर इशारा नहीं कर सकता है और इसे अपना होने का दावा नहीं कर सकता है।

121. अब, तत्कालीन मद्रास राज्य में एक हिंदू की एक विशिष्ट वस्तु को स्थानांतरित करने की शक्ति के संबंध में क्या स्थिति होगी

संपत्ति तब भी जब परिवार अक्षुण्ण हो। मद्रास की एक पूर्ण पीठउच्च न्यायालय ने अय्यगारी वेंकटरमैया और एक अन्य मामले में रिपोर्ट किए गए निर्णय में इस प्रश्न पर विचार किया है। अय्यगारी रामय्या "। पूर्ण पीठ के एक संदर्भ पर न्यायालय के समक्ष वास्तव में जो स्पष्ट प्रश्न उठा, वह था, हिंदू अविभाजित परिवार में अपने हित की बिक्री को प्रभावित करने के बाद विक्रेता की मृत्यु का प्रभाव। जाहिरा तौर पर जो विवाद उठाया गया था, वह यह था कि उत्तरजीविता के सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए, यदि विक्रेता अपने अधिकारों को लागू करने के लिए एक मुकदमा स्थापित नहीं करता है, जबकि विक्रेता जीवित था, तो विक्रेता को लागू करने का कोई अधिकार नहीं होगा। न्यायमूर्ति बश्यम अयंगर ने एक अलग निर्णय लिखा है जिसमें उन्होंने पूरे मामले के कानून का विस्तृत सर्वेक्षण किया है। विद्वान न्यायाधीश अन्य बातों के साथ-साथ इस प्रकार मानता हैः

" अविभाजित हिंदू परिवार के किसी सदस्य द्वारा अपने उद्देश्यों के लिए पारिवारिक संपत्ति को अलग-थलग करने का सवाल, जहाँ तक मुझे पता है, हिंदू कानून के किसी भी ग्रंथ या हिंदू कानून के किसी भी सदस्य द्वारा उठाया गया विषय नहीं है।टिप्पणीकार। इसलिए इस विषय पर कोई स्पष्ट अधिकार हिंदू कानून की पुस्तकों में नहीं पाया जा सकता है, और यह संदिग्ध है कि क्या किसी सह-भागीदार द्वारा अपने अविभाजित हिस्से और हित के अलगाव को हिंदू न्यायविदों द्वारा मान्यता दी गई थी। जैसा कि न्यायिक द्वारा देखा गया है

समिति "इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता कि इस तरह के सभी अलगाव, चाहे स्वैच्छिक हों या अनिवार्य, एक संयुक्त और अविभाजित हिंदू परिवार के सख्त सिद्धांत और कानून के साथ असंगत हैं।

मद्रास और बॉम्बे में स्थापित, क्रमिक विकास में से एक रहा है।यह उस इक्विटी पर आधारित है जिसके मूल्य के लिए एक खरीदार को अपने विक्रेता के जूते में खड़े होने और अपने अधिकारों का निर्धारण करने की अनुमति दी जानी चाहिए

49 (1902) आईएलआर 25 मद्रास 690 [2020] 9 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

विभाजन का अर्थ "सूरज बंसी कोएर बनाम। शीओ परसद आई. एल. आर. 5 कैल्क। 148. "

विद्वान न्यायाधीश आगे निम्नलिखित में कानून का उल्लेख करते हैं –

:

" एक सह–भागीदार अपने अविभाजित हिस्से को अलग करने का दावा कर सकता है।

पूरे परिवार की संपत्ति में या परिवार की संपत्ति के कुछ निर्दिष्ट हिस्से में उसके अविभाजित हिस्से में–जैसा कि वर्तमान मामले में है–या परिवार की संपत्ति के एक निर्दिष्ट हिस्से के पूरे हिस्से में–जैसा कि

वेंकटचेला पिल्लई बनाम में मामला। चिन्नाय्या मुदलियार 5 M.H.C.R. 166. अनैच्छिक बिक्री के मामले में भी ऐसा ही हो सकता है। इन सभी मामलों में, बिक्री ब्याज पर संचालित होती है।

और हस्तांतरणकर्ता का वही हिस्सा हस्तांतरण की तारीख पर मौजूद था और हस्तांतरणकर्ता को इसे लाकर हस्तांतरण का काम करना चाहिए।

हालाँकि, हम निम्नलिखित पर भी ध्यान देते हैं:" एक सह–भागीदार से हस्तांतरणकर्ता का दावा

इसमें कोई संदेह नहीं है कि हस्तांतरण इस अर्थ में एक न्यायसंगत दावा है कि उसे मूल्य के लिए हस्तांतरणकर्ता होना चाहिए और ऐसे मामलों में जहां हस्तांतरण पारिवारिक संपत्ति के एक विशिष्ट हिस्से से संबंधित है, उसे उस विशिष्ट पर जोर देने का कोई कानूनी अधिकार नहीं है। विक्रेता के हिस्से को आवंटित किया जा रहा हिस्सा। मूल्य के लिए एक खरीदार होने के नाते उसके पास ऐसा हिस्सा या उसका इतना हिस्सा रखने के लिए इक्विटी होगी जो इस तरह से आवंटित किया जा सकता है, यदि यह अन्य भागीदारों के हितों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना किया जा सकता है। बिक्री को लागू करने के लिए उसके द्वारा लाए गए किसी भी मुकदमे में, सभी सदस्य

परिवार को पक्षकारों के रूप में शामिल किया जाना चाहिए जैसा कि विभाजन वाद में किया गया है, वाद का विषय पारिवारिक संपत्ति है जैसा कि उस समय मौजूद था।स्थानांतरण की तिथि "।

वास्तव में न्यायालय ने वेंकटचेला पिल्लै बनाम. चिन्नाय्या

इलियार 5 0 (1870) निम्नलिखित रूप में आयोजित किया गया:

डी) 5 M.H.C.R. 166 वी. कल्याणस्वामी (डी) बीवाईएलआरएस। & एएनआर। वी.

भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. द्वारा। & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

" ..... और अपीलार्थी की ओर से तर्क यह है कि एक सह शेयरधारक द्वारा बनाई गई पारिवारिक संपत्ति की बिक्री पर आपत्ति नहीं कर सकता है।

एक अन्य सह–भागीदार जब बेची गई संपत्ति का हिस्सा है

निर्विवाद रूप से सह के हिस्से की तुलना में मात्रा और मूल्य में कम पूरी संपत्ति में बिक्री करने वाला विक्रेता।

हमारा मानना है कि यह एक असमर्थनीय आपत्ति है। द.

सह–भागीदार के अलगाव के अधिकार के बारे में इस न्यायालय का निर्णय पार्क में रखी गई संपत्ति में उसका निहित स्वार्थ नहीं जाता है।

की सीमा तक अलगाव की वैधता स्थापित करने से परे

अलगाव का विषय। और वे इस सिद्धांत पर आधारित हैं कि प्रत्येक सह–भागीदार के पास एक निहित वर्तमान अविभाजित संपत्ति है

एक अनिवार्य या स्वैच्छिक विभाजन द्वारा कई, और इस तरह केसंपत्ति में किसी भी अन्य हित की तरह संपत्ति हस्तांतरणीय है। इसके अलावा

इस में अलगाव के तहत पहले प्रतिवादी का शीर्षक

हमारा मानना है कि वर्तमान मामले को आगे नहीं बढ़ाया जा सकता है।

XXX

XXX

XXX

वर्तमान मामले में बिक्री से इसलिए विक्रेता, सुब्बाराय,

हमारे फैसले में पहले प्रतिवादी के पिता को स्थानांतरित नहीं किया जा सका

संयुक्त–पारिवारिक संपत्ति के किसी भी विशिष्ट हिस्से के लिए वैध अधिकार लेकिन

केवल एक अविभाजित सह–भागीदार के रूप में अपनी लाभकारी संपत्ति के लिए विभाजन का आकस्मिक अधिकार, और यह इस प्रकार है कि पहला प्रतिवादी है

केवल वे ही बिक्री अनुबंध का विषय थे।ऐसा प्रतीत होता है कि एक की शक्ति के संबंध में कोई एकरूपता नहीं है

अपने अविभाजित ब्याज को बेचने के लिए। सिद्धेश्वर मुखर्जी बनाम। एनेश्वर प्रसाद नारायण सिंह और अन्य 51 हम ध्यान देते हैं

विंगः

" 9. यह सच है कि मिताक्षर कानून के तहत, जैसा कि इसे प्रशासित किया जाता है

बिहार राज्य, कोई भी सह-भागीदार अलग नहीं कर सकता है, यहां तक कि मूल्यवान के लिए भी

विचार के बिना संयुक्त संपत्ति में उसका अविभाजित हित

उनके सह-भागीदारों की सहमति; लेकिन हालांकि एक सह-भागीदार है

स्वैच्छिक रूप से अपने अविभाजित सहयोगी को अलग करने में अक्षम ब्याज, यह लेनदार के लिए खुला है, जिसने फिर से एक डिक्री प्राप्त की है

व्यक्तिगत रूप से, इस अविभाजित ब्याज को संलग्न करने और बेचने के लिए,

1953 एससी 487 [2020] 9 एससीआर

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

और खरीद के बाद ब्याज को एक सूट द्वारा अलग करने के लिए

विभाजन "।

निम्नलिखित रूप में आयोजित किया गयाः" ..... अब यह अच्छी तरह से तय हो गया है कि सह-भागीदार का खरीदार

संयुक्त परिवार की संपत्ति में अविभाजित हित उस पर कब्जा करने का हकदार नहीं है जो उसने खरीदा है। उसका एकमात्र अधिकार संपत्ति के विभाजन के लिए मुकदमा करना और उसे उसके आवंटन के लिए पूछना है।

जिसे विभाजन पर इसके टुकड़े में गिरते हुए पाया जा सकता है

सह-भागीदार जिसे उसने खरीदा था।

122. न्यायमूर्ति बश्यम अय्यंगार के विचार को उच्च न्यायालय के पाँच विद्वान न्यायाधीशों की पूर्ण पीठ ने के. पेरामनायकम पिल्लई बनाम में भी अनुमोदित किया है। एस. टी. शिवरामन और अन्य 53.

123. इस प्रकार, किसी हिंदू द्वारा अलगाव के मामले में, भले ही वह संयुक्त संपत्ति से संबंधित किसी विशिष्ट संपत्ति का हो, उससे निपटा जाएगा।

न्यायसंगत आधार पर, क्या विदेशी को उचित रूप से गठित मुकदमे में इसे लागू करने के लिए कोई कार्रवाई करनी चाहिए। हम इस निष्कर्ष पर पहुंचेंगे कि मिताक्षर हिंदू संयुक्त परिवार में एक सह-भागीदार द्वारा विशिष्ट अचल संपत्ति पर भी इस तरह के अधिकार की बिक्री कानून में प्रभावी होती है।

जहाँ इसकी अनुमति है और यह एक शून्य लेनदेन का मामला नहीं होगा। इस चर्चा को शुरू करने का उद्देश्य विशिष्ट वस्तुओं को स्थानांतरित करने के लिए सह-भागीदार की शक्ति से संबंधित कानून की सराहना करना है, भले ही वहाँ स्वामित्व के विभाजन के अर्थ में कोई विभाजन नहीं किया गया है ताकि हम इस सवाल का मूल्यांकन करने के लिए बेहतर स्थिति में हों कि क्या किसी मामले में जहां कोई हिंदू हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम से पहले एक वसीयत को निष्पादित करता है, वह वसीयत द्वारा, परिवार में एक विभाजन लाए जाने के बाद विशिष्ट अचल संपत्ति की वसीयत कर सकता है।

124. इस समस्या को उचित परिप्रेक्ष्य में समझने के लिए,

हमें कुछ महत्वपूर्ण आयामों का प्रचार करना चाहिए। वास्तविक सिद्धांत जिसके आधार पर एक संयुक्त हिंदू परिवार में एक सह-भागीदार का हित एक वैध वसीयत का विषय नहीं हो सकता था, वह यह था कि वसीयत अन्य सह-भागीदारों में निहित उत्तरजीविता द्वारा संपत्ति का दावा करने के अधिकार के साथ टकराव में आ जाएगी। इस प्रकार, यह एक पूर्व का मामला है

52 ए. आई. आर 1966 एस. सी. 470

53 ए. आई. आर. 1952 मद्रास 419 वी. कल्याणस्वामी (डी) एल. आर. एस. & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

वसीयत पर वरीयता लेने का अधिकार जो लागू हो सकता है

केवल वसीयत बनाने की तारीख से नहीं बल्कि वसीयतकर्ता की मृत्यु पर। इस भेद ने स्पष्ट रूप से अदालतों को एक अंतर-जीवंत अलगाव को मान्यता देने की अनुमति दी है जो केवल तभी संभव है जब सह-भागीदार जीवित हो।

संयुक्त हिंदू परिवार में उनकी रुचि के बारे में क्योंकि इसमें उत्तरजीविता के अधिकार और सह-भागीदार द्वारा बनाए जाने वाले अधिकारों के बीच संघर्ष शामिल नहीं है। लेकिन एक बार जब विभाजन हो जाता है, तो उत्तरजीविता का अधिकार समाप्त हो जाता है और किसी निर्दिष्ट अचल संपत्ति के वसीयत पर लागू होने वाले उक्त सिद्धांत पर आपत्ति हो सकती है। वास्तव में, विशिष्ट अचल संपत्ति के विभाजन के बाद की गई वसीयत का मामला एक अलग आधार पर खड़ा होता है और यह आपत्ति कि बिक्री एक सह-भागीदार द्वारा की जाती है जब संयुक्त परिवार मौजूद होता है, ठीक नहीं है।

125. दूसरा अंतर जो हम देख सकते हैं वह यह है कि जैसा कि न्यायमूर्ति बश्यम अय्यंगार ने अय्यगारी वेंकटरमैया में उल्लेख किया है।

और एक अन्य (ऊपर) यह है कि अधिकार को एक विदेशी के पक्ष में एक न्यायसंगत अधिकार के रूप में मान्यता दी गई थी जिसने मूल्यवान विचार के लिए संपत्ति खरीदने का इरादा किया है। एक वसीयत भारी हो सकती है। वसीयतदार की शर्त और अधिकार चुनाव के सिद्धांत के अधीन हो सकते हैं। दूसरी ओर, एक वसीयत में वसीयतदार के लिए कोई दायित्व शामिल नहीं हो सकता है, इस मामले में, वह एक के समान नहीं हो सकता है

अंतर–विवोस हस्तांतरण के तहत विदेशी जो मूल्यवान के लिए संपत्ति खरीदता है विचार करें।

126. कम से कम, एक न्यायसंगत दावे के रूप में, क्या अपीलकर्ता अपने अधिकार को लागू नहीं कर सकते हैं और इस आधार पर वस्तुओं को आवंटित करने का दावा नहीं कर सकते हैं कि उन्हें वसीयतकर्ता के हिस्से में आवंटित किया जा सकता है, जैसा कि किसी हिंदू से विशिष्ट अचल संपत्ति के हस्तांतरणकर्ता के मामले में होता है, भले ही संयुक्त परिवार का अस्तित्व बना रहे? हमने देखा है कि कानून ऐसे हस्तांतरणकर्ता को असहाय नहीं बनाता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि न्यायमूर्ति बश्यम अय्यंगार द्वारा अय्यगारी वेंकटरमैया (ऊपर) में निर्णय में जो शर्तें विकसित की गई हैं, उनमें से एक यह है कि सभी भागीदारों को पार्टी में होना चाहिए। इस मामले में, उक्त आवश्यकता को पूरा किया जाता है क्योंकि उन्हें प्रतिवादी 4 से 11 के रूप में दर्शाया जाता है जो 1983 का ओ. एस. संख्या 89 है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि हम देखते हैं कि ऐसे मामले में एक और आवश्यकता यह होगी कि संयुक्त परिवार की सभी संपत्तियां अनुसूचित हों। यह आवश्यकता पूरी नहीं होती है और मुकदमे की रूपरेखा वादी और प्रतिवादी 1 से 3 के अनन्य शीर्षक पर आधारित है जो वसीयत पर आधारित है।

127. परिवार की संपत्ति की सीमा के बारे में, यह ध्यान देना प्रासंगिक है कि पीडब्लू1 ने अन्य बातों के साथ–साथ निम्नानुसार पदच्युत किया हैः

मेरे भाई बक्टाचलम ने वर्ष 1944 में सरकारी कार्य के नाम पर कोल्लेगल गाँव, सत्यमंगलम में 750 एकड़ भूमि अपने पिता को दे दी। वे 750 एकड़ जमीन हमारे परिवार के कब्जे में है। मेरे पिता ने 1932 से 1958 तक कोयंबटूर में 150 एकड़ जमीन खरीदी थी।

मेरा नाम और रामथल। 1944 से 1958 तक उनके परिवार में 1,000 एकड़ से अधिक भूमि खरीदी गई थी। वी. रंगास्वामी नायडू का कोल्लगल, कोल्लनगोडु, कोयंबटूर और तंजौर में खरीदी गई 1,000 एकड़ भूमि पर अधिकार है। मुझे पता है कि आर. कृष्णम्मल के पास 1,000 एकड़ से अधिक भूमि है। आर. कृष्णम्मल ने ए 1 में 1000 एकड़ भूमि में हिस्सेदारी का दावा नहीं किया। जब हमने मामला सुलझा लियाऔर आर. कृष्णम्मल को हिस्सा दिया, हमने 1,400 एकड़ भूमि के विस्तार को ध्यान में नहीं रखा। आर. कृष्णम्मल ने हिस्सेदारी का दावा नहीं किया क्योंकि उनका 700 एकड़ से अधिक भूमि पर अधिकार है।

ऊपर पारिवारिक संपत्तियों की उपलब्धता के बारे में तस्वीर है। वे निश्चित रूप से वाद में निर्धारित नहीं हैं। हम.

इन भूमि के मूल्य के बारे में उन्हें ठीक से जानकारी नहीं है।

128. हम निश्चित रूप से सोचेंगे कि वसीयत के तहत उत्तराधिकारी, परिवार की स्थिति में विभाजन के बाद एक हिंदू द्वारा छोड़ दिया गया है परिवार से संबंधित विशिष्ट संपत्तियों के पास वास्तव में संपत्ति के अधिकार होंगे, लेकिन वे वसीयतकर्ता के हिस्से तक सीमित होंगे। विवाद के क्षेत्र में यह कानून का सिद्धांत नहीं हो सकता है कि कोई व्यक्ति सामान्य रूप से अपने अधिकार से अधिक अधिकार हस्तांतरित नहीं कर सकता है। भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम के तहत भी, धारा 59 के तहत, विभाजन होने पर वी. रणगस्वामी नायडू द्वारा अपने हिस्से की वसीयत करने पर कोई प्रतिबंध नहीं हो सकता था। हम पहले ही देख चुके हैं कि वसीयत में अंतर–व्यवहार लेनदेन द्वारा अंतरिती के लिए उपलब्ध न्यायसंगत प्रतिफल, जिसमें उसने मूल्यवान प्रतिफल का भुगतान किया है, लागू नहीं हो सकता है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं हो सकता है कि अगर बाकी सब कुछ साबित हो जाता है, तो वसीयतदार को बिना उपचार के छोड़ दिया जाना चाहिए। हमने अपीलार्थियों के पक्ष में रहने पर विचार करने के विचार के साथ खिलवाड़ किया, यहां तक कि इसे भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत शक्तियों का प्रयोग भी माना।

इस मामले के विशेष तथ्यों में, जैसा कि पी. डब्ल्यू. 1 की गवाही द्वारा निहित असमानता के संबंध में सामने लाया गया है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि हम मुकदमे की रूपरेखा को अपीलार्थियों के लिए शायद ही सहायक पाते हैं। लेकिन इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि अपीलकर्ताओं को अन्यथा विफल होना चाहिए, हमें इस मामले को आगे बढ़ाने की आवश्यकता नहीं है।

क्या यह एक विभाजन को प्रभावित करेगा?

129. अपीलार्थियों द्वारा यह तर्क दिया गया है कि यदि बी1 के कारण कोई विभाजन नहीं हुआ तो भी वसीयत की शर्तें समान परिणाम प्राप्त करती हैं।

एल. आर. एस. द्वारा वी. कल्याणस्वामी (डी)। & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

130. विद्वान वकील श्री गुरु कृष्णकुमार हालांकि यह इंगित करेंगे कि इस आधार पर आगे बढ़ना भी कि एक वसीयत है और इसकी शर्तें एक घोषणा के बराबर हैं क्योंकि रंगस्वामी नायडू का निधन 1.6.1955 पर हुआ था और वसीयत ने दिन की रोशनी देखी जहाँ तक अन्य सह–भागीदार हैं।केवल सी. आर. पी. सी. की धारा 145 के तहत कार्यवाही के दौरान, जो मृत्यु के बहुत बाद हुई थी, जब रंगास्वामी की संपत्ति के लिए उत्तराधिकार खोला गया था, वसीयत को लक्ष्मीया नायडू को सूचित नहीं किया गया था, कानून में आवश्यकता पूरी नहीं हुई थी।

1937 के अधिनियम की धारा 3 (2) को लागू करने के लिए, वी. रंगास्वामी

हिंदू अविभाजित परिवार में रुचि छोड़ते हुए नायडू की निर्वसीयत मृत्यु हो गई होगी। अपीलार्थी हमसे जो करने का आह्वान कर रहे हैं वह वसीयत का एक हिस्सा लेना है जिसमें कथित रूप से घोषणा शामिल है जिसमें

कानून, प्रभाव विभाजन। लेकिन अगर वसीयत पर कार्रवाई की जानी है, तो जो पहेली मौजूद है, वह यह नहीं है कि वी. रंगास्वामी नायडू की मृत्यु हो गई।उन संपत्तियों को शामिल करें जो वादी अनुसूचित संपत्तियां हैं। वास्तव में, 1937 के अधिनियम की धारा 5 में "निर्वसीयत मृत्यु" शब्दों को परिभाषित किया गया है जिसका अर्थ है कि

"एक व्यक्ति को उन सभी संपत्तियों के संबंध में निर्वसीयत मृत्यु माना जाएगा जिनके बारे में उसने एक वसीयतनामा बयान नहीं दिया है जो प्रभावी होने में सक्षम है"। एक ओर, अपीलकर्ताओं को इस न्यायालय से यह अभिनिर्धारित करने की आवश्यकता होगी कि बी10–वसीयत को पक्षों के अधिकारों को नियंत्रित करना चाहिए और यह प्रभावी होने में सक्षम है। यदि यह प्रभावी होने में सक्षम नहीं पाया जाता है, तो कार्रवाई का कारण विफल हो जाएगा। यदि, इसलिए, हम इस आधार पर आगे बढ़ते हैं कि धारा 3 (2) लागू नहीं होती है, और विधवा आर. कृष्णम्मल को धारा 3 (2) के तहत कोई अधिकार नहीं मिलेगा। यदि उसे वसीयत, [2020] 9 एस. सी. आर. द्वारा शासित संपत्तियों के संबंध में अधिनियम के तहत कोई अधिकार नहीं मिला।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

तब, उत्तरजीविता से संबंधित कानून, जिसके तहत लक्ष्मीया नायडू अपने भाई की संपत्ति के उत्तराधिकारी होंगे, वी. रंगास्वामी नायडू की मृत्यु पर तुरंत अस्तित्व में आ जाएगा। कर सकते हैं।

तथापि, यह संभव है कि अपीलार्थियों के लिए अड्डगडा राघवम्मा में प्रस्तावित संबंधित पीठ के सिद्धांत पर बहस करना संभव हो। (ऊपर) कि वसीयत की सामग्री के आधार पर, एक विभाजन प्राप्त किया जाता है जब लक्ष्मीया नायडू को धारा 145 के तहत कार्यवाही के दौरान अपने भाई की मृत्यु के बाद भी वसीयत के बारे में पता चलता है, जो एक स्वीकृत स्थिति है, और इसका प्रभाव 10.05.1955 से महसूस किया जा रहा है जब

वसीयत की गई थी और इसलिए, इस तर्क से, 10.05.1955 पर, जो कि वी. रंगास्वामी नायडू की मृत्यु से पहले है, एक विभाजन प्रभावित होता है और इसलिए, वसीयत वैध हो जाती है? दूसरे शब्दों में, वसीयत को देखें, यह पता लगाने के लिए कि क्या इसकी सामग्री 10.5.1955 से कानून में विभाजन का कारण बनने वाली घोषणा के बराबर है और चूंकि वसीयत 1.6.1955 पर वसीयतकर्ता की मृत्यु की तारीख से बोलती है, इसलिए वसीयत एक वैध वसीयत बन जाती है?

हम, इस संबंध में, वसीयत की सामग्री की ओर भी रुख कर सकते हैं, जिसे हम पहले ही पैराग्राफ–77 में निकाल चुके हैं। यह नोट किया जाएगा

कि वसीयत वसीयतकर्ता के इस कथन से शुरू होती है कि उसके पास उन संपत्तियों का स्वामित्व था जिनमें एक विभाजन में आवंटित संपत्तियां शामिल थीं और जिन्हें उसने स्वतंत्र खरीद द्वारा अर्जित किया था। इसके बाद, वे कहते हैं कि वे 1932 के बाद से एक विभाजित सदस्य थे। इनमें से कोई भी बयान घोषणा का गठन नहीं करेगा। हमने पाया है कि 1932 में विभाजन और स्वतंत्र खरीद का मामला तीन अदालतों द्वारा अपीलार्थियों के खिलाफ पाया गया है। इसके बाद, केवल यह बयान है कि उन्होंने किसी भी अनिश्चितता से बचने के लिए अपनी विभाजित स्थिति 'आज' की खुली घोषणा की है। हमारे लिए इसे स्वीकार करना मुश्किल हो सकता है।

कानून में विभाजन का कारण बनने के लिए पर्याप्त घोषणा के रूप में कथन। हालांकि एक पल के लिए भी कि यह एक घोषणा के रूप में काम करेगा, हम सोचेंगे कि इस न्यायालय द्वारा अड्डगडा राघवम्मा में निर्धारित कानून

(ऊपर), अपीलार्थियों के लिए प्रकृति में अप्रतिरोध्य बाधाएं पैदा कर सकता है।

हालांकि यह सच हो सकता है कि संबंध के सिद्धांत के तहत और इस आधार पर आगे बढ़ना कि सामग्री, जैसा कि वसीयत में उल्लेख किया गया है, अलग होने की एक स्पष्ट घोषणा के बराबर है और यह कि यह 10.05.1955 से प्रभावी होगा, हम निहित अधिकारों के निर्माण से अनजान नहीं हो सकते हैं। यदि मामले को 1937 के अधिनियम की धारा 3 (2) के तहत नियंत्रित किया जाना है, जैसा कि पहले ही उल्लेख किया गया है, तो यह एक ऐसा मामला होना चाहिए जहां वी. रंगास्वामी नायडू की निर्वसीयत मृत्यु हो गई थी। इसलिए, यदि हम इस आधार पर आगे बढ़ते हैं कि अपीलकर्ताओं के मामले को स्वीकार करने के लिए वास्तव में एक वसीयत है, तो धारा 3 (2) वी. कल्याणस्वामी (डी) बी. एल. आर. एस. होगी।

& एएनआर। वी.

एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. द्वारा। & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

लागू नहीं होता है। यदि धारा 3 (2) लागू नहीं होती है, तो उत्तरजीविता द्वारा संपत्ति का दावा उत्पन्न होगा, जो अपीलार्थी के मामले के लिए घातक होगा, जैसा कि ऊपर उल्लिखित वरिष्ठ वकील श्री गुरु कृष्णकुमार द्वारा सामने रखा गया है। कहने का अर्थ है, इस मामले के तथ्यों में, विभाजन को वसीयत के माध्यम से सूचित किए जाने के बाद ही

उत्तराधिकार शुरू हो गया था, और यहां तक कि जब वसीयत की गई थी तब से विभाजन को प्रभावी होने की अनुमति देते हुए, जीवित रहने का दावा करने का लक्ष्मीया नायडू का निहित अधिकार उस दिन अस्तित्व में आ जाएगा जब उनके भाई की मृत्यु हो गई थी और वसीयत पर आधारित बाद का संचार निहित अधिकार को नहीं छीन सकता है जो शिकायत अनुसूची संपत्तियों से संबंधित वसीयत के आधार पर उपलब्ध हुआ था (इस संबंध में अड्डगडा राघवम्मा (उपरोक्त) के पैरा 34 को देखें।

बी1 की तिथि और सामग्रीः शून्य का प्रभाव

दिनांकित 11.5.1955 और 16.5.1955 पत्र का उत्पादन

131. इसलिए वास्तविक प्रश्न पर आते हुए कि क्या बी1 वास्तव में जारी किया गया था, क्या इसकी सामग्री एक विभाजन बनाने के लिए आवश्यक घोषणा के बराबर है, और अंत में क्या यह लक्ष्मीया नायडू को सूचित किया गया था, हम निम्नानुसार पाते हैंः

132. अपीलार्थियों का मामला यह है कि बी1 10.5.1955 पर जारी किया जाता है। बी1 एक समाचार पत्र में प्रकाशित एक घोषणा है। B1 जैसा कि पहले द्वारा उल्लेख किया गया है अपीलीय न्यायालय इस प्रकार हैः

" मैं 1932 से अपने भाई श्री आर. वी. लक्ष्मीया नायडू से विभाजित सदस्य रहा हूं। मैं इसके द्वारा अपनी विभाजित और अलग स्थिति की घोषणा भी करता हूं।

133. अपीलार्थियों का आगे का मामला यह है कि अन्य सह-पक्षकारों के साथ संचार की आवश्यकता का अनुपालन किया जाता है जैसा कि साबित होता है।

इस तथ्य के कारण कि अगले ही दिन बी1 प्राप्त करने के बाद लक्ष्मीया नायडू ने दिनांक 11.5.1955 जारी किया जिसमें उन्होंने कहा था कि

दिनांकित संचार 11.5.1955 और 16.5.1955। प्रत्यर्थियों का यह भी तर्क होगा कि उच्च न्यायालय अपने निष्कर्ष में सही था किध्यान दें। दूसरी ओर, अपीलकर्ता इंगित करेंगे कि अदालत [2020] 9 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

इस तथ्य को नजरअंदाज नहीं करना चाहिए कि लक्ष्मीया नायडू द्वारा दिनांकित 11.5.1955 द्वारा जारी किया गया संचार प्रदर्शनी (43) के रूप में प्रस्तुत किया गया है और सीआरपीसी की धारा 145 के तहत कार्यवाही में दिनांकित 16.5.1955 को प्रदर्शनी 44 के रूप में प्रस्तुत किया गया था। मजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश में इन दस्तावेजों का संदर्भ है जिसे इस मामले में बी2 के रूप में चिह्नित किया गया है। इसके अलावा, उत्तरदाता इस प्रभाव के लिए अभिवचन की अनुपस्थिति के बारे में शिकायत करते हैं कि बी1 1985 के आई. ओ. एस. 649 में स्थापित मामले का खंडन करते हुए भी एक विभाजन जारी किया जा रहा था कि रंगास्वामी नायडू की संयुक्त रूप से मृत्यु हो गई थी।

बी1 के बारे में कुछ भी कहने की कमी है

संयुक्त परिवार में विभाजन का कारण बनना?

134. उत्तरदाताओं द्वारा दायर 1985 के ओ. एस. सं. 649 में यह कहा गया है कि

कि वादी अनुसूचित संपत्तियाँ दोनों भाइयों की संयुक्त पारिवारिक संपत्तियाँ थीं और यह आगे कहा जाता है कि दोनों के बीच कोई विभाजन नहीं था। वे और वे 1955 में वी. रंगास्वामी नायडू की मृत्यु तक संयुक्त परिवार के रूप में रह रहे थे। मुकदमे के पैराग्राफ–5 में इसका विशेष रूप से उल्लेख किया गया है।

कि, वी. रंगास्वामी नायडू की मृत्यु तक, उन्होंने और उनके भाई ने एक संयुक्त परिवार का गठन किया और उनके बीच स्थिति में कोई विभाजन नहीं था, और वी. रंगास्वामी नायडू की मृत्यु पर, जीवित सह–स्वामी ने उत्तरजीविता द्वारा सभी संपत्तियों को ले लिया। अपीलार्थी पक्ष (अर्थात, दूसरा प्रतिवादी) द्वारा दायर लिखित वक्तव्य में, हम वाद के पैराग्राफ–3 में निम्नलिखित अभिवचन को ध्यान में रखते हैंः

" 3. आर. वी. लक्ष्मीया नायडू और वी. रंगास्वामी नायडू थे

भाइयों। वे अलग हो गए और अलग रह रहे थे। वे थे।

अपनी भूमि पर अलग से खेती करना। वादियों का दावा है कि R.V.Lakshmiah नायडू और वी. रंगस्वामी नायडू के रूप में रह रहे थे

संयुक्त परिवार और यह कि मृत्यु तक स्थिति में कोई विभाजन नहीं था

भाइयों को विधिवत बाधित किया गया और उन्हें समाप्त कर दिया गया। वहाँ भी था संपत्तियों का विभाजन, और प्रत्येक अपने-अपने का आनंद ले रहा था

अलग-अलग गुण। वी. रंगास्वामी नायडू ने भी जमीन खरीदी।

स्वतंत्र रूप से "।

(जोर दिया गया)

135. निस्संदेह, 1983 के ओ. एस. सं. 89 में जो कहा गया है वह यह है कि

संपत्ति किसी वी. रंगास्वामी नायडू की थी। मुकदमे के पैराग्राफ-9 में आगे यह बताया गया कि भाइयों ने 1932 में ही संपत्तियों को विभाजित कर दिया था। मुकदमे में निर्धारित नौ वस्तुओं में से (अर्थात। , 1983 का ओ. एस. सं. 89), मद सं. 1 3 और आइटम संख्या।

6 9 में एल. आर. एस. द्वारा वी. कल्याणस्वामी (डी) थे। & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

वी. रंगास्वामी नायडू के हिस्से को आवंटित किया गया और उनके कब्जे में था। मद सं। 4 और 5 को विभाजन के लंबे समय बाद वी. रंगास्वामी नायडू द्वारा खरीदा गया था और वे पूरी तरह से उनके थे। हमें इस तथ्य को भी नहीं भूलना चाहिए कि बाद के सूट में कथन (अर्थात। 1983 का ओ. एस. सं. 89), 1985 के ओ. एस. सं. 649 (पुनः सङ्ख्या के बाद मुकदमे की संख्या) में आरोपों का संदर्भ देता है। इसके अलावा, हम देखते हैं कि जब मुद्दे तैयार किए गए थे, तो पहला मुद्दा यह था कि क्या वी. रंगास्वामी नायडू द्वारा निष्पादित वसीयत सही और वैध है और क्या यह लागू हुई। ए.

अलग मुद्दा (मुद्दा सं। 2) इस बारे में तैयार किया गया था कि क्या कोई मौखिक था

विभाजन। यह भी देखा गया है कि चर्चा में, मामले पर निचली अदालत के समक्ष इस आधार पर बहस की गई थी कि "नववा इंडिया" समाचार पत्र में 12.05.1955 पर नोटिस के प्रकाशन से,

संपत्ति।

136. हम 1985 के ओ. एस. सं. 649 में लिखित वक्तव्य में दूसरे प्रतिवादी की दलीलों पर पहले ही ध्यान दे चुके हैं। दोनों सूट एक साथ आज़माए गए थे। यह पता चला है कि भाई अलग हो गए थे और अलग रह रहे थे। प्रत्यर्थियों का यह दावा कि वी. रंगास्वामी नायडू की मृत्यु तक स्थिति में कोई विभाजन नहीं था, विशेष रूप से गलत होने का अनुरोध किया गया है। यह कहा गया है कि संयुक्त परिवार की स्थिति को विधिवत बाधित किया गया था और इसे समाप्त कर दिया गया था।

137. हम सोचेंगे कि, इस मामले के तथ्यों में, सिद्धांत

यदि कोई अभिवचन नहीं है, तो किसी भी प्रमाण की मात्रा पर विचार नहीं किया जा सकता है, यह उचित है। संयुक्त परिवार की स्थिति कैसे बाधित हुई या क्या स्थिति में कोई विभाजन नहीं था, यह अनिवार्य रूप से सबूत का विषय है। केवल यह तथ्य कि यह विशेष रूप से व्यक्त नहीं किया गया है, जिस तरीके से विभाजन किया गया था, हमारे विचार में, अपीलार्थी मामले के लिए घातक नहीं है, यदि यह अन्यथा स्थापित है।

ए के लिए बी1 राशि की सामग्री

विभाजन को प्रभावित करने की घोषणा

138. यह कि कोई मौखिक विभाजन नहीं था, अनुपलब्ध पाया गया। इसलिए, बी1 में दिए गए कथन को, उसी के बारे में, गलत होने के कारण नजरअंदाज करने की आवश्यकता है, लेकिन हमारे विचार में अंतिम वाक्य एक स्वतंत्र कथन के रूप में खड़ा होने में सक्षम है। 'भी' शब्द का उपयोग जानबूझकर किया गया प्रतीत होता है। यह भी संभव होगा कि वसीयत बनाने और सूचना का मसौदा तैयार करने दोनों से पहले कानूनी सलाह थी। बी13 में, निष्पादक ने वी. रंगास्वामी नायडू के बारे में बात की है, दो या तीन अवसरों पर वसीयत को निष्पादित करने की अपनी इच्छा व्यक्त की है और उनके [2020] 9 एस. सी. आर. के बारे में।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

कानूनी परामर्श। वी. रंगास्वामी नायडू एक शिक्षित व्यक्ति थे। एक पूर्व। एमएलसी। वह धनी था। मौखिक विभाजन के मामले की स्थापना भी कथित अलग-अलग खरीद के पक्ष में थी। एक मामला था कि भाइयों ने संपत्तियों की सूची का आदान-प्रदान किया। हो सकता है कि उन्होंने इस विचार का मनोरंजन किया हो कि जो हुआ था, वह मौखिक विभाजन का मामला था। यदि हम वी. रंगास्वामी नायडू को श्रेय देते हैं, यह जानने के लिए कि अलग होने के इरादे की घोषणा करने वाले नोटिस के माध्यम से एक विभाजन, वसीयत की वैधता के लिए अपरिहार्य था, और साथ ही 'भी' शब्द का उपयोग, इसे संयुक्त परिवार की स्थिति में व्यवधान पैदा करने के लिए कानून में पर्याप्त घोषणा के रूप में समझने में सक्षम है।

139. विद्वान वरिष्ठ श्री गुरुकृष्ण कुमार की दलीलें

अधिवक्ता, कि अपने व्याकरणिक निहितार्थों को ध्यान में रखते हुए सजा को हमें वर्ष 1932 में कथित पहले के विभाजन के साथ जोड़ने के लिए राजी करना चाहिए, हमें अपील नहीं करता है। हमें इस तथ्य से भी बेखबर नहीं रहना चाहिए कि बी10-विल में नोटिस दिए जाने के बारे में बयान है। जब तक सह-भागीदार अलग होना चाहता है, उसे कुछ भी देने की आवश्यकता नहीं है। अलग होने का कारण।

वहाँ दोनों के लिए संचार था

अन्य सहयोगी

140. अब, हम इस पहलू पर आते हैं कि क्या बी1 को संप्रेषित किया गया था। बी1 को निचली अदालत में तारीख के अनुसार चिह्नित किया गया है

12.05.1955 . अपीलार्थियों का पूरा मामला यह है कि नोटिस 10.05.1955 पर जारी किया गया था और यह एक समाचार पत्र "नववा इंडिया" में प्रकाशित किया गया था, क्योंकि यह माना जाता है कि अपीलार्थियों के लिए कोई मामला नहीं है कि अलग होने का इरादा सीधे वी. लक्ष्मीया नायडू को नोटिस के माध्यम से दिया गया था। यह अपीलार्थियों का मामला था कि समाचार पत्र में नोटिस को देखते हुए, लक्ष्मीया नायडू ने दिनांकित संचार जारी करके जवाब दिया

11.05.1955 , विभाजन पर विवाद करना। वास्तव में, यह अपीलार्थियों का मामला भी था कि लक्ष्मीया नायडू ने अपने मन का खुलासा किया कि व्यवधान लाने के लिए, वी. रंगास्वामी नायडू को अन्य सह–भागीदारों से संवाद करना था। इसके अलावा, अपीलार्थी के मामले को वी. रंगास्वामी नायडू द्वारा 16.05.1955 पर लक्ष्मीया नायडू को बी1 की सामग्री को दोहराते हुए संचार के इर्द–गिर्द बनाया जाना चाहिए।

141. हमने देखा है कि बी1 की सामग्री को ध्यान में रखते हुए

अंतिम भाग, संयुक्त परिवार की स्थिति में विभाजन पैदा करने के लिए पर्याप्त होगा। सवाल यह है कि क्या इसे सूचित किया गया था, जैसा कि कानून में आवश्यक है। एक ओर, अपीलार्थियों द्वारा दिनांकित 11.05.1955 और 16.05.1955 का संचार प्रस्तुत नहीं किया जाता है।

यह कमी वी. कल्याणस्वामी (डी) बी. एल. आर. एस. है। & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

बी2 में प्रकट किए गए 'ए' पक्ष द्वारा स्थापित मामले पर भरोसा करके अपीलकर्ताओं द्वारा दूर किए जाने की मांग की गई। यह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के तहत मजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश है। जहाँ तक नोटिस की बात है, हम नोटिस करते हैं।

वी. रंगास्वामी नायडू द्वारा जारी, यह एक समाचार पत्र में एक नोटिस है। यह हो सकता है

समाचार पत्र की एक प्रति प्राप्त करना उतना कठिन नहीं होगा जितना कि निजी संचार प्राप्त करना, जैसा कि दिनांकित पत्रों में निहित है।

11.05.1955 और 16.05.1955। हम ध्यान देते हैं कि दिनांकित 10.5.1955,11.05.1955 और 16.05.1955 पत्रों को कार्यवाही में क्रमशः B42, B43 और B44 के रूप में चिह्नित किया गया है, जो B2 में समाप्त हुआ। इन दस्तावेजों के समर्थन में दलीलें वास्तव में बी 2 में दी गई हैं,

मजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश। 142. बी2–आदेश के संबंध में, Cr.PC की धारा 145 के तहत पारित एक तर्क उठाया जाता है कि यह धारा 40 से 43 के तहत प्रासंगिक नहीं है।

साक्ष्य अधिनियम। यह सवाल नीचे दी गई अदालतों में नहीं उठाया गया है। यह सच हो सकता है कि धारा 40 पिछले निर्णयों से संबंधित है जो नई कार्यवाही के लिए एक बाधा का गठन करेंगे और बी 2, इसलिए, साक्ष्य अधिनियम की धारा 40 के तहत प्रासंगिक नहीं है। धारा 41 प्रोबेट, वैवाहिक, नौसेना या दिवाला क्षेत्राधिकार में दिए गए निर्णयों से भी संबंधित है।जिसका प्रभाव साक्ष्य अधिनियम की धारा 41 में उल्लिखित है। यह स्पष्ट रूप से मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होता है। धारा 42 निर्णयों के प्रासंगिक होने से संबंधित है यदि वे जांच के लिए प्रासंगिक सार्वजनिक प्रकृति के मामलों से संबंधित हैं। यह भी प्रासंगिक नहीं है। धारा 43 इस प्रकार हैः

" 43. खंडों में उल्लिखित निर्णयों के अलावा अन्य निर्णय आदि।

40 42 तक, जब प्रासंगिक हो। — धारा 40,41 और 42 में उल्लिखित निर्णयों, आदेशों या फरमानों के अलावा अन्य निर्णय, आदेश या फरमान अप्रासंगिक हैं, जब तक कि इस तरह के निर्णय, आदेश या डिक्री का अस्तित्व जारी तथ्य नहीं है, या इस अधिनियम के कुछ अन्य प्रावधानों के तहत प्रासंगिक नहीं है।

143. इस संबंध में, हमने बी2–ऑर्डर को स्कैन किया है। प्रासंगिक भाग जहाँ अभिवचन निर्धारित किया गया है वह इस प्रकार हैः

" मृतक ने 'नव इंडिया' दिनांक 10.5.1955 (प्रदर्शनी P42) में एक नोटिस द्वारा अपनी विभाजित स्थिति घोषित की। इसने बी पार्टी नंबर 1 का ध्यान आकर्षित किया जिसने उन्हें 11.5.55 (प्रदर्शनी पी43) पर लिखा कि वे सभी अविभाजित थे और यदि मृतक विभाजित होना चाहता है तो उसे अन्य सह–भागीदारों को इसकी जानकारी देनी होगी। मृतक ने प्रदर्शनी पी44 द्वारा 15.5.55 पर जवाब दिया कि बी पार्टी नंबर 1 द्वारा लिया गया रुख सही नहीं था। इसे बी पार्टी नं.

1 17.5.55 पर (P45 प्रदर्शित करें)।

144. बी2–ऑर्डर में इसकी अनुपस्थिति इन दस्तावेजों के संबंध में बी पार्टी की प्रतिक्रिया है। यह कोई मामला नहीं है

जहाँ बी पक्ष की अभिवचन का संदर्भ है, अर्थात। , लक्ष्मीया शाखा ने कहा कि वे बी42, बी43 और बी44 जारी करने को स्वीकार करते हैं। लेकिन कोई इनकार भी नहीं है। बी 2 दिखाएगा कि एक मामला था

ए पार्टी उन तर्ज पर जिसका हमने संकेत दिया है। 'बी1' के 12.5.1955 होने की तारीख में विसंगति को छोड़कर जबकि बी42 का दिनांक 10.5.1955 है, अपीलार्थियों द्वारा स्थापित मामले में एकरूपता है। 145. निर्णयों की प्रासंगिकता से संबंधित प्रश्न पर इस न्यायालय की एक पीठ द्वारा बिहार राज्य बनाम में विचार किया गया है। राधा कृष्ण सिंह और अन्य 54. न्यायालय ने यह विचार व्यक्त किया कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 13 के आधार पर निर्णय पर भरोसा नहीं किया जा सकता है यदि यह धारा 40 से 42 के तहत नहीं आता है। इसके बाद न्यायालय ने निम्नलिखित निर्णय दियाः

" 129. गदाधर चौधरी बनाम। शरत चंद्र

चक्रवर्ती [ए. आई. आर. 1941 कैल 193: (1940) 44 कैल डब्ल्यू. एन. 935: 195 आईसी 412: 72 कैल एलजे 320] यह अभिनिर्धारित किया गया था कि निर्णयों में निष्कर्ष जो अंतर-पक्षीय नहीं हैं, साक्ष्य में स्वीकार्य नहीं हैं। इस संबंध में ए.

कलकत्ता उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने निम्नलिखित टिप्पणी कीः

मुकदमा किन भूमि पर तय किया गया था।130. यह, हमारी राय में, निर्णयों की स्वीकार्यता के संबंध में सही कानूनी स्थिति है जो अंतर-पक्षीय नहीं है। 99

हम ध्यान देते हैं कि 'ए' पक्ष का दूसरा पक्ष वास्तव में उस वसीयत का निष्पादक था जिसके तहत अपीलार्थी दावा करते हैं।

146. दिलचस्प बात यह है कि उत्तरदाताओं ने ए109 के रूप में प्रस्तुत किया है जिसे संशोधन से पहले सेट किए गए प्रकार की प्रति के रूप में चिह्नित किया गया है

आदेश (बी 2) उत्तरदाताओं के दस्तावेज। सामग्री में बी पक्ष की ओर से दायर की गई प्रदर्शनियां प्रस्तुत की जाती हैं। इसमें एल. वेंकटपति का साक्ष्य भी है जो इस मामले में पीडब्लू1 के अलावा और कोई नहीं है। इसमें,

541983 (3) एस. सी. सी. 118 वी. कल्याणस्वामी (डी) एल. आर. एस. & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

उनकी जाँच में बी42, बी43 और बी44 का कोई उल्लेख नहीं है। अपनी प्रतिपरीक्षा में यह कहने के बाद कि उन्होंने जिस वसीयत को अपदस्थ किया था, [प्रदर्शनी बी68] के हर पृष्ठ पर उनके हस्ताक्षर (वसीयतकर्ता) पाए, उन्हें नहीं पता था कि क्या उनके पिता ने 'नववा इंडिया' में प्रकाशन का जवाब दिया था। हम नहीं जानते कि 1989 के ओ. एस. सं. 83 में वादी को बी42, बी43 और बी44 दस्तावेज पेश करने से क्या रोकता है जो बी पक्ष द्वारा दायर दस्तावेजों को बी पक्ष द्वारा भाग के रूप में प्रस्तुत किए जाने के कारण भी उपलब्ध होते।

A109 का। बी2 में बी42 प्रकाशन, बी43 या बी44 के बारे में कोई जानकारी नहीं है।

147. सुनवाई के दौरान, उत्तरदाताओं द्वारा हमारे सामने यह दबाव डाला गया था कि बी1 दिनांकित है और यदि यह <आईडी2 है, तो अपीलार्थी के मामले की इमारत जमीन पर गिर जाएगी क्योंकि तब इस स्थिति का समर्थन करना असंभव होगा कि 12.05.1955 पर प्रकाशित नोटिस के जवाब में, जवाब पिछली तारीख, यानी लक्ष्मीया नायडू द्वारा 11.05.1955 पर दिया जा सकता है। यह यहाँ है कि 11.05.1955 और 16.05.1955 दिनांकित पत्रों को प्रस्तुत न करने की मांग की जाती है

जोर दिया। जैसा कि उल्लेख किया गया है, हमने यह सत्यापित करने के लिए अभिलेखों की मांग की कि क्या बी1 दिनांकित 12.05.1955 दस्तावेजों को चिह्नित करना एक गलती थी, जैसा कि श्री ने बताया है। सी. ए. सुंदरम,

विद्वान वरिष्ठ वकील या यह जमीनी हकीकत को दर्शाता है। हम बी1 से पाते हैं कि सूचना समाचार पत्र में प्रकाशित होती है।

जो दिनांकित 12.05.1955 है। इसलिए, दस्तावेज़ बी1 को दिनांकित 12.05.1955 के रूप में चिह्नित करना कोई गलती नहीं है। इसके क्या परिणाम होते हैं?

उक्त खोज से प्रवाह? देखने का एक तरीका यह होगा कि चूंकि घोषणा वाला नोटिस केवल 12.05.1955 पर एक समाचार पत्र में प्रकाशित होता है, इसलिए अपीलार्थियों का मामला कि लक्ष्मीया नायडू ने नोटिस को नोटिस करने पर 11.05.1955 पर जवाब दिया था, स्वीकार नहीं किया जा सकता है। यदि इसे स्वीकार नहीं किया जाता है, तो वी. रंगास्वामी नायडू का जवाब भेजने का सवाल ही नहीं उठेगा।

इसकी व्यवस्था पहले की गई होगी। लेकिन जो महत्वपूर्ण है, वह केवल एक सह–भागीदार के रूप में वसीयतकर्ता का इरादा नहीं है कि वह दूसरे सह–भागीदार को अलग होने के लिए अपना मन घोषित करे, और यहां तक कि इसे वसीयत में भी निर्धारित करे, औरएक कदम और आगे बढ़ते हुए, इसे प्रकाशित कराना, लेकिन यह [2020] 9 एस. सी. आर. होना चाहिए।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

यह आगे साबित हुआ कि, वसीयतकर्ता के निधन से पहले, बी1 में निहित मामले को दूसरे सह–भागीदार को पता था, अर्थात। , लक्ष्मीया नायडू। यह आवश्यकता अपरिहार्य है जैसा कि अड्डगडा राघवम्मा और अन्य (उपरोक्त) में माना गया है। इस संबंध में, हम देखते हैं कि अपीलार्थियों की ओर से गवाह डी. डब्ल्यू. 1 का यह कहना हैः

" 11.05.1955 पर, लक्ष्मीया नायडू ने जवाब में जवाब दिया

बी1 तक। इसे सी. आर. पी. सी. 145 कार्यवाही में बी. 44 के रूप में चिह्नित किया गया है। उन्होंने स्पष्ट रूप से दोनों के बीच की स्थिति में विभाजन के बारे में स्वीकार किया

रंगास्वामी नायडू और लक्ष्मीया नायडू "।

149. यह बयान अपीलार्थी के मामले के खिलाफ जाता है। ऐसा प्रतीत होता है।

सी. आर. पी. सी. की कार्यवाही की धारा 145 में आर. कृष्णम्मल और निष्पादक का मामला होना जैसा कि कहा गया है कि बी42 को देखने पर (जो है

10.05.1955 पर प्रकाशित 'नोटिस' के रूप में चिह्नित, लक्ष्मीया नायडू ने B43 को यह कहते हुए भेजा कि उनके बीच कोई विभाजन नहीं था, जिसके लिए मृतक ने B44 जवाब भेजा। इसके बाद, डी. डब्ल्यू. 1 का कहना है कि 10.05.1955 पर, "नववा इंडिया" में विज्ञापन के प्रकाशन पर, उन्हें पता चला कि एक आपत्ति विज्ञापन अगली तारीख को प्रकाशित किया गया था।

150. आइए देखें कि पीडब्लू1 ने क्या कहा, जो 1955 में 26 वर्ष के थे।

और जिन्होंने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 की कार्यवाही में भी साक्ष्य दिया है। यदि उनके द्वारा यह स्पष्ट स्वीकार किया जाता है कि यह घोषणा वी. रंगास्वामी नायडू की मृत्यु से पहले लक्ष्मीया नायडू को ज्ञात थी, तो अपीलार्थी विरोधाभास के अधीन इस बिंदु पर सफल हो सकते हैं।

बी1 की तारीख के बारे में हल किया जा रहा है। यह कहने के बाद कि 10.05.1955 पर, वी. रंगास्वामी नायडू ने भारत के अखबार में नोटिस जारी किया, क्योंकि विभाजन किया गया था, और यह कहते हुए कि, वी. रंगास्वामी नायडू ने काल्पनिक रूप से इस तरह का कागजी विज्ञापन किया था, उसके बाद, वे कहते हैं कि उन्हें अखबार के विज्ञापन और वसीयत के बारे में पता चला, केवल सीआरपीसी की धारा 145 में।कार्यवाही। इसके बाद, वे कहते हैं, 12.05.1955 पर, वी. रंगास्वामी नायडू ने "नववा इंडिया" में एक पेपर प्रकाशन दिया। लेकिन वह फिर कहता है कि

धारा 145 की कार्यवाही के दौरान उसी के बारे में पता चला। वह आगे कहते हैं कि उनके पिता ने वी. रंगास्वामी नायडू से नहीं पूछा कि क्यों?

उन्होंने बी1 प्रकाशन दिया। गवाह कहता है, उसे पता नहीं है कि बी1 प्रकाशन क्यों दिया गया था। इसके बाद, वे कहते हैं, अब उन्हें नहीं पता कि अखबार का विज्ञापन उनके चाचा ने धारा 145 की कार्यवाही में दायर किया था या नहीं। ए1 में यह उल्लेख किया गया है कि उनके पिता ने बी1 के उत्तरदाता के रूप में विज्ञापन दिया था। वह आगे कहता है कि उसके पिता को वह विज्ञापन दिया जा सकता है (तमिल से अनुवाद होने के कारण, यह स्पष्ट रूप से न्याय नहीं करता है। हम इसे इस रूप में पढ़ते हैं "उनके पिता ने एल. आर. एस. द्वारा वी. कल्याणस्वामी (डी) दिया होगा।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

वह विज्ञापन ")। उनका कहना है कि उनके छोटे चाचा और उनके पिता द्वारा दिया गया विज्ञापन ए1–सूट में दायर किया गया था और उनका कहना है कि यह कहना सही नहीं है कि उनके पिता ने स्वीकार किया था कि शेयरों में विभाजन और उनके पिता ने समाचार पत्रों में विज्ञापन दिया था क्योंकि संपत्तियों को उल्कापिंडों द्वारा विभाजित नहीं किया गया था। उनका कहना है कि इसका उल्लेख ए1 (1958 के ओएस नंबर 71 में शिकायत) में किया गया है, जैसा कि रंगास्वामी नायडू ने अपने पिता को 16.05.1955 पर जवाब दिया था। तब वह स्वीकार करता है कि यह

यह कहना सही है कि उन्हें सीआरपीसी की कार्यवाही की धारा 145 में क्रमशः बी42, बी43 और बी44 के रूप में चिह्नित किया गया है और उन्होंने उन कार्यवाही में बयान दिया। हम सोचेंगे कि यह सबूत का एक महत्वपूर्ण टुकड़ा है जो यह दिखा सकता है कि B43 दिनांकित संचार है।

11.05.1955 जिसे उनके पिता द्वारा भेजे जाने के लिए लिया जाना चाहिए, जिस पर वी. रंगास्वामी नायडू ने 16.05.1955 पर जवाब दिया। इसका मतलब यह होना चाहिए कि 10.05.1955 पर प्रकाशन के बारे में लक्ष्मीया नायडू को पता चल गया, जैसा कि B2 में बताया गया है। बी43 की सटीक सामग्री उपलब्ध नहीं है।

151. जब पी. डब्ल्यू. 1 की जांच सी. आर. पी. सी. की कार्यवाही की धारा 145 में की गई थी, तो मुख्य परीक्षा में, वह बी42, बी43 या बी44 के बारे में एक शब्द भी नहीं कहता है। फिर, प्रतिपरीक्षा में, वह कहता है कि उसे नहीं पता कि उसके पिता ने "नववा इंडिया" में प्रकाशन का जवाब दिया था या नहीं।

152. हमें ध्यान देना चाहिए कि उच्च न्यायालय ने मामले में विसंगति के आधार पर कार्रवाई की है। ओ. एस. नं. में बी42, बी43 या बी44 के संबंध में कोई अभिवचन नहीं है। 89 1983 का। वादी के मामले के जवाब में, बी1 के आधार पर, जो 12.05.1955 दिनांकित है, उच्च न्यायालय ने पाया कि प्रथम प्रतिवादी ने एक ऐसा मामला स्थापित किया जिस पर नोटिस प्रकाशित किया गया था।

10.05.1955 . उच्च न्यायालय ने 11.05.1955 और 16.05.1955 दिनांकित संचारों को प्रस्तुत न करने पर भी ध्यान दिया।

लक्ष्मीया नायडू से अलग। ऐसी परिस्थितियों में, हम उच्च न्यायालय से सहमत होंगे कि बी1 से संबंधित मामला, हालांकि एक प्रकाशन किया गया है, हम इसके बारे में जानकारी का श्रेय नहीं दे सकते हैं –अपने भाई की मृत्यु से पहले, लक्ष्मीया नायडू। हम [2020] 9 एस. सी. आर. के लिए नहीं हैं।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

उस समय, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि समाचार पत्र में एक सूचना विभाजन को प्रभावित करने के लिए एक सह–भागीदार द्वारा सूचना के रूप में कार्य नहीं कर सकती है। हालाँकि, केवल एक सूचना को प्रकाशित करना, यह दिखाने के लिए सबूत के बिना कि इच्छित प्राप्तकर्ता को इसके बारे में पता चला, पर्याप्त नहीं हो सकता है। यद्यपि एक समाचार पत्र में एक सूचना आम जनता के लिए सूचना के रूप में काम करती है, लेकिन संबंधित सह–भागीदार को सूचना देने की आवश्यकता है [पैराग्राफ–89 में हमारे द्वारा निकाले गए अड्डगडा राघवम्मा (उपरोक्त) के पैराग्राफ–28 और 32 देखें]। यह अनुमान नहीं लगाया जा सकता है कि किसी व्यक्ति ने एक विशेष समाचार पत्र पढ़ा है, और इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि उसने नोटिस पढ़ा है। यहां तक कि अपीलकर्ताओं का मामला भी ऐसा प्रतीत होता है कि दिनांकित 10.05.1955 नोटिस को देखने पर, दिनांकित 11.05.1955 का संचार लक्ष्मीया नायडू द्वारा भेजा गया था, जिसे हमने अस्वीकार्य पाया है।

B1 का दिनांक 12.05.1955 है। दिनांकित 11.05.1955 उत्तर का महत्व यह था कि यह लक्ष्मीया नायडू द्वारा दिए गए नोटिस के बारे में जानकारी स्थापित करेगा। इस बात का कोई सबूत नहीं है कि 12.05.1955 दिनांक वाले समाचार पत्र में प्रकाशित नोटिस के बारे में लक्ष्मीया नायडू को पहले से पता था उसकी मृत्यु।

चूंकि उपरोक्त चर्चा को देखते हुए वी. रंगास्वामी नायडू द्वारा उनकी मृत्यु से पहले कोई विभाजन नहीं लाया गया था, इसलिए वसीयत अमान्य होगी और इसलिए यह अपीलार्थियों के लिए मार्ग का अंत होगा। यह याद रखा जाना चाहिए कि रंगास्वामी नायडू का निधन हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के अधिनियमन से पहले 1.6.1955 पर हुआ था। इस प्रकार, जब उनकी मृत्यु हो गई, तो उन्होंने हिंदू संयुक्त परिवार में रुचि छोड़ी। जब उनकी संपत्ति के लिए उत्तराधिकार खोला जाता है, तो यह हिंदू महिला संपत्ति अधिकार अधिनियम, 1937 की धारा 3

(2) के प्रावधान लागू होते हैं। दूसरे शब्दों में एक सीमित संपत्ति के पक्ष में होने लगाआर. कृष्णम्मल, उनकी विधवा। यह संपदा एच. एस. ए. की धारा 14 (1) के तहत एक पूर्ण संपदा में विकसित होगी। जब उन्होंने 1958 के ओएस 71 में संपत्ति पर अपने अधिकारों को छोड़ने के लिए समझौता किया, जिसमें इन मामलों में वादी अनुसूचित संपत्ति शामिल थी, तो इसने लक्ष्मीया नायडू शाखा के पक्ष में पूर्ण अधिकार प्रदान किए। हम फिर से दोहराते हैं कि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के जबरन लागू होने से पहले रंगस्वामी नायडू की मृत्यु का प्रभाव यह था कि यह अधिनियम लागू होने के बाद निर्वसीयत मृत्यु वाले हिंदू के संबंध में उपलब्ध अधिकारों से व्यक्तियों को वंचित कर देगा।

अब यह मानते हुए कि एक वैध वसीयत थी, यानी परिवार में विभाजन किया गया था, हम विचार करेंगे कि क्या जीवन संपदा

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 14 (1) या धारा 14 (2) के तहत वसीयत आकर्षित करती है।

वी. कल्याणस्वामी (डी) बायल्स। & एएनआर। वी.

भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. द्वारा। & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

हिंदू सफलता की धारा 14 (1) श्लोक 14 (2)

1956

154. हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 की धारा 14 इस प्रकार हैः

" 4. एक महिला हिंदू की संपत्ति उसकी पूर्ण संपत्ति होनी चाहिए। —

(1) हिंदू महिला के स्वामित्व वाली कोई भी संपत्ति, चाहे वह अर्जित की गई हो

इस अधिनियम के प्रारंभ से पहले या बाद में, वह इसके पूर्ण स्वामी के रूप में अभिनिर्धारित होगी, न कि एक सीमित स्वामी के रूप में। स्पष्टीकरण। इस उप–धारा में "संपत्ति" में चल और अचल दोनों शामिल हैं।

एक महिला हिंदू द्वारा विरासत में अर्जित अचल संपत्ति

या योजना बनाना, या किसी विभाजन पर, या रखरखाव या रखरखाव के बकाया के बदले में, या किसी व्यक्ति से उपहार द्वारा, चाहे वह कोई रिश्तेदार हो या

उसकी शादी से पहले, उस समय या उसके बाद, या उसके अपने कौशल या परिश्रम से नहीं,

या खरीदकर या पर्चे द्वारा, या किसी अन्य तरीके से जो भी हो, और स्त्रीधन के रूप में उसके द्वारा धारण की गई कोई भी संपत्ति

इस अधिनियम के प्रारंभ होने से ठीक पहले।(2) उप–धारा (1) में निहित कुछ भी उपहार के रूप में या वसीयत या किसी अन्य साधन के तहत अर्जित किसी भी संपत्ति पर लागू नहीं होगा।

किसी दीवानी अदालत की डिक्री या आदेश के तहत या किसी पुरस्कार के तहत जहां उपहार, वसीयत या अन्य लिखत या डिक्री, आदेश की शर्तें हों।

या ऐसी संपत्ति में एक प्रतिबंधित संपत्ति निर्धारित करता है।

155. धारा 14 पर दी जाने वाली व्याख्या न केवल तात्कालिक है, बल्कि इसने इस न्यायालय सहित कई अवसरों पर अदालतों का ध्यान आकर्षित किया है। कई निर्णय लिए गए हैं

हमारे सामने। अपीलार्थी तर्क देंगे कि इसके तथ्यों में

धारा 14 (2) के प्रावधान लागू होंगे जबकि हमिया नायडू की शाखा हमें उच्च न्यायालय के विचार को बनाए रखने के लिए आमंत्रित करेगी।

धारा 14 (1) लागू होती है।

156. यदि धारा 14 (1) लागू होती है, तो इसका निम्नलिखित प्रभाव पड़ता हैः

आर. कृष्णम्मल के पास जो संपत्ति थी

अभियोग अनुसूची संपत्तियों को शामिल करना निरपेक्ष हो जाएगा। फिर, अपीलार्थियों द्वारा किए गए दावे की इमारत जो

वसीयत के तहत उत्तराधिकारियों को पूर्ण अधिकार प्रदान किए गए थे

आर. कृष्णम्मल की मृत्यु हो जाएगी और उनके पास होगा सही नहीं। यदि दूसरी ओर, धारा 14 (2) लागू होती है, तो फिर से

इस आधार पर कि रंगास्वामी नायडू द्वारा एक इच्छा छोड़ी गई है

जो अन्यथा वैध और वास्तविक है, अपीलार्थी शेष व्यक्तियों के रूप में अधिकार का दावा कर सकते हैं।

157. इससे पहले कि हम मामले की विधि पर विचार करें, अपीलार्थियों के इस तर्क पर विचार करना आवश्यक है कि आर. कृष्णम्मल ने एक धारा 14 (1) के तहत मामला और यह कि उसने केवल 1958 के ओएस No.71 में वसीयत के तहत दावा किया था, हमें केवल 1958 के ओएस No.71 के पैरा 11 को संदर्भित करने की आवश्यकता है। वही नीचे लिखा हैः

" 11. हालाँकि वादी आगे कहता है कि आर. वी. लक्ष्मीया नायडू द्वारा 145 कार्यवाही में स्थापित किए गए मामले और उनके द्वारा किए गए स्वीकारोक्ति पर भी, उसके अधिकार और भी बेहतर हैं और एक सह-भागीदार के रूप

में वह अधिनियमों के संयुक्त संचालन के तहत हकदार है।1937 का XVIII और 1956 का XXX संयुक्त संपत्तियों के आधे हिस्से में एक पूर्ण राज्य के लिए और विभाजन और उसके हिस्से के कब्जे की मांग करने के लिए। प्रतिवादी 1 से 4 अन्य आधे हिस्से के हकदार हैं। वादी प्रतिवादी 1 से 4 के कब्जे में सभी संपत्तियों को निर्दिष्ट करने में असमर्थ है, लेकिन जहाँ तक वह ऐसा करने में सक्षम है, उसने उन्हें अनुसूची II में निर्धारित किया है। जब उसे बेहतर पार्टिकलर मिलते हैं तो वादी उन्हें जोड़ने के लिए अनुमति चाहता है। वादी यह भी प्रार्थना करता है कि प्रतिवादी 1 से 4 को संयुक्त पारिवारिक संपत्तियों का पूर्ण और सही खुलासा करने के लिए बुलाया जा सकता है।

उनके अधिकार में। यह स्पष्ट है कि उन्होंने स्पष्ट रूप से हिंदू उत्तराधिकार का उल्लेख किया था

कार्रवाई भी करें। 158. एमएस. कर्मी बनाम। अमरू और अन्य "एक निर्णय है जो तीन विद्वान न्यायाधीशों द्वारा दिया जाता है। यह एक ऐसा मामला था जहाँ एक वसीयत थी

पहले की वसीयत को रद्द करते हुए निष्पादित किया गया जिसके द्वारा एक हिंदू ने अपने जीवन के दौरान अपनी पूरी संपत्ति अपनी विधवा को विरासत में दी थी, और उसके बाद, उसे अपने संपार्श्विक पर हस्तांतरित करना था। वसीयत 13 नवंबर, 1937 की थी। इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि वसीयत के बल पर उत्तराधिकारी होने के बाद विधवा वसीयत के तहत उसे दिए गए किसी भी अधिकार पर दावा नहीं कर सकती है। यह अभिनिर्धारित किया गया था कि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 के तहत जीवन संपदा पूर्ण संपत्ति नहीं बन सकती है।

159. वी. तुलासम्मा बनाम। शेषा रेड्डी 56 तीन विद्वान न्यायाधीशों की पीठ द्वारा दिया गया एक निर्णय है। यह एक ऐसा मामला था जिसमें पति

अपीलार्थी की वर्ष 1939 में अपने भाई के साथ संयुक्त अवस्था में मृत्यु हो गई। उन्होंने रखरखाव के लिए एक फरमान प्राप्त किया। इसके बाद निष्पादन की कार्यवाही की गई जिसमें अदालत के बाहर समझौता किया गया।

55 (1972) 4 एससीसी 86

56 (1977) 3 एस. सी. सी. 99 वी. कल्याणस्वामी (डी) बायल्स। & एएनआर। वी.

भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. द्वारा। & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

जिसके अंतर्गत अपीलार्थी को अनुसूचित संपत्तियाँ आवंटित की गई थीं जो

30 जुलाई, 1949 को प्रमाणित। हालाँकि, यह एक सीमित ब्याज था

अलगाव का शिकार। वह मुकदमा जिसमें से एक अपील दायर की गई थी

ई प्रत्यर्थी अपीलार्थी द्वारा किए गए अलगाव का आरोप लगाता है। उस पर

तथ्यों में, हम देखते हैं कि निम्नलिखित सिद्धांत निर्धारित किए गए हैंः

" 62. (1) हिंदू महिला को भरण–पोषण का अधिकार नहीं है।

खाली औपचारिकता या एक भ्रामक दावे को एक मामले के रूप में स्वीकार किया जा रहा है

अनुग्रह और उदारता का, लेकिन संपत्ति के खिलाफ एक ठोस अधिकार है

जो पति के बीच आध्यात्मिक संबंध से बहती है

और पत्नी और शुद्ध शास्त्री हिंदू द्वारा मान्यता प्राप्त और आदेशित है

कानून और पहले के हिंदू द्वारा भी दृढ़ता से जोर दिया गया है

याज्ञवल्क्य से लेकर मनु तक के न्यायविद। ऐसा अधिकार नहीं हो सकता है

पति का अपनी पत्नी का पालन–पोषण करने का व्यक्तिगत दायित्व है और यदि वह या परिवार के पास संपत्ति है, महिला को कानूनी अधिकार है

निस्संदेह एक पूर्व–विद्यमान अधिकार ताकि कोई हस्तांतरण घोषित याइस तरह के अधिकार को मान्यता देने से कोई नई उपाधि नहीं मिलती है, बल्कि केवल

पूर्व–विद्यमान अधिकारों का समर्थन या पुष्टि करता है।

(2) धारा 14 (1) और उसका स्पष्टीकरण

सबसे व्यापक संभव शब्दों में जोड़ा गया है और उदारता से समझा जाना चाहिए

महिलाओं के पक्ष में ताकि 1956 के उद्देश्य को आगे बढ़ाया जा सके।

सामाजिक–आर्थिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए कार्य करें और उन्हें बढ़ावा दें

इस लंबे समय से आवश्यक कानून द्वारा।

(3) धारा 14 की उप–धारा (2) परन्तुक की प्रकृति की है।

और संचालन में हस्तक्षेप किए बिना इसका अपना एक क्षेत्र है

धारा 14 (1) भौतिक रूप से। परंतुक का अर्थ एक में नहीं लगाया जाना चाहिए

तरीका ताकि मुख्य प्रावधान के प्रभाव को नष्ट किया जा सके या

धारा 14 (1) द्वारा या इस तरह से दिया गया संरक्षण ताकि

मुख्य प्रावधान के साथ पूरी तरह से असंगत।

(4) धारा 14 की उप–धारा (2) उपकरणों पर लागू होती है,

फरमान, पुरस्कार, उपहार आदि जो स्वतंत्र और नए निर्माण करते हैं।पहली बार महिलाओं के पक्ष में खिताब और कोई आवेदन नहीं है

जहाँ संबंधित लिखत केवल पुष्टि करना चाहती है, समर्थन करती है, पूर्व-विद्यमान अधिकारों की घोषणा या मान्यता दें। ऐसे मामलों में प्रतिबंध

एक महिला के पक्ष में संपत्ति कानूनी रूप से अनुमत है और धारा [2020] 9 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

14 (1) यह इस क्षेत्र में काम नहीं करेगा। हालाँकि, जहाँ कोई लिखत केवल किसी पूर्व-विद्यमान अधिकार की घोषणा या मान्यता देता है, जैसे कि भरण-पोषण या विभाजन या हिस्से का दावा, जिसके लिए महिला हकदार है, उप-धारा का बिल्कुल कोई अनुप्रयोग नहीं है और महिला का अधिकार है।सीमित ब्याज स्वचालित रूप से पूर्ण ब्याज में विस्तारित हो जाएगा।

धारा 14 (1) के बल से और लगाए गए प्रतिबंध, यदि कोई हों,

दस्तावेज़ के तहत इसे नजरअंदाज करना होगा। अतः जहाँ ए

रखरखाव या विभाजन के समय हिस्से के बदले में किसी महिला को संपत्ति आवंटित या हस्तांतरित की जाती है, साधन को उप-धारा (2) के दायरे से बाहर कर दिया जाता है और हस्तांतरणकर्ता की शक्तियों पर किसी भी प्रतिबंध के बावजूद धारा 14 (1) द्वारा शासित किया जाएगा।

(5) धारा 14 (1) के स्पष्टीकरण में 'विभाजन के समय किसी महिला हिंदू द्वारा अर्जित संपत्ति', 'या रखरखाव के बदले में', 'या रखरखाव के बकाया' आदि जैसे स्पष्ट शब्दों का उपयोग स्पष्ट रूप से उप-धारा (2) को इन श्रेणियों के लिए लागू नहीं करता है जिन्हें स्पष्ट रूप से उप-धारा (2) के संचालन से अलग किया गया है।

(6) धारा 14 (1) में विधायिका द्वारा उपयोग किए गए 'कब्जे में' शब्द सबसे व्यापक संभव आयाम के हैं और इसमें शामिल हैं -

या उसी का भौतिक अधिकार। इस प्रकार, जहाँ एक विधवा को एकइससे पहले या बाद में प्रारंभिक डिक्री के तहत संपत्ति में हिस्सेदारी

वह समय जब 1956 का अधिनियम पारित किया गया था लेकिन नहीं दिया गया था

एक अंतिम डिक्री के तहत वास्तविक अधिकार, संपत्ति होगी

माना जाता है कि वह उसके कब्जे में है और धारा 14 (1) के बल पर उसे संपत्ति में पूर्ण ब्याज मिलेगा। यह समान रूप से अच्छी तरह से तय किया गया है कि विधवा का अधिकार, हालांकि, कुछ के अधीन होना चाहिए।

किसी दावे, अधिकार या अधिकार का अवशेष, क्योंकि धारा में ऐसा नहीं है

बिना किसी पद के अतिक्रमणकारी के कब्जे पर विचार करें।

सही या शीर्षक।

(7) कि धारा 14 (2) में प्रयुक्त 'प्रतिबंधित संपत्ति' शब्द धारा 14 (1) में बताए गए सीमित ब्याज से अधिक व्यापक हैं और

इनमें न केवल सीमित ब्याज शामिल है, बल्कि किसी अन्य प्रकार का ब्याज भी शामिल है।

सीमा जो अंतरिती पर रखी जा सकती है।

160. शकुंतला देवी बनाम। कमला 57, फिर से, तीन विद्वानों की एक पीठ एक ऐसे मामले पर विचार कर रही थी जिसमें हिंदू पत्नी को जीवनदान दिया गया था।यह वसीयत द्वारा रखरखाव के लिए है। न्यायालय ने फैसले का पालन किया

+ 5) 5 एस. सी. सी. 390 वी. कल्याणस्वामी (डी) एल. आर. एस. & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

वी. तुलसम्मा (ऊपर) और यह विचार लिया कि यह धारा 14 (1) है जो लागू होगी। वसीयत की शर्तों में अन्य बातों के साथ-साथ यह प्रावधान किया गया था कि संपत्ति को अलग नहीं किया जाना था और यह उनके रखरखाव के लिए था। यह एक ऐसा मामला है जहाँ वसीयतकर्ता की तीन पत्नियाँ थीं जिनमें से एक ने उसे पहले ही मरवा दिया था। वसीयत के तहत दूसरी पत्नी की मृत्यु के बाद जीवन संपत्ति तीसरी पत्नी के पास निहित हो गई। वसीयत में प्रावधान किया गया था कि पत्नी को अलगाव की किसी भी शक्ति के बिना उसके रखरखाव के लिए संपत्ति प्रदान की गई थी।

161. साधु सिंह बनाम। दो विद्वान न्यायाधीशों की पीठ, गुरुद्वारा साहिब नरीके 58 के समक्ष निम्नलिखित तथ्य थे। विचाराधीन संपत्ति

किसी गुरुद्वारे में। यह मुकदमे का विषय बन गया औरसवाल यह उठा कि क्या मामला धारा 14 (1) या 14 (2) के तहत आता है। इस न्यायालय ने हालांकि पी. के. बालासुब्रमण्यम, जे. ने कहा कि

हिंदू गोद लेने और रखरखाव अधिनियम के प्रावधानों और यह अभिनिर्धारित किया कि, इसके लिए प्रदान किए गए किसी भी साधन या फरमान के अभाव में, पति की अलग संपत्ति में रखरखाव के लिए कोई शुल्क नहीं लगाया जाता है। न्यायालय ने वी. तुलसम्मा (उपरोक्त) में तथ्यों पर ध्यान दिया और पाया कि यह एक ऐसा मामला था जिसमें महिला हिंदू के पास संपत्ति थी। उस अधिनियम (हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956) की तारीख जिसमें उनका पूर्व-विद्यमान अधिकार था जो एक पूर्ण अधिकार में बदल गया। इसके बाद, न्यायालय ने निम्नानुसार निर्णय दियाः

" 7. अब, यह धारा से स्पष्ट है और इस न्यायालय के निर्णयों से निहित है कि अधिनियम की धारा 14 (1) के लिएआकर्षित, संपत्ति पर एक महिला हिंदू का कब्जा होना चाहिए

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम का लागू होना। मईन में

हिंदू लॉ, 15 वीं संस्करण। , पी। 1171 , यह कहा गया हैः

" उप–धारा (1) को स्पष्टीकरण के साथ पढ़ने पर, यह स्पष्ट है

कि जहाँ कहीं भी संपत्ति एक महिला हिंदू के पास थी

एक सीमित संपत्ति, यह उस तारीख से बन जाएगी

अधिनियम का प्रारंभ उसकी पूर्ण संपत्ति है। हालांकि, अगर

वह अधिनियम के बाद एक प्रतिबंधित संपत्ति के साथ संपत्ति का अधिग्रहण करती है, उप धारा (2) लागू होती है। इस तरह के अधिग्रहण की शर्तों के तहत हो सकता है

उपहार, वसीयत या अन्य साधन या डिक्री या आदेश या पुरस्कार।

58 AIR 2006 SC 3282 [2020] 9 S. C. R.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

8. गुम्मलपुरा में टागिना मटाडा कोट्टुरूस्वामी बनाम। सेत्रा वीरव्व [1959 पूरक (1) एससीआर 968: ए. आई. आर. 1959 एस. सी. 577] इस न्यायालय ने अनुमोदन के साथ उद्धृत किया (एस. सी. आर. पीपी पर। 977–78) निम्नलिखित शब्द

न्यायमूर्ति पी. एन. मुखर्जी, गोस्ता बिहारी बेरा बनाम। हरिदाससामंत [ए. आई. आर. 1957 कैल 557: 6 सी. डब्ल्यू. एन. 325] (ए. आई. आर. पी. 559 , पैरा

12) :

" प्रारंभिक शब्द 'एक महिला हिंदू के पास कोई भी संपत्ति' का स्पष्ट रूप से अर्थ है कि, के दायरे में आना धारा, संपत्ति संबंधित महिला के कब्जे में होनी चाहिए

अधिनियम के प्रारंभ होने की तिथि पर। जब अधिनियम लागू हुआ तो वे स्पष्ट रूप से महिला के कब्जे पर विचार करते हैं। कि

विवादित संपत्ति में सीमित संपत्ति को इस विशेष धारा के तहत पूर्ण संपत्ति में बदलने का दावा किया जाता है, कम से कम ऐसे कब्जे में, 'कब्जा' शब्द को इसके व्यापक अर्थ में लेते हुए, जब अधिनियम लागू हुआ, तो धारा

यह लागू नहीं होगा "। और जोड़ा गयाः (एस. सी. आर पी. 978)

" हमारी राय में, ऊपर व्यक्त किया गया दृष्टिकोण सही दृष्टिकोण है कि कैसे शब्द 'किसी भी संपत्ति पर एक महिला के कब्जे में है।

'हिंदू' की व्याख्या की जानी चाहिए।

9. एराम्मा वी। वेरुपन्ना [(1966) 2 एससीआर 626: ए. आई. आर. 1966 एस. सी. 1879] इस न्यायालय ने इस बात पर जोर दिया कि संपत्ति के पास स्वामित्व है।

धारा में विचार के अनुसार एक महिला हिंदू द्वारा स्पष्ट रूप से वह संपत्ति है जिसके लिए उसने किसी प्रकार की उपाधि प्राप्त की है –

अधिनियम के प्रारंभ से पहले या बाद में और एकअधिनियम की धारा 14 (1) के तहत दावा इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि महिला हिंदू ने संपत्ति को वैध रूप से उपहार में देने के बाद अधिनियम की तारीख को अतिक्रमण के माध्यम से संपत्ति पर कब्जा कर लिया था। इस प्रकार हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के लागू होने की तारीख को अधिकार की झलक के साथ कब्जे की आवश्यकता पर जोर दिया गया।

162. इसके अलावा, न्यायालय यह अभिनिर्धारित करने के लिए आगे बढ़ता है कि वी. तुलसम्मा (उपर्युक्त) तब लागू होती है जब एक महिला हिंदू के पास संपत्ति होती है।

किसी अधिकार की झलक के तहत अधिनियम की तिथि चाहे वह सीमित हो या पूर्व–विद्यमान अधिनियम हो। इसने आगे कहा कि इसे अधिनियम की तारीख तक सीधे या रचनात्मक रूप से संपत्ति के कब्जे में महिला हिंदू की आवश्यकता को नजरअंदाज करते हुए लागू नहीं किया जा सकता है, हालांकि वह एल. आर. एस. द्वारा वी. कल्याणस्वामी (डी) हो सकती है।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. द्वारा। & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

अधिनियम के बाद भी इसका अधिकार प्राप्त करें। यह भुरा और अन्य बनाम में इस न्यायालय के फैसले पर निर्भर था। काशी राम, जो एक ऐसा मामला था जिसमें पिता ने वसीयत के तहत संपत्ति को विरासत में दिया था और यह माना जाता है कि यह 14 (2) है।जो लागू होगा। अंत में, न्यायालय ने शरद सुब्रमण्यन बनाम पर भी भरोसा किया। सौमी मजूमदार और अन्य। अंत में यह भी ध्यान देना आवश्यक है

साधु सिंह बनाम में निर्णय के पैराग्राफ–11,12,13 और 14। गुरुद्वारा साहिब नरीके और अन्य 6 1.

" 11. ..... हमारे अनुसार जो बात सामने आती है वह यह है कि किसी महिला हिंदू द्वारा संपत्ति के कब्जे (अधिकार नहीं) का कोई भी अधिग्रहण

अधिनियम के लागू होने पर, आम तौर पर अधिनियम की धारा 14 (1) को आकर्षित नहीं किया जा सकता है। यह उसके द्वारा अर्जित अधिकार की प्रकृति पर निर्भर करेगा। यदि वह इसे अधिनियम के तहत उत्तराधिकारी के रूप में लेती है, तो वह इसे पूरी तरह से लेती है। यदि अधिनियम के बाद संपत्ति का कब्जा प्राप्त करते समय,

किसी योजना, उपहार या अन्य लेन–देन के तहत, उसके अधिकार पर कोई प्रतिबंध लगाया जाता है, तो प्रतिबंध धारा 14 (2) के अनुसार लागू होगा। एक्ट करें।

12. जब किसी हिंदू पुरुष की मृत्यु के बाद उसके पास संपत्ति होती है।

अनुसूची के अनुसार, इसे अधिनियम की धारा 8 के संदर्भ में लें। उत्तराधिकारी या उत्तराधिकारी इसे पूरी तरह से ले लेते हैं। उत्तराधिकारी या उत्तराधिकारियों के लिए किसी भी सीमित संपत्ति के उतरने का कोई सवाल ही नहीं है। इसलिए, जब कोई पुरुष हिंदू अपनी विधवा को अपनी एकमात्र उत्तराधिकारी के रूप में छोड़ने के बाद मर जाता है, तो उसे प्रथम श्रेणी के उत्तराधिकारी के रूप में संपत्ति मिलती है और उसकी संपत्ति या उसके अधिकार पर कोई सीमा नहीं होती है। ऐसी परिस्थितियों में, अधिनियम की धारा 14 (1) अधिनियम के बाद उत्तराधिकार पर लागू नहीं होगी, या इसके संचालन की कोई गुंजाइश नहीं है। या, दूसरे शब्दों में, सहायता के लिए फोन किए बिना भी

अधिनियम की धारा 14 (1) के अनुसार, उसे एक पूर्ण संपत्ति मिलती है।

13. संपत्ति के मालिक को आम तौर पर उस संपत्ति से निपटने का अधिकार होता है, जिसमें योजना बनाने या वसीयत करने का अधिकार भी शामिल होता है।

अधिनियम को बाहर रखा गया है और संपत्ति को पारित किया जाता है वसीयतनामा के उत्तराधिकारी। इसलिए, जब कोई पुरुष हिंदू वसीयत निष्पादित करता है

संपत्तियों को वसीयत करते हुए, वसीयतदार इसे वसीयत की शर्तों के अधीन लेते हैं जब तक कि निश्चित रूप से, उसमें कोई भी शर्त अमान्य नहीं पाई जाती है। इसलिए, अधिनियम में ऐसा कुछ भी नहीं है जो किसी के अधिकार को प्रभावित करता हो।

केवल जीवन प्रदान करके अपनी संपत्ति का निपटान करने के लिए पुरुष हिंदू

उसकी विधवा के लिए संपत्ति या सीमित संपत्ति। यह अधिनियम उनकी अलग–अलग संपत्तियों से निपटने के रास्ते में नहीं आता है जैसा कि वे उचित समझते हैं। इसलिए उनकी इच्छा को चुनौती नहीं दी जा सकती थी क्योंकि उनके द्वारा मारा जा रहा था

अधिनियम।

14. जब वह इस प्रकार प्रदान करके अपनी संपत्ति का वैध निपटान करता है

अपने उत्तराधिकारी को सीमित संपत्ति के लिए, पत्नी, पत्नी या विधवा को इसे लेना पड़ता है क्योंकि संपत्ति गिरती है। इस प्रकार प्रदान किए गए उसके अधिकार पर इस प्रतिबंध का वास्तव में अधिनियम द्वारा सम्मान किया जाता है। अधिनियम की धारा 14 (2) में यह प्रावधान है कि ऐसे मामले में विधवा अपने अधिकार की सीमा से बंधी है और वह अधिनियम की धारा 14 (1) को लागू करके किसी भी उच्च अधिकार का दावा नहीं कर सकती है। दूसरे शब्दों में, एक सीमित संपत्ति प्रदान करना।जो अन्यथा कानून में वैध है, इस अधिनियम द्वारा प्रबलित किया गया है

अधिनियम की धारा 14 (2) का प्रवर्तन और संचालन को छोड़कर

अधिनियम की धारा 14 (1) के तहत, भले ही उस प्रावधान को अधिनियम के तहत उत्तराधिकार के मामले में आकर्षित किया गया हो। अधिनियम के बाद प्रभावी होने वाले वसीयती स्वभाव के मामले में अधिनियम की धारा 14 (1) का आह्वान, धारा 30 और 14 (2) को निरर्थक या अनुचित बना देगा। यह भी अनावश्यक बना देगा, अभिव्यक्ति

" अधिनियम की धारा 14 (1) में आने वाली एक महिला हिंदू के स्वामित्व वाली संपत्ति। एक व्याख्या जो इस तरह के परिणाम की ओर ले जाती है, ऐसा नहीं हो सकता।

निश्चित रूप से स्वीकार किया जाएगा। निश्चित रूप से, अधिनियम में ऐसी व्याख्या को मजबूर करने वाला कुछ भी नहीं है। सेक्शन 14 और 30 दोनों खेले जाते हैं। धारा 14 (1) उस मामले में लागू होती है जहां महिला ने अधिनियम के अधिकार के रूप में संपत्ति प्राप्त करने से पहले संपत्ति प्राप्त की थी, भले ही अधिकार मिताक्षर कानून के तहत सीमित संपत्ति का हो या रखरखाव का अधिकार हो।

163. इस फैसले का पालन एलआरएस के माध्यम से जगन सिंह (मृत) में किया गया। वी. धनवंती और एक अन्य 62 दो विद्वानों की पीठ द्वारा

डीजेएस। यह एक ऐसा मामला था जिसमें वसीयतकर्ता ने एक पंजीकृत वसीयत को निष्पादित किया था।

उस प्रतिबंध के साथ प्लॉट एक्स का दृश्य जो लीगेटी के पास नहीं होगा

संपत्ति के हस्तांतरण का अधिकार। मामला एक मुक़दमे से उठा क्योंकि

संपत्ति एक्स के अलगाव को रोकने वाला जंक्शन. इस न्यायालय ने कथित रूप से

तीन विद्वान न्यायाधीशों की पीठ द्वारा दिए गए निर्णय को कम करें

(2012) 2 एस. सी. सी. 628 वी. कल्याणस्वामी (डी) एल. आर. एस. & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

धारा 14 (1) के तहत पूर्ण तक बढ़ाया गया। हम आगे ध्यान देते हैं कि यह पाया गया कि यह विवादित नहीं था कि विधवा रखरखाव के माध्यम से संपत्ति का आनंद ले रही थी। इसलिए अदालत ने जी. रामाराव के फैसले को अलग कर दिया।164. गुम्फा (श्रीमती) और अन्य बनाम। जय बायो 7, दो विद्वान न्यायाधीशों की एक पीठ एक ऐसे मामले पर विचार कर रही थी जिसमें एक वसीयत को निष्पादित किया गया था।

वर्ष 1941 में एक हिंदू ने अपनी प्रत्येक पत्नी को उनके जीवन के लिए आधा हिस्सा दिया और एकमात्र बेटी को अंतिम लाभार्थी होना था। परिवार के लिए पूरी तरह से अजनबी के पक्ष में पत्नियों में से एक द्वारा एक और वसीयत निष्पादित की गई थी। , उसका घरेलू नौकर। अलगाव को चुनौती दी गई और सवाल उठा कि क्या अधिकार धारा के तहत आता है

63 (1976) 1 एस. सी. सी. 630

64 (2006) 8 एस. सी. सी 91

65 (2016) 2 एससीसी 56

66 एआईआर 1962 एससी 149367 (1994) 2 एससीसी 511 [2020] 9 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

14 (1) या हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 14 (2)। न्यायालय ने एक विस्तृत चर्चा की और इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि यह एक ऐसा मामला था जो हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 14 (2) के तहत आता है। वास्तव में, न्यायालय का विचार था कि विधानमंडल का इरादा हिंदू महिला को पुरुष के विरुद्ध उच्च अधिकार प्रदान करने का नहीं था। इस निर्णय पर तीन विद्वान न्यायाधीशों की पीठ द्वारा बाद के निर्णय में विचार किया गया, अर्थात सी. मसिलामणि मुदलियार और अन्य बनाम। श्री स्वामीनाथस्वामी स्वामीनाथस्वामी थिरुकोइल और अन्य 68 की मूर्ति। इस मामले में सोमसुंदरम पिल्लई की विधवा के पक्ष में एक वसीयत भी शामिल थी। वसीयत में दिए गए बयानों से संकेत मिलता है कि वसीयतकर्ता अपने मन में अपनी पत्नी को भरण-पोषण प्रदान करने के अपने कर्तव्य का मनोरंजन करता है। न्यायालय ने पूर्ववर्ती मामले कानून की समीक्षा की। इसने पाया कि गुम्फा (श्रीमती) (ऊपर) में लिया गया दृष्टिकोण एक प्रतिबंधात्मक व्याख्या थी जो कानून में सही नहीं लगती थी।

165. गुलवंत कौर और एक अन्य वी। मोहिंदर सिंह और अन्य ", दो विद्वान न्यायाधीशों की एक पीठ ने विस्तृत पत्राचार का उल्लेख किया

पति और उसकी पत्नी के बीच और पाया कि मामला हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 14 (1) को आकर्षित करता है। पति द्वारा अपनी पत्नी को लिखे पत्र के अवलोकन से पता चला कि जमीन उसके रखरखाव के बदले में दी गई थी। वास्तव में, न्यायालय ने दिन-प्रतिदिन के खर्च और रखरखाव के बीच के अंतर को समझने में असमर्थता व्यक्त की। न्यायालय ने एराम्मा बनाम को अलग किया। वीरुपाना "। इसके अलावा, न्यायालय ने इस तर्क पर विचार किया कि बाई वाजिया (मृत) मामले में इस न्यायालय का निर्णय एल. आर. एस.

द्वारा लिया गया था। वी. ठाकुरभाई चेलभाई और अन्य 7 1 को यह निर्धारित करने के रूप में समझा जाना चाहिए कि हिंदू धर्म की धारा 14 (1) के तहत क्या बढ़ाया गया था।

उत्तराधिकार अधिनियम हिंदू कानून के तहत एक महिला संपत्ति थी। हम गुलवंत कौर (ऊपर) के पैराग्राफ-8 ए को देखते हैं, जो इस प्रकार हैः

" 8 ए. श्री तारकुंडे ने विशेष रूप से बाई वाजिया बनाम में निम्नलिखित अंश पर भरोसा किया। ठाकुरभाई मामला (1979) 3 एस. सी. सी. 300:आकाशवाणी 1979 एससी 993:

" उप-धारा (1) के सरल अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि संबंधित हिंदू महिला का संपत्ति में सीमित स्वामित्व होना चाहिए।

जो उस उप-धारा के संचालन से सीमित स्वामित्व का विस्तार होगा। यदि इसका उद्देश्य किसी भी प्रकार के अधिकार को बढ़ाना था

68 ए. आई. आर 1996 एस. सी. 1697/(1996) 8 एस. सी. सी. 525 69 'ए. आई. आर. 1987 एस. सी. 2251

7 ओ ए. आई. आर. 1966 एस. सी. 1879

71 एयर 1979 एससी 993 वी. कल्याणस्वामी (डी) एलआरएस द्वारा। & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

जिसे किसी भी अर्थ में स्वामित्व के रूप में वर्णित नहीं किया जा सकता है, अभिव्यक्ति

' और एक सीमित मालिक के रूप में नहीं 'का उपयोग बिल्कुल नहीं किया गया होगा और

अनावश्यक हो जाता है, जो अच्छी तरह से मान्यता प्राप्त सिद्धांत के खिलाफ है

विधियों की व्याख्या जिनका विधानमंडल उपयोग नहीं करता हैअर्थहीन भाषा "।

हम अदालत को यह कहते हुए नहीं समझते कि क्या

धारा 14 की उप-धारा (1) द्वारा एक पूर्ण संपदा में विस्तारित किया गया था

यह हिंदू महिला की संपत्ति थी जो हिंदू कानून के लिए जानी जाती थी। जब अदालत "सीमित संपत्ति" शब्द का उपयोग करती है, शब्दों का उपयोग करने के लिए किया जाता है

संपत्ति में एक अधिकार जिस पर महिला हिंदू का कब्जा है

वैध रूप से पता लगाया जा सकता है, लेकिन जिसका पूर्ण अधिकार नहीं है

स्वामित्व। यदि किसी महिला हिंदू को संपत्ति के कब्जे में रखा जाता है

रखरखाव के अधिकार के अनुसार या मान्यता में, यह नहीं कर सकता है

इस बात से इनकार किया जाए कि उसने एक सीमित अधिकार या ब्याज प्राप्त किया है संपत्ति और एक बार उस स्थिति को स्वीकार करने के बाद, यह इस प्रकार है कि

धारा 14 (1) के तहत अधिकार को पूर्ण स्वामित्व तक बढ़ाया जाता है

एक्ट करें। यह हमें स्पष्ट रूप से भाषा से अनुसरण करने के लिए लगता है

अधिनियम की धारा 14 (1)। "

(जोर दिया गया)

166. अपीलार्थी रिपोर्ट किए गए निर्णय से समर्थन प्राप्त नहीं कर सकते हैं।

गद्दाम रामकृष्णारेड्डी और अन्य बनाम। गद्दाम रामिरेड्डी और एक और 1 2। इसमें, एक जीवन संपदा बनाने के लिए 21.12.1952 पर एक उपहार विलेख निष्पादित किया गया था और जो निस्संदेह हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम से पहले था। यह अभिनिर्धारित किया गया था कि अधिकार धारा 14 (1) के तहत एक पूर्ण संपत्ति में विकसित नहीं हुआ था। यह ध्यान रखना आवश्यक है कि निर्णय अनिवार्य रूप से उपहार विलेख की शर्तों पर विचार करने पर आधारित था और जो अधिक महत्वपूर्ण है वह निम्नलिखित निष्कर्ष हैः

जिनके तहत समवर्ती रूप से यह अभिनिर्धारित किया गया है कि जीवन संपदा का निर्माण किया गया है पुल्लारेड्डी द्वारा शेषम्मा के पक्ष में उसके बदले में नहीं था

रखरखाव के रूप में वह पहले से ही संपत्तियों का प्रबंधन कर रही थी

सवाल और बिना किसी अनिश्चित शब्दों में यह दोनी की इच्छा थी कि

उक्त संपत्तियों को अंततः उनके बेटे रामिरेड्डी के पास जाना चाहिए।उत्तरदाता 1 यहाँ। एक बार जब यह स्थापित हो जाता है, तो अन्य के अलावा

आसपास की परिस्थितियों में, तत्काल परिणाम यह है कि संपत्तियों में शेषम्मा के अधिकार इसके द्वारा शासित हुए

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 14 की उप–धारा (2) और उसका अधिकार एक पूर्ण संपत्ति में नहीं खिलता है

उप–धारा (1) के तहत विचार किया गया।

167. हम पहले ही वसीयत की शर्तों का पालन कर चुके हैं। वसीयत में यह पढ़ा गया है कि 'ए अनुसूची' में उल्लिखित गुण हैं –

अपनी पत्नी को उसके जीवन के लिए विरासत में दिया, इसमें कोई संदेह नहीं है। यह एक ऐसा मामला है जहां वसीयत में विशेष रूप से कहा गया है कि उसे अन्य बातों के साथ–साथ अपने खर्चों के लिए संपत्तियों से आय लेनी है। उसे आय का उपयोग भी करना है

औपचारिक अवसरों पर अपनी बहनों को उपहार देना। इसलिए, यह एक ऐसा मामला है जिसमें वही दस्तावेज़, जिसे अपीलार्थी संग्रहीत करते हैं, हमारे लिए यह पता लगाने के लिए कि संपत्ति देने का उद्देश्य क्या है, किसी भी सबूत की खोज करना अनावश्यक बनाता है। परीक्षक ने अपना मकसद बना लिया है साफ है। अपीलार्थियों का तर्क कि वही दस्तावेज़ इस तथ्य को संदर्भित करता है कि उसे उसके खिलाफ अन्य संपत्तियाँ दी गई हैं

रखरखाव, हमारे विचार में, केंद्रीय प्रश्न से विचलित नहीं करता है कि वसीयतकर्ता को जीवन संपदा बनाने के लिए क्या प्रेरित किया। वसीयत का निष्पादन 10.05.1955 पर किया गया था जो साधु सिंह (उपरोक्त) के मामले के विपरीत हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम से पहले है। जाहिर है, ऐसी वसीयत को हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 14 (2) के प्रावधानों का अनुमान लगाते हुए निष्पादित नहीं किया जा सकता था। आर. कृष्णम्मल निश्चित रूप से इसके हकदार थे

रखरखाव और विचाराधीन वसीयत स्पष्ट रूप से उद्देश्यों को संदर्भित करते हैं।

इसमें शामिल संपत्तियों को आर. कृष्णम्मल को बिना किसी अधिकार के विरासत में नहीं दिया गया था। वसीयत का उद्देश्य इस मामले के तथ्यों में नए अधिकार पैदा करके संपत्ति को विरासत में देना नहीं था। यहां तक कि अपीलार्थियों का मामला यह है कि वसीयत में बताए अनुसार उसे अन्य संपत्तियां देकर उसे रखरखाव के लिए प्रदान किया गया था। यदि अपीलार्थियों के तर्क को स्वीकार किया जाना है, तो हमें इस बात पर विचार करना होगा कि क्या रखरखाव की मात्रा क्या होगी जिस पर वसीयतकर्ता विचार करेगा।

उचित है। अन्य संपत्ति का विस्तार नहीं दिखाया गया है। हम सोचेंगे कि इस तरह की कवायद अनावश्यक है जब वसीयत की शर्तों से संकेत मिलता है कि वसीयतकर्ता का इरादा था कि उसकी विधवा को उन संपत्तियों की आय से उचित रूप से खुद को बनाए रखने में सक्षम होना चाहिए जो वह उसे वसीयत कर रहा था, और उस उद्देश्य के लिए, निस्संदेह एक सीमित संपत्ति के रूप में वर्णित किया जा सकता है।

168. इस संबंध में, हम यह भी देख सकते हैं कि C.Masilamani मुदलियार v में निम्नलिखित टिप्पणियाँ हैं। श्री की मूर्ति

स्वामीनाथस्वामी 73:

73 ए. आई. आर. 1996 एस. सी. 1697 वी. कल्याणस्वामी (डी) एल. आर. एस. & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. द्वारा। & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

" 30. श्री रंगम ने तब तर्क दिया कि जब वसीयतकर्ता ने केवल दो विधवाओं को भरण–पोषण प्रदान करने के बारे में सोचा है, तो संपत्ति 10 एकड़ से अधिक है, रखरखाव केवल विधवा की जरूरतों के अनुपात में होना चाहिए और उस हद तक विधवा को पूर्ण अधिकार प्राप्त होता है लेकिन पूरी संपत्ति नहीं। हम उस विवाद में कोई ताकत नहीं पाते हैं। यह देखा जाना चाहिए कि पूर्व–विद्यमान कानून के तहत, वह विधवा संपत्ति के रूप में जानी जाने वाली पूरी संपत्ति के कब्जे में रहने की हकदार है और अधिनियम लागू होने के बाद धारा 14 (1) के संचालन द्वारा विधवा की संपत्ति को एक पूर्ण संपत्ति में विकसित किया गया था। यहां तक कि पूर्व वसीयत में भी। ए–1, ऐसी कोई प्रतिबंधात्मक वाचा उचित रूप से नहीं बनाई गई थी।रखरखाव के लिए उसकी आवश्यकताओं के अनुरूप आय का अनुपात। दूसरी ओर, स्पष्ट वाचा यह है कि उन्होंने रखरखाव के लिए और रखरखाव संपत्ति के बदले में उसके अधिकार को मान्यता दी।

उसे उसके जीवनकाल के दौरान उसके रखरखाव के लिए दिया गया था। यह उस समय के मौजूदा कानून के अनुसार पूर्व–विद्यमान अधिकार है। अधिनियम के लागू होने के बाद, सीमित संपत्ति एक पूर्ण संपत्ति में बदल गई है। इसलिए, रखरखाव की आनुपातिकता का सिद्धांत यह लागू नहीं है और इसे बढ़ाया नहीं जा सकता है।

169. ऐसी परिस्थितियों में, हम सोचेंगे कि उच्च न्यायालय द्वारा लिया गया दृष्टिकोण कि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 14 (1) लागू होती है, को गलत नहीं माना जा सकता है।

' हिंदू की धारा 14 (1) में रखा गया सफलता अधिनियम, पद के रूप में आशीर्वाद

ओ. एस. नं. में प्लेट अनुसूची संपत्ति का। 89 /

83 और ओ. एस. नहीं। 71/58 और इसका प्रभाव पड़ता है।

170. 1983 के ओ. एस. सं. 89 में, 30.04.1977 पर कृष्णम्मल की मृत्यु का संदर्भ है और उसके बाद वादी और

प्रतिवादी 1 से 3 कब्जे के हकदार हो गए हैं। हम आगे पैराग्राफ 5 पर ध्यान देते हैं जिसमें यह कहा गया है कि वादी और प्रतिवादी 1 से 3 (लक्ष्मीया नायडू की शाखा) के पास संपत्तियों का कब्जा था और संयुक्त रूप से उनका आनंद लिया गया था। हालाँकि, हम आगे देखते हैं कि पैराग्राफ 21 में, यह आरोप लगाया गया है कि प्रतिवादी 4 से 11 (लक्ष्मीया नायडू की शाखा) बिना किसी शीर्षक के कब्जे में हैं, और यह कि उनका कब्जा गलत है।

171. यदि हम समय के बिंदु पर पीछे की ओर मुड़ते हैं, तो हम देखते हैं कि

1958 के ओ. एस. सं. 71 में अभिवचनों के बाद, [2020] 9 एस. सी. आर. द्वारा दायर मुकदमा।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

आर. कृष्णम्मल, विधवा। वह कहेगी कि अनुसूची–। में वर्णित संपत्तियां विभाजन में उसके पति के हिस्से में आ गईं और उसका अलग अधिकार है। उनके द्वारा स्व–अर्जित की गई संपत्तियाँ अनुसूची–आई. ए. में थीं। इसके बाद, उन्होंने धारा 145 के तहत कार्यवाही का उल्लेख किया। पैराग्राफ–10 में, R.Krishnammal ने कहा कि अनुसूची–। और आई. ए. में प्रतिवादियों का कब्जा गैरकानूनी है और वह किसी भी आधार पर सफल होने और अनुसूची–। और आई. ए. संपत्तियों या अनुसूची–।, आई. ए. और ।। में संपत्तियों के हिस्से की वसूली करने की हकदार है। कार्यवाही के दौरान नियुक्त एक रिसीवर का संदर्भ है।

धारा 145 के तहत। पैराग्राफ 17 में, यह अन्य बातों के साथ–साथ कहा गया है कि कार्रवाई का कारण जून, 1955 को या उसके आसपास उत्पन्न हुआ, जब प्रतिवादी 1 से 4 तक थे।

जब राजस्व मंडल अधिकारी, कोयंबटूर ने आर. वी. लक्ष्मीया नायडू और उनके बेटों के कब्जे को बरकरार रखा, तो अवैध रूप से संपत्तियों पर अतिक्रमण किया। 1958 के ओ. एस. सं. 71 में दायर आदेश XXII। नियम 3 के तहत आवेदन में अन्य बातों के साथ–साथ इस प्रकार कहा गया हैः

" जबकि 01.06.1955 पर रंगस्वामी नायडू की मृत्यु पर,

निष्पादक संपत्तियों पर कब्जा नहीं कर सका।

172. गुम्मलपुरा में टागिना मटाडा कोट्टुरूस्वामी बनाम। सेत्रा

वीरव्व और अन्य 74, तीन विद्वान न्यायाधीशों की एक पीठ ने 'कब्ज़ा' शब्द की व्याख्या करते हुए निम्नानुसार निर्धारित कियाः

" 11. ..... बेशक, धारा 14 में निर्दिष्ट अधिकार का वास्तविक भौतिक अधिकार या व्यक्तिगत व्यवसाय होना आवश्यक नहीं है।

हिंदू महिला द्वारा संपत्ति लेकिन कानूनी रूप से कब्जा हो सकता है। महिला मालिक से किसी लाइसेंसधारी, पट्टेदार या बंधकधारी का कब्जा या किसी अभिभावक या न्यासी या किसी एजेंट का कब्जा। महिला मालिक इस उद्देश्य के लिए उसका अधिकार होगी

धारा 14. "कब्ज़ा" शब्द का उपयोग धारा 14 में व्यापक अर्थों में किया गया है और संदर्भ में कब्ज़े का अर्थ है किसी के हाथों या शक्ति में होने या होने की स्थिति। इसमें किराए और लाभ की प्राप्ति द्वारा कब्जा शामिल है। विद्वान न्यायाधीशों ने यह विचार व्यक्त किया कि भले ही कोई अतिक्रमणकारी किसी की भूमि के कब्जे में हो।

महिला मालिक, इसे संभवतः माना जा सकता है

महिला मालिक का अधिकार, बशर्ते कि अतिक्रमणकर्ता के पास न हो अपने खिताब को परिपूर्ण किया। हम नहीं समझते कि वर्तमान में इसकी आवश्यकता है।

मामला उस हद तक जाने के लिए जहाँ तक विद्वान न्यायाधीश गए। यह कहना पर्याप्त है कि धारा 14 में "कब्ज़ा" का उपयोग व्यापक रूप से किया गया है।

74 ए. आई. आर. 1959 एस. सी. 577 वी. कल्याणस्वामी (डी) एल. आर. एस. & एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. द्वारा। & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

अर्थ में और संदर्भ में स्वामित्व या होने की स्थिति का अर्थ है किसी का हाथ या शक्ति। गोस्ता बिहारी बनाम के मामले में। हरिदास

सामंत [ए. आई. आर. 1957 कैल 557,559] पी. एन. मुखर्जी, जे. ने व्यक्त किया

"किसी भी संपत्ति के स्वामित्व वाले" शब्दों के अर्थ के बारे में उनकी राय

एक महिला हिंदू द्वारा "निम्नलिखित शब्दों में:

" "एक महिला के कब्जे वाली संपत्ति" में शुरुआती शब्द

स्पष्ट रूप से हिंदू का अर्थ है कि इसके दायरे में आना धारा संपत्ति संबंधित महिला के कब्जे में होनी चाहिए

अधिनियम के लागू होने पर महिला के कब्जे पर विचार करें। वह अधिकार या तो वास्तविक या रचनात्मक हो सकता है या

विवादित संपत्ति में सीमित संपत्ति होने का दावा किया जाता हैइस विशेष धारा के तहत पूर्ण संपत्ति में परिवर्तित किया गया था

कम से कम इस तरह के कब्जे में, शब्द को लेना–कब्जे में व्यापक अर्थ, जब अधिनियम लागू हुआ, तो धारा

यह लागू नहीं होगा "।

हमारी राय में, ऊपर व्यक्त किया गया दृष्टिकोण सही है।

इस बारे में कि "किसी महिला हिंदू के पास कोई संपत्ति" शब्द कैसे हैं

व्याख्या की जानी चाहिए। ..... "

(जोर दिया गया)

173. एराम्मा (ऊपर) में, इस न्यायालय ने यह स्पष्ट कर दिया है कि धारा

14 (1) हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम केवल अतिक्रमण करने वाले को उपाधि प्रदान नहीं करता है। यह किसी व्यक्ति को बिना किसी स्वामित्व के संपत्ति रखने का कोई अधिकार प्रदान नहीं करता है। हमने ये टिप्पणियां निम्नलिखित परिस्थितियों के संदर्भ में की हैं:

01.06.1955 पर उनके पति की मृत्यु के बाद, दो हैं

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम लागू होने पर आर. कृष्णम्मल के पक्ष में संपत्ति पर दावा करने का अधिकार प्रदान करने वाली धाराएँ। वसीयत के तहत, उन्हें एक जीवन संपदा प्रदान की गई थी। यदि वसीयत को अस्तित्वहीन या अमान्य माना जाता है, तो फिर से दो स्थितियाँ हो सकती हैं। उनका मामला या तो हिंदू महिला संपत्ति का अधिकार अधिनियम, 1937 की धारा 3 (1) या 3 (2) के तहत आता है, जो इस बात पर निर्भर करता है कि संपत्ति वी. रंगास्वामी नायडू की अलग संपत्ति थी या संयुक्त हिंदू पारिवारिक संपत्ति में उनका हित था। उसे बनाए रखने का भी अधिकार था। इसलिए, इस मामले के तथ्यों में इस निष्कर्ष को ध्यान में रखते हुए कि वसीयत के तहत वसीयत की गई संपत्तियां और कौन सी शिकायतें हैं

अनुसूचित संपत्तियाँ रंगास्वामी की अलग संपत्तियाँ नहीं हैं। नायडू, उन्हें [2020] 9 एस. सी. आर. की धारा 3 (2) के तहत संपत्तियों का अधिकार होगा।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

उन्होंने 1958 के ओ. एस. सं. 71 में की गई अभिवचन की प्रकृति को देखा। वह विशेष रूप से यह बताती है कि वह संपत्ति के कब्जे की वसूली करने की हकदार है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि वह खुद को संयुक्त अधिकार के रूप में मानने की हकदार है। हालाँकि हम कोट्टुरूस्वामी में निर्णय को देख सकते हैं। वास्तव में, मंगल सिंह और अन्य बनाम मामले में इस न्यायालय की तीन अन्य न्यायाधीशों की पीठ द्वारा मामले (उपरोक्त) पर विचार किया गया। श्रीमती. रैटनो (मृत) अपने कानूनी प्रतिनिधियों द्वारा और एक अन्य ने ए. आई. आर. 1967 एस. सी. में रिपोर्ट किया

1786. इसमें, इस न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:

" अपीलार्थियों की ओर से यह आग्रह किया गया था कि अधिनियम की धारा 14 (1) के प्रावधानों को आकर्षित करने के लिए यह दिखाया जाना चाहिए कि –

महिला हिंदू या तो वास्तविक भौतिक अधिकार में थी, या

विवादित संपत्ति का रचनात्मक कब्जा। दूसरी ओर, यह आग्रह किया गया कि भले ही एक महिला हिंदू, वास्तव में, वास्तविक कब्जे से बाहर हो, संपत्ति उसके पास होनी चाहिए, अगर उस संपत्ति में उसका स्वामित्व अधिकार अभी भी मौजूद है और प्रयोग में है।

उन स्वामित्व अधिकारों में से, वह वास्तविक प्राप्त करने में सक्षम है

इसका अधिकार। यह हमें प्रतीत होता है कि, में उपयोग की जाने वाली भाषा पर

अधिनियम की धारा 14 (1), बाद की व्याख्या को स्वीकार किया जाना चाहिए।

अधिनियम की धारा 14 (1) को ध्यान में रखते हुए और यह कि यह एक महिला हिंदू के स्वामित्व वाली संपत्ति को शामिल करता है, चाहे वह इस अधिनियम से पहले या बाद में अर्जित की गई हो।

अधिनियम के प्रारंभ में न्यायालय ने व्याख्या करने के लिए आगे बढ़ेजिन परिस्थितियों में कोट्टुरूस्वामी मामले (ऊपर) में निर्णय लिया गया था

प्रस्तुत किया गया। और उसके बाद न्यायालय ने निम्नलिखित रूप में निर्धारित कियाः

" ..... न्यायालय कोई सामान्य सिद्धांत निर्धारित नहीं कर रहा था कि

धारा 14 (1) उन मामलों की ओर बिल्कुल भी आकर्षित नहीं होगी जहां महिला हिंदू के पास संपत्ति नहीं थी।

तारीख में महिला हिंदू के पास होना चाहिए अधिनियम को लागू करना। यह हमें प्रतीत होता है कि वह प्रासंगिक तिथि जिस पर महिला हिंदू के पास संपत्ति होनी चाहिए।

विवाद, वह तिथि होनी चाहिए जिस दिन धारा 14 (1) के प्रावधानों को लागू करने का प्रश्न उत्पन्न होता है। यदि, उस तारीख को, जब इस धारा के प्रावधानों को लागू करने की मांग की जाती है, तो संपत्ति का कब्जा हो जाता है।

एक महिला हिंदू द्वारा, यह माना जाएगा कि वह इसकी पूर्ण मालिक है और वी. कल्याणस्वामी (डी) एलआरएस द्वारा।

& एएनआर। वी. एल. भक्तवत्सलम (डी) एल. आर. एस. द्वारा। & ओआरएस। [के. एम. जोसेफ, जे.]

केवल एक सीमित मालिक नहीं। इस तरह का सवाल उसके अपने जीवनकाल में उठ सकता है, या बाद में उसके उत्तराधिकार पर उठ सकता है।

उसकी मृत्यु पर संपत्ति खुलती है। हमारे सामने मामला दूसरे में आता है श्रेणी, क्योंकि श्रीमती। अधिनियम के प्रारंभ से पहले हरनाम कौर संपत्ति की एक सीमित मालिक थीं और सवाल यह है कि क्या श्रीमती. रात्नो अधिनियम के प्रारंभ के बाद वर्ष 1958 में हुई उनकी मृत्यु पर इस विवादित संपत्ति में अपने अधिकारों का उत्तराधिकारी बनने की हकदार थी।

वास्तव में, हम देखते हैं कि इस निर्णय को दो न्यायाधीशों की पीठ द्वारा संदर्भित नहीं किया गया था जिसने साधु सिंह (ऊपर) में निर्णय दिया था।

हालाँकि, हम पाते हैं कि इसे ए. आई. आर. 1996 एस. सी. 172 (पैरा 14 देखें) और श्याम नारायण सिंह और अन्य मामलों में इस न्यायालय के एक बहुत ही हाल के फैसले में जोड़ा गया है। बनाम रमाकांत सिंह और अन्य।

2018 (1) आर. सी. आर. (सिविल) 981 में दो विद्वान न्यायाधीशों की पीठ द्वारा फिर से प्रस्तुत किया गया। इसमें, इस न्यायालय ने अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित निर्णय दियाः

" दूसरे शब्दों में, उसके द्वारा जो कुछ भी दिखाया जाना है वह यह है कि उसने संपत्ति का अधिग्रहण कर लिंया था और उस समय सपत्ति पर उसका 'कब्जा' था जब उसके अधिकार पर सवाल उठाया गया था।

मंगल सिंह (उपरोक्त) के कथन को ध्यान में रखते हुए, हम अपने दृष्टिकोण से आश्वस्त महसूस करते हैं कि धारा 14 (1) लागू होती है।

174. संयोग से, हम देख सकते हैं कि क्या डी. डब्ल्यू. 1, गवाह की ओर से

अपीलार्थियों के बारे में-स्वयं वसीयतकर्ता कहते हैंः

" .....जब Cr.PC 145 कार्यवाही की गई तो प्राप्तकर्ता द्वारा संपत्तियों को लच्चुमैया और उनके बेटों को सौंप दिया गया। उसके बाद से आज तक ये संपत्तियाँ उनके कब्जे में हैं। हम कभी भी संपत्तियों के कब्जे में नहीं रहे।

नागरिक आवेदन संख्या। 1045-1050 2013 का

175. अपीलार्थी ए. अलगिरिस्वामी द्वारा निष्पादित बिक्री विलेखों के आधार पर दावा करते हैं, जो दोनों मुकदमों में प्रथम प्रतिवादी हैं। मामला, जिसे स्थापित करने की मांग की गई है, वह यह है कि वादी अनुसूची संपत्तियों के उत्तराधिकारियों के बीच एक विभाजन था और उनके द्वारा खरीदी गई संपत्तियां प्रथम प्रतिवादी को आवंटित संपत्तियों में से थीं। उनका पूरा मामला ए. अलगिरिस्वामी के संपत्ति पर अधिकार होने पर आधारित है।

हम पहले ही इस निष्कर्ष पर पहुँच चुके हैं कि ए. अलगिरिस्वामी के पास कोई अधिकार नहीं है, जो कारण हमने दिए हैं। तर्क 1958 के ओ. एस. सं. 71 में समझौता डिक्री पर आधारित हैं, जिसमें लक्ष्मीया [2020] 9 एस. सी. आर. को छोड़ दिया गया है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

विभाजन या वसीयत पर सवाल उठाने की शाखा को बरकरार नहीं रखा जा सकता है। जहाँ तक हमारा मानना है कि आर. कृष्णम्मल पूर्ण मालिक बन गए थे।

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 14 (1) के तहत, और 1958 की ओ. एस. संख्या 71 में समझौते के फरमान को ध्यान में रखते हुए, जिसके द्वारा उन्होंने उत्तरदाताओं के पक्ष में अपने सभी अधिकारों को छोड़ दिया था, ए. अलगिरिस्वामी के पास कोई अधिकार निहित नहीं था जिसे वह अपीलार्थियों को पारित कर सकते थे। 1985 के ओ. एस. सं. 649 में वादियों ने अपने अधिकार की घोषणा की थी और जिसके वे हकदार थे। यह तर्क कि सालेदीदों को कोई चुनौती नहीं थी, अपीलार्थियों के मामले को आगे नहीं बढ़ा सकता है। हमने देखा है कि DW1, A क्या है। उत्तराधिकारियों में से एक अलगिरिस्वामी ने पदच्युत कर दिया है

स्वामित्व के बारे में। वास्तव में, जैसा कि पहले ही उल्लेख किया गया है, अपीलकर्ताओं ने विचारण न्यायालय के आदेश को चुनौती नहीं दी और वे स्पष्ट रूप से अपीलकर्ताओं के साथ यात्रा कर रहे थे जो वसीयत के तहत उत्तराधिकारी थे। इसलिए हम उनके मामले में कोई योग्यता नहीं देखते हैं।

176. अन्य अपीलों के संबंध में, हम अपने निष्कर्षों और विचार के लिए आने वाले मुद्दों को देखते हुए कोई योग्यता नहीं पाते हैं। वहाँ है।

किसी भी अपील में कोई योग्यता नहीं है। नतीजतन, सभी अपीलें खारिज कर दी जाएंगी। लागत के बारे में कोई आदेश नहीं होगा।

याचिकाएं खारिज कर दी गईं।

दिव्या पांडे